
इकाई-2 ग्रामीण भारत की सामाजिक संरचना (Social Structure of Rural India)

- 2.1 प्रस्तावना (Introduction)
- 2.2 उद्देश्य (Objectives)
- 2.3 सामाजिक संरचना का अर्थ व परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Social Structure)
- 2.4 सामाजिक संरचना की विशेषताएँ (Features of Social Structure)
- 2.5 बोध प्रश्न-01
- 2.6 ग्रामीण सामाजिक संरचना: एक परिचय (Rural Social Structure: An Introduction)
- 2.7 ग्रामीण सामाजिक संरचना की प्रमुख इकाईयाँ (Major Units of Rural Social Structure)
- 2.8 ग्रामीण सामाजिक संरचना की विशेषताएँ (Features of Rural Social Structure)
- 2.9 भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना सम्बन्धी अध्ययन (Study Related to Indian Rural Social Structure)
- 2.10 ग्रामीण सामाजिक संरचना में वर्तमान परिवर्तन (Current changes in Rural Social Structure)
- 2.11 बोध प्रश्न-02
- 2.12 सारांश (Summary)
- 2.13 शब्दावली (Glossary)
- 2.14 अभ्यास प्रश्न (Practise Questions)
- 2.15 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practise Questions)
- 2.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)
- 2.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
- 2.18 सहायक उपयोगी ग्रन्थ (Helpful Text)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामाजिक संरचना समाजशास्त्र की अनेक सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवधारणाओं में से एक है। जिस भी समाजशास्त्री ने सामाजिक संरचना के बारे में लिखा, उसने ख्याति अर्जित की है। इमार्शल दुर्खीम, हरबर्ट स्पेन्सर, रैडक्लिफ ब्राउन, एस0 एफ0 नैडेल और रॉबर्ट मर्टन से लेकर टॉलकट पारसन्स तक ऐसे ही नाम हैं। यह विदित है कि प्रत्येक समाज की रचना अनेक अंगों से मिलकर होती है। ये सभी अंग मिलकर जिस ढांचे का व्यवस्थित तरीके से निर्माण करते हैं, समाज का वही ढांचा सामाजिक संरचना कहलाता है। दूसरे शब्दों में, किसी भी समाज की बाहरी रूपरेखा को उस समाज की सामाजिक संरचना कहा जाता है।

यहां पर यह बात भी उल्लेखनीय है कि एक समाज की संरचना दूसरे समाज की संरचना से कुछ या अनेक सन्दर्भों में भिन्नता प्रदर्शित करती है। जैसे कि परम्परागत समाजों की सामाजिक संरचना का आधुनिक समाजों की सामाजिक संरचना से भिन्न होना स्वाभाविक ही है। उदाहरण स्वरूप यदि परम्परागत समाजों में परम्परागत सामाजिक मूल्यों का वर्चस्व देखने को मिलता है तो आधुनिक समाजों में तर्कशीलता का प्रभाव अधिक पाया जाता है। इसी प्रकार ग्रामीण सामाजिक संरचना नगरीय सामाजिक संरचना से पर्याप्त आधारों पर भिन्न दिखाई देती है। ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन की गति भी धीमी होती है।

2.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान सकेंगे कि -

- ✓ -सामाजिक संरचना किसे कहते हैं?
- ✓ -ग्रामीण सामाजिक संरचना से क्या आशय है?
- ✓ -ग्रामीण सामाजिक संरचना की प्रमुख इकाईयां कौन सी हैं?
- ✓ -भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना सम्बन्धी अध्ययनों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- ✓ -ग्रामीण सामाजिक संरचना में आ रहे वर्तमान परिवर्तन कौन से हैं?

2.3 सामाजिक संरचना का अर्थ व परिभाषायें (Meaning and Definitions of Social Structure)

समाजशास्त्र की 2 महत्वपूर्ण अवधारणायें हैं-सामाजिक संरचना और सामाजिक व्यवस्था। सामाजिक संरचना किसी समाज के ढांचे की परिचायक है जबकि सामाजिक व्यवस्था उस समाज के प्रकार्यात्मक पक्ष की। जब हम सामाजिक संरचना की बात करते हैं तो उसका अर्थ समाज के बाह्य स्वरूप से होता है और जब हम सामाजिक व्यवस्था पर विचार करते हैं तो उसका अर्थ समाज की आन्तरिक प्रक्रियाओं से होता है। सामाजिक संरचना की प्रकृति रचनात्मक होने के कारण यह अधिक स्थिर होती है जबकि सामाजिक व्यवस्था प्रकार्यात्मक पक्ष से सम्बन्धित होने के कारण अधिक क्रियाशील होती है।

समाजशास्त्र में सामाजिक संरचना शब्द का प्रयोग सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक घटनाओं अथवा सामाजिक प्रक्रियाओं के निश्चित क्रम के लिये किया जाता है। सामाजिक संरचना शब्द का प्रयोग अन्य मिलते-जुलते शब्दों, जैसे कि सामाजिक संगठन, सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक प्रतिमान या सम्पूर्ण समाज के पर्यायवाची शब्द के रूप में किया जाता है इसी कारण इसका कोई एक निश्चित अर्थ दे पाना अत्यन्त कठिन हो जाता है। फिर भी अधिकांश समाजशास्त्री 'सामाजिक संरचना' शब्दावली का प्रयोग व्यवस्थित या प्रतिमानित ढंगों के लिये करते हैं, जिनसे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह परस्पर एक दूसरे से स्वयं को सम्बन्धित करते हैं। पारसन्स के अनुसार, 'सामाजिक संरचना परस्पर सम्बन्धित संस्थाओं, अभिकरणों और सामाजिक प्रतिमानों और साथ ही समूह में प्रत्येक सदस्य द्वारा ग्रहण किये गये पदों तथा कार्यों की विशिष्ट क्रमबद्धता

को कहते हैं।' कार्ल मैनहीम के अनुसार, 'सामाजिक संरचना अन्तःक्रियात्मक सामाजिक शक्तियों का जाल है जिससे विभिन्न प्रकार की निरीक्षण तथा चिन्तन पद्धतियों का जन्म हुआ है।'

जॉनसन कहते हैं-'किसी भी वस्तु की संरचना उसके अंगों में पाये जाने वाले अपेक्षाकृत स्थायी अन्तःसम्बन्धों को कहते हैं, साथ ही अंग शब्द में स्वयं ही कुछ न कुछ स्थिरता की मात्रा का समावेश है। चूंकि सामाजिक व्यवस्था लोगों की अन्तःसम्बन्धित क्रियाओं से बनती है, इस कारण उसी संरचना को इन क्रियाओं में पायी जाने वाली नियमितता की मात्रा या पुनरुत्पत्ति में ढूँढा जाना चाहिये।'

1. पारसन्स ने सामाजिक संरचना के अंगों के रूप में संस्थाओं, अभिकरणों, प्रतिमानों, पदों तथा कार्यों का उल्लेख किया है और ये सभी तत्व अमूर्त हैं। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पारसन्स सामाजिक संरचना को एक अमूर्त अवधारणा मानते हैं।

2. अनेक समाजशास्त्रियों ने समाज को सामाजिक सम्बन्धों का जाल माना है। मैनहीम ने सामाजिक संरचना को सामाजिक शक्तियों का जाल कहा है। सामाजिक शक्तियों से तात्पर्य उन नियामक व नियंत्रणात्मक साधनों से है जो सामाजिक जीवन को स्थिरता प्रदान करते हैं। इन शक्तियों में परस्पर अन्तः क्रिया होती रहती है। क्रियात्मक सामाजिक शक्तियों का यह ताना-बाना जिस जाल का निर्माण करता है, उसी जाल को मैनहीम ने सामाजिक संरचना की संज्ञा दी है।

3. जॉनसन द्वारा प्रस्तुत परिभाषा से स्पष्ट होता है कि सामाजिक संरचना में स्थायी तत्वों को सम्मिलित नहीं किया जाता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि सामाजिक संरचना अपरिवर्तनशील होती है। परिवर्तनशीलता तो विचारों, आदर्शों व मूल्यों की विशिष्ट विशेषता है। हाँ, सामाजिक संरचना में परिवर्तनशीलता की तुलना में स्थिरता की मात्रा अधिक पायी जाती है।

पारसन्स, मैनहीम और जॉनसन द्वारा प्रस्तुत की गई सामाजिक संरचना की परिभाषाओं व अवधारणात्मक विश्लेषण के आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'सामाजिक संरचना किसी समय में परस्पर सम्बन्धित प्रास्थिति एवं भूमिकाओं के ऐसे प्रतिमान हैं जो अपेक्षाकृत स्थायी होते हैं और नियमित सम्बन्धों को जन्म देते हैं।'

2.4 सामाजिक संरचना की विशेषतायें (Features of Social Structure)

एस0 एफ0 नैडेल रेडक्लिफ ब्राउन, टालकट पारसन्स और हरबर्ट स्पेन्सर जैसे समाज शास्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किये गये सामाजिक संरचना के विवेचन के आधार पर हम इसकी निम्नलिखित विशेषताओं को स्वीकार कर सकते हैं-

1- सामाजिक संरचना अपेक्षाकृत एक स्थायी अवधारणा है अर्थात् सामाजिक व्यवस्था की तुलना में यह कम परिवर्तनशील है।

2- यह समाज के बाहरी स्वरूप को प्रदर्शित करती है। यही कारण है कि कभी भी 2 समाजों की सामाजिक संरचना एक समान नहीं होती। उनमें भिन्नता का पाया जाना अवश्यभावी है।

3- सामाजिक संरचना की प्रकृति अमूर्त होती है, क्योंकि इसका निर्माण सामाजिक संस्थाओं, सामाजिक अभिकरणों और सामाजिक प्रतिमानों जैसे अमूर्त अवयवों के द्वारा होता है। जाति, वर्ग और परिवार जैसे अवयव को मैकाईवर ने भी अमूर्त माना है।

4- सामाजिक संरचना का निर्माण अनेक छोटी-बड़ी इकाईयों से मिलकर होता है, इसलिये यह माना गया है कि सामाजिक संरचना एक अखण्ड इकाई नहीं है। उदाहरणार्थ- परिवार की सामाजिक संरचना का निर्माण अनेक छोटी छोटी इकाईयों-विवाह, नातेदारी, गोत्र, मूल्य व आदर्श, कर्मकाण्ड और रीति-रिवाजों से मिलकर होता है। ये सभी तत्व मिलकर एक सामाजिक संगठन को परिवार की संरचना प्रदान करते हैं।

5- सामाजिक संरचना की निर्माणक इकाईयों में एक निश्चित क्रमबद्धता पायी जाती है। एस0 एफ0 नैडेल का मत है कि संरचना के अध्ययन में समग्र के अन्तर्गत अंगों तथा उपांगों की क्रमबद्धता का अध्ययन किया जाता है। यदि हम जाति की सामाजिक संरचना का अध्ययन करना चाहते हैं तो इसकी उत्पत्ति के कारणों व सिद्धान्तों से लेकर, विभिन्न कालों में इसके विकास क्रम व प्रभावों को मानव समाज के सन्दर्भ में देखते हुए क्रमबद्ध तरीके से आगे बढ़ना होगा, तभी हम जाति की सामाजिक संरचना को समझ पायेंगे।

6- सामाजिक संरचना में सामाजिक संगठन व सामाजिक विघटन दोनों ही विद्यमान रहते हैं, दोनों की मात्रा में अन्तर हो सकता है। भारतीय समाज का ही अवलोकन करें तो प्रचलित सामाजिक मूल्यों व आदर्शों का प्रभाव समाज पर सदियों पूर्व से रहा है, रहेगा। इसी प्रकार भारतीय समाज विकास व प्रगति करता रहा है, करता रहेगा। पूर्व काल में सती प्रथा व बाल विवाह रूपी सामाजिक समस्याएँ प्रचलित थीं तो वर्तमान समय में किशोर हिंसा व वृद्धजनों की उपेक्षा जैसी सामाजिक समस्याएँ अस्तित्व में आ चुकी हैं। संक्षेप में कहा जाये तो, सामाजिक संरचना में आदर्श शून्यता की स्थिति पायी जाती है।

7- रेडक्लिफ ब्राउन का निश्चित मत है कि सामाजिक संरचना में स्थानीय तत्वों अर्थात् स्थानीयता का प्रभाव पाया जाता है। यह स्वाभाविक भी है। उदाहरणार्थ-एक जनजातीय समुदाय की सामाजिक संरचना दूसरे जनजातीय समुदाय की तुलना में कई मायनों में पृथक्ता प्रदर्शित करती है। इसका एक कारण उस जनजातीय समुदाय की स्थानीय विशेषताओं में अन्तर का पाया जाना भी होता है।

2.5 बोध प्रश्न-01

1. सामाजिक संरचना का अर्थ स्पष्ट कीजिये।
2. सामाजिक संरचना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

2.6 ग्रामीण सामाजिक संरचना: एक परिचय (Rural Social Structure: An Introduction)

जब हम सामाजिक संरचना की अवधारणा को भारतीय सन्दर्भ में देखने का प्रयास करते हैं, तब यह निश्चित मानिये कि हम ग्रामीण सामाजिक संरचना की बात करते हैं क्योंकि मूल रूप में भारतीय समाज एक ग्रामीण समाज है और भारतीय समाजशास्त्री मौलिक रूप से या तो ग्रामीण समाजशास्त्री रहे हैं या फिर मानव विज्ञानी। जहाँ तक भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्रियों का प्रश्न है-ए0 आर0 देसाई, एस0 सी0 दुबे, एम0 एन0 श्रीनिवास, बृजराज चौहान, मैकिम मेरिएट, आन्द्रे बिताई, एच0 डी0 मालवीय और प्रदीप राय जैसे समाजशास्त्री तो विशुद्ध ग्रामीण समाजशास्त्री रहे ही हैं, इरावती कर्वे, जी0 एस0 घुरिये व योगेन्द्र सिंह जैसे समाजशास्त्री भी जब भारत में परिवार, विवाह, नातेदारी व प्रथाओं-परम्पराओं में परिवर्तन की बात अपने अध्ययनों के माध्यम से करते हैं तो ये भी ग्रामीण समाजशास्त्री कहलाने का अधिकार पा जाते हैं। और तो और डी0 एन0 मजूमदार ने 'ग्रामीण पार्श्वचित्र'; त्रतंस चतवपिसमृद्ध व रामकृष्ण मुकर्जी ने 'ग्रामीण समाज की गत्यात्मकता'; जूीम क्लदंउपवे व िं त्रतंस ेवबपमजलद्ध जैसे अपने अध्ययनों के माध्यम से ग्रामीण समाजशास्त्र को अन्यो की भांति ही समृद्ध किया है। यहाँ पर एक और बात उल्लेखनीय है कि भारत के सन्दर्भ में समाजशास्त्रीय और मानवशास्त्रीय विचारधाराओं में सुस्पष्ट विभाजन रेखा खींचना सरल कार्य नहीं है। हम उन अध्ययनों को मानवशास्त्रीय अध्ययन कह सकते हैं, जो गहन क्षेत्रीय अध्ययन के माध्यम से सम्पन्न हो सके हैं और जिनमें समुदायों के सभी अंगों पर समग्रता का दृष्टिकोण अपनाया गया है, भले ही इस प्रकार के अध्ययन एक समाजशास्त्री के द्वारा सम्पादित/संचालित किये गये हों। ए0 आर0 एन0 श्रीवास्तव लिखते हैं,

“ भारत में इस प्रकार का अध्ययन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एक व्यवहारजन्य परिस्थितियों में हुआ। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु देश के ग्रामीण समुदायों के विषय में अधिकाधिक तथ्यों की आवश्यकता महसूस की गई। चूंकि इन विकास योजनाओं के लिये अनुदान राशि अमेरिका से प्राप्त होती थी और देश में प्रशिक्षित अध्ययनकर्ताओं की कमी थी अतएव सन 1950-1960 के दौरान कई एक विदेशी मानववेत्ताओं ने फोर्ड फाउन्डेशन संस्था के तत्वाधान में भारतीय गांवों का अध्ययन करना शुरू कर दिया। इस क्षेत्र में कुछेक भारतीय और ब्रिटिश मानवशास्त्री भी सम्मिलित हो गये। इस प्रकार पांचवे व छठवें दशक में ग्राम समुदायों का विविध रूप दृष्टिगोचर होना शुरू हुआ और यह क्रम थोड़े स्तर पर अभी भी जारी है।” कहा जा सकता है कि विगत कई दशकों से भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना समाजशास्त्रीय अध्ययन का विषय रही है। जाति व जनजाति ग्रामीण सामाजिक संरचना की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है। यदि एक गांव में केवल एक ही जाति या जनजाति के लोग निवास करते हैं तो इस गांव की सामाजिक संरचना उस गांव से भिन्न होगी, जिसमें अनेक जातियों, उपजातियों या जनजातियों के लोग निवास करते हैं। ऐसे गांव की सामाजिक संरचना अत्यन्त जटिल होगी।

भारतीय गांवों की सामाजिक संरचना की प्रकृति को समझने के लिये हमें गांवों के आन्तरिक सम्बन्धों, समूहों, गांव को समुदायों में समुदाय के रूप में समझना होगा तथा ग्रामों की सामाजिक संरचना की स्थायी इकाईयों का अध्ययन करना होगा। जहां तक एक गांव अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय स्तर पर या ग्राम स्तर पर ही करता है, वहीं वह अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये पूरे देश पर भी निर्भर रहता है। इस परिप्रेक्ष्य में एस0 सी0 दुबे अपनी पुस्तक ‘भारतीय ग्राम’ में लिखते हैं कि भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना को समझने के लिये लघु स्तर पर अनेक हिस्सों में गांवों का अध्ययन करके हम गांवों के विभिन्न पक्षों एवं विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं तथा उनके आधार पर भारतीय गांव के बारे में सामान्यीकरण प्रस्तुत कर सकते हैं।

एस0 सी0 दुबे, मैकिम मेरियट व अन्य अनेक ग्रामीण समाजशास्त्रियों ने अपने अपने अध्ययनों के माध्यम से भारतीय ग्रामों की सामाजिक संरचना को निम्नलिखित दो दृष्टिकोणों से समझने का प्रयास किया है-

(अ) भारतीय ग्राम एक विशिष्ट पूर्ण पृथक इकाई के रूप में।

(ब) भारतीय ग्राम बड़े समुदाय में एक छोटी सम्बन्धित इकाई के रूप में।

2.7 ग्रामीण सामाजिक संरचना की प्रमुख इकाईयां (Major Units of Rural Social Structure)

उपर्युक्त इकाईयों के आधार पर भारतीय ग्रामीण संरचना की प्रमुख इकाईयों तथा उनकी प्रकृति को इस प्रकार समझा जा सकता है-

(1) परिवार-ग्रामीण सामाजिक संरचना की सबसे छोटी इकाई व्यक्ति है जिसकी स्थिति का निर्धारण प्राथमिक रूप से उसके परिवार तथा नातेदारी व्यवस्था के आधार पर होता है। ग्रामीण परिवार या तो विस्तृत होते हैं अथवा संयुक्त। ये परिवार प्रमुख रूप से पितृसत्तात्मक होते हैं। परिवार के सभी सदस्य कृषि के द्वारा आजीविका उपार्जित करते हैं। अतः किसी भी सदस्य को अपने लिए एक पृथक परिवार की आवश्यकता नहीं होती। परिवार में मुखिया अथवा कर्ता की सत्ता असीमित होती है। इसका तात्पर्य है कि कोई भी सदस्य कर्ता की अनुमति के बिना कोई कार्य नहीं कर सकता। साथ ही परिवार के सदस्यों के कार्यों का विभाजन तथा विवादों का निपटारा करना भी कर्ता के ही अधिकार में होता है। परिवार के सभी सदस्य एक ही स्थान पर निवास करते हैं, एक ही रसोई में भोजन करते हैं, एक सामान्य सम्पत्ति का उपभोग करते हैं तथा विभिन्न

कर्मकाण्डों, उत्सवों और त्योहारों में सामूहिक रूप से भाग लेते हैं। परिवार की स्थिति ही व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण करती है। इस दृष्टिकोण से ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवार को एक केन्द्रीय और मौलिक इकाई माना जा सकता है।

(2) नातेदारी-ग्रामीण सामाजिक संरचना में विवाह दो व्यक्तियों का सम्बन्ध नहीं है बल्कि दो परिवारों का सम्बन्ध है। इसके फलस्वरूप गांव में नातेदारी व्यवस्था का महत्व किसी भी दूसरे समुदाय की अपेक्षा कहीं अधिक है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत रक्त तथा विवाह से सम्बन्धित व्यक्ति एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े रहते हैं। किसी भी कठिनाई अथवा अभाव के समय नातेदारों अथवा बन्धु-बान्धवों का सहयोग लेना आवश्यक समझा जाता है। अनेक परिस्थितियों में नातेदारी समूह के द्वारा व्यक्ति के व्यवहारों पर नियंत्रण भी रखा जाता है।

(3) जाति-ग्रामीण सामाजिक संरचना का दूसरा मूल आधार जाति है। जाति का निर्धारण जन्म से होता है। प्रत्येक जाति का एक परम्परागत व्यवसाय होता है। एक व्यक्ति अपनी जाति में ही विवाह करता है। जाति अन्य जातियों के साथ खान पान के नियम भी तय करती है और अपने सदस्यों पर नियंत्रण रखती है। गांव में सामाजिक संस्तरण का मुख्य आधार जाति ही है। विभिन्न जातियां परस्पर आर्थिक सम्बन्धों, कर्तव्यों एवं दायित्वों से बंधी होती हैं। जातियों की इस सम्बन्ध व्यवस्था को जजमानी प्रथा कहते हैं। प्रत्येक जाति की एक जाति पंचायत होती है जो अपने सदस्यों के व्यवहारों पर नियंत्रण रखती है तथा जातीय नियमों का उल्लंघन करने वालों को दण्ड देती है। इस प्रकार जाति ग्रामीण भारत में सामाजिक जीवन के निर्वाह का आधार स्तंभ है और व्यक्ति की जाति उसकी सामाजिकता व क्रियाकलापों को प्रभावित करती है।

(4) ग्राम पंचायत-गांव में ग्राम पंचायत सत्ता और शक्ति का केन्द्र होती है तथा समुदाय की सामाजिक संरचना को संगठित करती है। गांव पंचायत प्रारम्भ से ही, प्रशासन की इकाई रही है। गांव पंचायतों पर परिवार, जाति, वर्ग और वंश आदि का प्रभाव होता है। जाति पंचायत गांव पंचायतों के कार्य संचालन में योग देती है। परम्परागत गांव पंचायतों के स्थान पर वर्तमान में पंचायती राज के द्वारा नई पंचायतों की व्यवस्था की गयी है जो अधिक प्रजातंत्रीय प्रणाली पर आधारित है। गांव में इस नयी व्यवस्था ने ग्रामीण शक्ति संरचना, नेतृत्व, गुटबंदी, दलीय प्रणाली के नये आयामों को जन्म दिया है। ग्राम पंचायतें गांव में अनेक प्रशासकीय, सामाजिक एवं राजनैतिक कार्य करती हैं। परिवर्तित व्यवस्था ने गांवों के मौलिक जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है और ग्रामीण सामाजिक संरचना कई नवीन प्रवृत्तियों के साथ जुड़ गयी है।

(5) मूल्य संरचना-प्रत्येक गांव स्वयं में एक इकाई है और इस रूप में प्रत्येक गांव का सामाजिक जीवन कुछ ऐसे मूल्यों अथवा आदर्श नियमों में बंधा रहता है जिन्हें ग्रामीण जीवन के लिये आवश्यक समझा जाता है। इनमें कुछ मूल्य ऐसे हैं जिनका विस्तार एक बड़े क्षेत्र में पाया जाता है जबकि अनेक मूल्य ग्रामीण परम्परा अथवा वंश परम्परा से सम्बन्धित होने के कारण एक गांव की अपनी अलग विशेषता के रूप में देखने को मिलते हैं। इन सामाजिक मूल्यों के द्वारा ही व्यक्तिगत व्यवहारों का निर्धारण होता है तथा यह मूल्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते रहते हैं।

(6) प्रतिमान, मूल्य और परिवर्तन-ग्रामीण सामाजिक संरचना का सम्बन्ध ग्रामीण आदर्शों, मूल्यों तथा बाह्य प्रभाव से भी है। सामाजिक मूल्य और आदर्श मानव व्यवहार को तय करते हैं। ग्रामीण सामाजिक संरचना और ग्रामों के आन्तरिक प्रशासन एवं संगठन को नेतृत्व ने भी प्रभावित किया है। ग्रामों की सामाजिक संरचना के उल्लेख के दौरान गांवों में आने वाले नवीन सामाजिक परिवर्तनों का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। वर्तमान में ग्रामोत्थान की अनेक योजनायें प्रारम्भ की गयी हैं। सामुदायिक विकास योजनाओं, जमींदारी उन्मूलन अधिनियम, पंचवर्षीय योजनाओं, पंचायती राज आदि के प्रभाव के कारण परम्परात्मक प्राचीन ग्रामीण सामाजिक संरचना में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं। वर्तमान समय में ग्रामीण जीवन से

सम्बन्धित आदर्शों एवं मूल्यों में भी परिवर्तन आये हैं। ग्रामीण जीवन के कई क्षेत्रों में आज आधुनिकीकरण का प्रभाव स्पष्टतः दिखाई पड़ने लगा है।

(7) धर्म-भारतीय ग्रामीण समुदाय धर्म प्रधान है। कोई समाज कितना ही आदिम अथवा सभ्य क्यों न हो, धर्म सभी समाजों की एक अनिवार्य और सर्वव्यापी विशेषता है। भारत के ग्रामीण जीवन में धर्म केवल विश्वास ही नहीं है बल्कि जीवन की एक ऐसी विधि है जिसका सम्पूर्ण सामाजिक संरचना पर एक स्पष्ट प्रभाव है। भारतीय ग्रामीण समुदाय में धर्म की कुछ विशेषताओं की अभिव्यक्ति स्थानीय विशेषताओं के रूप में देखने को मिलती है जबकि अनेक धार्मिक विशेषताओं का सम्बन्ध सम्पूर्ण राष्ट्रीय जीवन से भी है। धर्म ग्रामीण सामाजिक जीवन की एक अनिवार्य विशेषता है।

(2) आर्थिक संस्थाएँ-ग्रामीण आर्थिक संस्थाएँ भी ग्रामीण सामाजिक संरचना का भाग हैं। गांव की अर्थव्यवस्था जाति व्यवस्था से सम्बन्धित है। अधिकांश लोग कृषि के द्वारा अपना जीवन यापन करते हैं। गांव के लोगों का अपनी जमीन से घनिष्ठ लगाव होता है और जमीन के स्वामित्व के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति का मूल्यांकन किया जाता है। सामान्यतः कृषि के साथ साथ पशुपालन तथा प्रत्येक जाति द्वारा अपना परम्परागत व्यवसाय भी किया जाता है। एक जाति दूसरी जाति की सेवा करती है जिसे जजमानी प्रथा व्यवस्था कहते हैं। जजमानी प्रथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आधारशिला रही है। वर्तमान समय में यह परम्परागत व्यवस्था कई कारणों से संकट से गुजर रही है। अब परम्परात्मक व्यवसाय एवं पूरे परिवार द्वारा कृषि करना लुप्त होती हुई ग्रामीण विशेषताएँ रह गयी हैं।

(9) शैक्षणिक संस्थाएँ-परम्परागत रूप से ग्रामों में औपचारिक शिक्षण संस्थाएँ सीमित मात्रा में ही पायी जाती हैं। किन्तु अनौपचारिक रूप से ग्रामीण लोगों का शिक्षण एवं प्रशिक्षण जाति द्वारा होता रहा है। एक व्यक्ति अपने परम्परागत जातीय व्यवसाय का प्रशिक्षण अपने पुरखों से प्राप्त करता है। परिवार ही व्यापार, कृषि एवं दस्तकारी का ज्ञान अपने सदस्यों को प्रदान करता है। कृषक, लुहार, सुनार, चर्मकार, धोबी, नाई, ढोली और पुजारी अपने व्यावसायिक ज्ञान अपनी सन्तानों को सिखाते हैं। परिवार द्वारा मनाये जाने वाले त्योहारों, उत्सवों एवं पर्वों द्वारा व्यक्ति को धार्मिक प्रशिक्षण मिलता है। गांवों की आधुनिक शिक्षा की पूर्ति के लिये शिक्षण संस्थाएँ खोली जा रही हैं। प्रौढ शिक्षण का कार्य भी सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत प्रारम्भ किया गया है। कृषि एवं उद्योगों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी पंचायती राज और सामुदायिक विकास योजना के द्वारा की गयी है। ये नए प्रयोग गांवों में तार्किकता एवं अन्य कई सोच को जागृत करने में सफल रहे हैं जिससे परम्परागत संरचना व्यापक रूप से प्रभावित हुई है। अब ग्रामीणजन भी अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दिला रहे हैं और परम्पराएँ भुला रहे हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि परिवार, विवाह, नातेदारी और जाति तथा धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक संस्थाएँ, सामाजिक प्रतिमान एवं मूल्य, गांव की सामाजिक संरचना के निर्माण में योग देते हैं। एस० सी० दुबे कहते हैं कि 'गांव सामाजिक संरचना की एक इकाई के नाते नातेदारी एवं जाति की सीमाओं को लांघकर अनेक असम्बन्धित परिवारों को एक एकीकृत बहुजाति समुदायों में बांधता है।'

2.8 ग्रामीण सामाजिक संरचना की विशेषतायें (Features of Rural Social Structure)

श्रीनिवास, मेरियट, स्मिथ तथा दुबे द्वारा जिन विभिन्न गांवों का अध्ययन किया गया है उनके आधार पर भारतीय ग्रामीण संरचना की सामान्य विशेषताओं को निम्नांकित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है-

(1) ग्रामीण संरचना कृषि प्रधान है। इसका तात्पर्य है कि ग्रामों में व्यक्ति की स्थिति, समूह निर्माण की प्रक्रिया, आर्थिक सम्बन्धों के निर्धारण, भू-स्वामित्व और कृषि की प्रकृति से जुड़ी हुई है।

(2) यद्यपि भारत के गांवों में विभिन्न जातियां तथा धार्मिक समूह साथ-साथ रहते हैं लेकिन प्रत्येक समूह की सामाजिक स्थिति का निर्धारण परम्परागत रूप से होता है। ग्रामीण संरचना में आज भी

आर्थिक साधनों तथा धन के संचय का इतना महत्व नहीं है जितना कि परम्पराओं के अनुसार व्यवहार करने का।

(3) ग्रामीण संरचना में परिवार तथा नातेदारी वे मूल इकाइयां हैं जिनके सन्दर्भ में व्यक्ति को अपने गांव में एक विशेष स्थिति प्राप्त होती है तथा उसका अन्य समूहों से प्रभुत्व अथवा अधीनता का सम्बन्ध स्थापित होता है।

(4) जातिगत मान्यताओं का ग्रामीण संरचना में एक महत्वपूर्ण स्थान है। खान-पान, सामाजिक सम्पर्क, विवाह तथा व्यवसाय के क्षेत्र में व्यक्ति के व्यवहारों पर जातिगत मान्यताओं का ही सबसे अधिक प्रभाव होता है।

(5) व्यक्ति की आर्थिक स्थिति का निर्धारण भू-स्वामित्व के आधार पर होता है। गांव में आय के अन्य साधन होते हुये भी व्यक्ति के पास यदि भूमि नहीं होती तो साधारणतया उसे सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हो पाती।

(6) ग्रामीण संरचना में उन समूहों का प्रभाव सबसे अधिक है जो बड़ी-बड़ी भूमि के स्वामी हैं लेकिन वे स्वयं भूमि पर कृषि न करके उस पर अन्य व्यक्तियों से कृषि करवाते हैं।

(7) ग्रामीण संरचना में नियंत्रण की स्थापना का कार्य मुख्य रूप से जनमत तथा धार्मिक नियमों के द्वारा होता है। प्रत्येक व्यक्ति अनिवार्य रूप से समूह के निर्णयों से बंधा रहता है।

(8) भावनात्मक जीवन के संरक्षण के लिए ग्रामीण संरचना में पारलौकिक मूल्यों का महत्व सर्वाधिक है। बुद्धिवाद का यहां कोई प्रत्यक्ष प्रभाव देखने को नहीं मिलता।

(9) अन्य समूहों की संरचना के समान ग्रामीण संरचना में भी शिक्षा का महत्व है लेकिन इसका सम्बन्ध सैद्धान्तिक शिक्षा से न होकर व्यवसाय और संस्कृति की व्यावहारिक सीख से है।

(10) ग्रामीण सामाजिक संरचना का विभाजन ग्रामीण गुट के रूप में देखने को मिलता है। एक-एक विस्तृत परिवार अथवा बन्धुत्व समूह द्वारा ग्रामीण गुट का निर्माण होता है तथा इनका कार्य अपने गुट की आवश्यकतायें पूरी करके उसे विभिन्न क्षेत्रों में सुरक्षा प्रदान करता है।

(11) गांव की सम्पूर्ण संरचना को स्थायी बनाने का कार्य गांव की प्रभु जाति करती है। प्रभु जाति आवश्यक रूप से गांव की सर्वोच्च जाति नहीं होती बल्कि यह वह जाति है जिसके सदस्य संख्या में अधिक होते हैं और साथ ही आर्थिक और राजनैतिक रूप से शक्ति सम्पन्न होते हैं।

2.9 भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना सम्बन्धी अध्ययन (Study Related to Indian Rural Social Structure)

भारत में ग्रामीण सामाजिक संरचना को समझने के लिए बड़े पैमाने पर समाजशास्त्रीय अध्ययन किये गये हैं, विशेषकर सन 1950-60 की अवधि में। यहां पर ऐसे कुछ अध्ययनों का संक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है।

1. भारत की महान समाजशास्त्री इरावती कर्वे ने दामले के साथ संयुक्त रूप से सन 1963 में 'ग्रुप रिलेशंस इन विलेज कम्युनिटी' शीर्षक से ग्रामीण समुदायों में समूह सम्बन्धों के अध्ययन के लिये कुछ पद्धतिशास्त्र प्रयोग किये थे। नातेदारी, जाति और बसावट के आधार पर उन्होंने संख्यात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही प्रकार के तथ्यों का संकलन किया था। इस अध्ययन का उल्लेख बी०के० नागला की पुस्तक 'भारतीय समाजशास्त्रीय चिन्तन' में मिलता है। नागला लिखते हैं कि इस अध्ययन हेतु पश्चिमी महाराष्ट्र में पूर्वी और पश्चिमी छोर पर स्थित ग्रामों का चयन किया गया था। इससे विभिन्न परिवेश उपलब्ध हो गये थे। 21 जातियों के 343 व्यक्तियों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया था। वाडी को छोड़ कर अधिकांश लोग 2 पीढ़ियों से अधिक समय से गांव में रह रहे थे। सभी ग्रामों में पारिवारिक संरचना लगभग एक ही थी।

अधिकांश लोग चाहते थे कि उनकी सन्तान अपने पारम्परिक व्यवसाय के साथ जुड़ी रहे। अधिकांश का व्यवसाय कृषि था और कुछ लोग सेवा क्षेत्र तथा दस्तकारी में संलग्न थे। कुछ परिवर्तनशील लोग श्वेत वसन रोजगार करना चाहते थे। अधिकांश गांवों में जमींदार व काश्तकार एक ही जाति के थे। यदि किसी को किसी काम के लिये उधार लेना पड़े तो वह अपनी जाति के बाहर उधार मांगने जाता था। नियमानुसार किसी अवसर के भोजन मात्र नातेदारियों तक ही सीमित थे। कृषकों तथा व्यावसायियों द्वारा विवाह के अवसर पर भोजन के लिये सारा गांव आमंत्रित किया जाता था। अश्वपृथ्यों तथा सेवारत लोगों में ये आमंत्रण जाति सदस्यों तथा नातेदारों तक ही सीमित थे।

जहां तक अनुसूचित जातियों का प्रश्न था, ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में उनका कोई स्थान नहीं था। सार्वजनिक सुविधाओं के उपयोग के लिये इन जातियों को मनाही थी। ग्रामीण व्यवस्था की कार्यप्रणाली में उनकी भूमिका समाप्त प्रायः थी, किन्तु इनकी भूमिका को नकारा भी नहीं जा सकता था। उदाहरण के लिये उन्होंने कृषकों के मृत पशुओं के शवों को हटाना बन्द कर दिया था।

अध्ययनकर्ताओं ने माना कि ग्राम की अधिकांश गतिविधियां नातेदारी समूहों तक ही सीमित थीं। अन्तर्समूहिक गतिविधियां जाति नियमों से प्रभावित थीं। मनोवृत्तियां तथा जनमत भी जाति व्यवस्था द्वारा निर्धारित नियमों से प्रतिबन्धित थे। जो लोग अपने व्यवसाय के कारण अंतर्निर्भर थे वे आपस में किसी विशेष प्रकार के सम्बन्धों को स्थापित करने से प्रतिबन्धित थे।

2. मैकिम मेरियट की दृष्टि में किशनगढ़ी गांव की सामाजिक संरचना: सन 1955 में एक महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित हुई- 'विलेज इन्डिया: स्टडीज इन लिटिल कम्युनिटी'। इसके सम्पादक मैकिम मेरियट थे। यह पुस्तक ग्रामीण अध्ययनों पर लेखों का संकलन था। पुस्तक में देशी व विदेशी दोनों प्रकार के लेखकों के लेख संकलित हैं। इन्हीं में से एक लेख स्वयं मैकिम मेरियट का है- 'लिटिल कम्युनिटी इन इंडीजिनस सिविलाइजेशन'। दिसम्बर 1950 से अप्रैल 1952 के मध्य मेरियट ने उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले के किशनगढ़ी गांव में यह अध्ययन पूर्ण किया था।

किशनगढ़ी में 24 स्थानीय जाति समूह रहते हैं। गांव की कुल जनसंख्या 850 थी। सबसे बड़ा जाति समूह ब्राह्मणों का था जो कि मुख्य रूप से किसान हैं। ब्राह्मणों के उपरान्त चर्मकार, जाट, कुम्हार तथा मुस्लिम फकीरों की संख्या आती है। अन्य जातियों के छोटे छोटे परिवार भी हैं। प्रत्येक जाति में कई वंशों के लोग हैं। एक वंश के लोगों में वंश भक्ति पायी जाती है। वर्तमान में वंश समूहों का संगठन दुर्बल होता जा रहा है।

किशनगढ़ी के लोगों के वैवाहिक सम्बन्ध आस पास के कई गांवों से हैं। इस गांव तथा आसपास के छः गांवों में विवाह सम्बन्ध स्थापित करना वर्जित है क्योंकि ये सभी परस्पर रक्त सम्बन्धी हैं। विवाह का क्रम एक ही दिशा में चलता है। लड़की देने वाले गांव को लड़की लेने वाले गांव से नीचा माना जाता है। विवाह पर व उसके उपरान्त भी लड़की के ससुराल वालों द्वारा परिवार को कुछ न कुछ दिया ही जाता है। दुधारू पशुओं में से एक-चौथाई पशु विवाह सम्बन्धियों द्वारा भेंट दिये गये थे। ऋणों का एक चौथाई भाग विवाह के लिये लिया जाता था।

विवाह व अन्य उत्सवों पर स्वयं की जाति के अतिरिक्त दूसरी जातियों के लोग भी सहभागिता करते हैं। शादी से पूर्व दस रातों तक अनेकों महिलायें बिन बुलाये शादी वाले घर में गीत गाती हैं। शादी की दावतों व जुलूसों में पुरुष भी सम्मिलित होते हैं। दावतें क्रमशः वंश समूह, जाति, अन्य जाति व पास के गांव से दी जाती हैं। विवाह, जन्म, मृत्यु एवं अन्य अवसरों पर न्यौता देने की प्रथा पायी जाती है। बड़े त्यौहार सभी जातियों द्वारा एक साथ मिलकर मनाये जाते हैं। कुछ दिनों सभी जातियों की खेल प्रतियोगितायें भी आयोजित होती हैं। वार्षिक मेले व देवताओं की पूजा में भी सभी जातियों के लोग सहभाग करते हैं।

जहां तक किशनगढ़ी गांव की शक्ति संरचना व राजनैतिक प्रस्थिति का प्रश्न है, जमींदार के नेतृत्व में नियंत्रण व अनुशासन था। गांव में गुटबाजी के चलते पंचायत सही से कार्य नहीं कर पा रही थी। पंचायत में सभी जातियों का उचित प्रतिनिधित्व होने के बाद भी समन्वय का अभाव पाया गया। गांव में पंचायत अदालत

भी है जो मुकदमों की सुनवाई करती है। इस पंचायत की कुल सदस्य संख्या 25 है। सभी सदस्य जमींदार हैं। इनमें भी समन्वय का अभाव है।

535 एकड़ समतल व उपजाऊ भूमि वाले किशनगढ़ी गांव की आर्थिक स्थिति संतोषजनक है। सिंचाई अधिकांशतः कुओं द्वारा होती है। पानी निकालने का काम बैलों व ठेकालियों की मदद से किया जाता है। जमीन उपजाऊ है अतः लोगों को खाद्यान्न व पशुओं को चारे की कमी नहीं होती। निम्न जाति के लोग कर्जमंद हैं, जो रुपये व अनाज देकर साहूकार का कर्ज चुकाते हैं। सभी जातियां अपने परम्परागत व्यवसायों में संलग्न पायी गयी।

3 एस0 सी0 दुबे का शमीरपेट गांव का अध्ययन:

दुबे द्वारा यह अध्ययन सन 1951-52 में हैदराबाद और सिकन्दराबाद से 25 मील दूर स्थित शमीरपेट गांव में सम्पन्न किया गया था। इस अध्ययन का प्रकाशन सन 1955 में 'इन्डियन विलेज' पुस्तक के रूप में हुआ। इस अध्ययन का शोध प्रारूप अन्तर्-अनुशासनिक था। दुबे व उनके समाज वैज्ञानिकों की पूरी एक टीम ने अध्ययन को पूर्णता प्रदान की। इस अध्ययन के महत्व को रेखांकित करते हुये बी0 के0 नांगला अपनी कृति भारतीय समाजशास्त्रीय चिन्तन में लिखते हैं-ग्राम का यह अध्ययन बहुत विस्तृत तथा गंभीर था। ग्रामों पर लिखे गये मोनोग्राफ में से यह पहली रचनाओं में से एक था। इस अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं -

(अ) सामाजिक संरचना: विभिन्न जातियों के मध्य भोजन तथा सामाजिक सहवास पर प्रतिबन्ध है, सभी जातियां अन्तर्वैवाहिक हैं, व्यवसायों पर जातियों का पीढ़ीगत एकाधिकार है, हिन्दू तथा मुस्लिम धार्मिक संगठन व प्रशासकीय संगठन के रूप में दोनों व्यवस्थायें विद्यमान हैं।

(ब) आर्थिक संरचना: गांव की आर्थिकी का मूल आधार गाय और भैंस के दूध का विक्रय, शिकार, मत्स्य पालन, फलों का व्यापार, जड़ी बूटी उत्पादन व विक्रय व कंदमूल फल एकत्र करना है। गैर कृषि व्यवसाय के रूप में कुम्हार, बढई, लोहार व धोबी हैं तथा सफाई कर्मचारी भी हैं।

(स) न्यायिक संरचना: गांव की अपनी पंचायत है। पंचायत का मुखिया वंशानुगत होता है, जिसे देशमुख कहा जाता है। इसका निर्णय सर्वमान्य होता है। अध्ययन के समय पंचायत में 27 लोग थे-चार गांव के अधिकारी, गांव में रहने वाली 17 बड़ी जातियों के मुखिया और 6 अन्य धनी व प्रभावशाली व्यक्ति। पंचायत के प्रमुख कार्य हैं-दीवानी व फौजदारी के मुकदमे निपटाना, गांव के किसी भी कार्य के लिये चंदे आदि की व्यवस्था करना व सार्वजनिक निर्माण से संबंधित कार्य हेतु सरकारी वित्तीय सहायता के लिये विचार विमर्श करना आदि।

एस0 सी0 दुबे के इस सर्वकालिक व महान अध्ययन पर टिप्पणी करते हुए टी0 बी0 बॉटोमोर ने अपनी पुस्तक 'सोशियोलॉजी: ए गाइड टू प्रॉब्लम एंड लिटरेचर' में लिखा है, यातायात के विकास ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ा दिया है और नगरीय शैक्षिक सुविधाओं की ओर आकर्षण बढ़ा है। इसके अतिरिक्त सरकार की कल्याण संस्थाओं व राष्ट्रीय राजनैतिक दलों की गतिविधियों से भी शमीरपेट के सामाजिक व राजनीतिक सोपान क्रम में परिवर्तन आया है। प्रभाव और प्रतिष्ठा के ठोतों में धन, शिक्षा, सरकारी सेवा में पद का भी समावेश हो गया है। फिर भी परिवर्तन बहुत धीमा है और परम्परागत व्यवस्था की पकड़ अब भी सुदृढ़ बनी हुई है।

2.10 ग्रामीण सामाजिक संरचना में वर्तमान परिवर्तन (Current changes in Rural Social Structure)

भारतीय ग्रामीण संरचना में परिवर्तन का तात्पर्य परम्परागत सामाजिक संरचना में उत्पन्न होने वाले उन परिवर्तनों से है जो नवीन मूल्यों, शिक्षा के प्रसार तथा संस्थात्मक परिवर्तनों से सम्बद्ध है। अनेक अध्ययनकर्ताओं का विचार है कि ग्रामीण संरचना आज पहले से भिन्न और पूर्णतया एक नवीन स्वरूप ग्रहण कर रही है। ग्रामीण संरचना में जहां परिवर्तन की प्रक्रिया उत्पन्न हुई है वहीं उसकी परम्पराओं के साथ कटिबद्धता भी बनी हुई है। इसका तात्पर्य है कि ग्रामीण समुदाय का एक भाग यदि परिवर्तन के पक्ष में है, तो दूसरा भाग आज भी परम्पराओं को अपने लिए आवश्यक मानता है।

भारतीय ग्रामीण संरचना में हो रहे प्रमुख सामाजिक परिवर्तनों को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है:-

(1) संयुक्त परिवार में परिवर्तन- भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना का महत्वपूर्ण आधार संयुक्त परिवार प्रणाली है। आज इस व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। पहले कृषि-युग में परिवार के सभी सदस्य एक स्थान पर ही रहकर मिल-जुलकर खेती बाड़ी का कार्य करते थे। परन्तु औद्योगीकरण के विकास के साथ-साथ संयुक्त परिवार में पाई जाने वाली यह एकता नष्ट होती गई क्योंकि औद्योगीकरण के फलस्वरूप नौकरी का क्षेत्र सारे देश में फैल गया और लोग नौकरी की खोज में अपना घर छोड़कर अलग-अलग स्थानों पर जाकर बसने लगे। इससे संयुक्त परिवार की संरचना को गहरा धक्का लगा है और संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है।

(2) विवाह संस्था में परिवर्तन- भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना में होने वाले परिवर्तनों में विवाह संस्था के अन्तर्गत हो रहे परिवर्तन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आधुनिक शिक्षा, पाश्चात्य संस्कृति, औद्योगीकरण, व्यक्तिवादी आदर्श व सरकारी कानूनों आदि के प्रभाव के कारण हिन्दू विवाह का धार्मिक आधार लगभग समाप्त सा ही हो गया है। आज विवाह को एक धार्मिक संस्कार न मानकर स्त्री पुरुष की कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति का एक साधन मात्र माना जाता है। साथ ही दहेज प्रथा, बाल-विवाह प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर रोक आदि के सम्बन्ध में लोगों के दृष्टिकोण में क्रान्तिकारी परिवर्तन देखने को मिले हैं। इतना ही नहीं, विवाह सम्बन्धी परम्परागत प्रतिबन्ध अब धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं और अन्तर्जातीय विवाह, विलम्ब विवाह, जीवन-साथी का स्वतंत्र चुनाव व प्रेम-विवाह की ओर लोगों का झुकाव बढ़ रहा है। भारतीय सामाजिक संगठन में निश्चित रूप से यह अभूतपूर्व परिवर्तन है।

(3) स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन- आधुनिक भारतीय समाज में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन स्त्रियों की स्थिति के सम्बन्ध में हुआ है। आज स्त्री पहले की तरह पुरुष की दासी नहीं, वरन् उसकी मित्र है। आज नौकरी के अवसर केवल पुरुषों को नहीं, स्त्रियों को भी उपलब्ध हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब स्त्रियां नौकरी करने लगी हैं और इसलिए वे आर्थिक मामलों में परिवार पर कम निर्भर रहने लगी हैं। इस स्थिति में उनमें आत्म-विश्वास तथा आत्म-सम्मान की भावना पनपी है। यह निश्चय ही शुभ कार्य है।

(4) जाति व्यवस्था में परिवर्तन- जाति व्यवस्था भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना की एक आधारभूत संस्था है। आधुनिक युग में इस व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। जाति-प्रथा में जितने प्रतिबन्धों का उल्लेख है, वे सभी आज नाममात्र के रह गये हैं। आज विभिन्न जातियों के लोग एक साथ बैठकर भोजन करते हैं, परस्पर विवाह-सम्बन्ध स्थापित करते हैं और इच्छानुसार किसी भी पेशे को अपनाते हैं। इतना ही नहीं, आज समाज में ऊँच-नीच का संस्तरण जाति के आधार पर नहीं अपितु धन, शिक्षा व अन्य वैयक्तिक योग्यताओं पर आधारित है। वास्तविकता तो यह है कि आधुनिक नवीन परिस्थितियों ने जाति-प्रथा के परम्परागत स्वरूप को बदल दिया है। साथ ही, राजनीति में जाति का महत्व बहुत बढ़ गया है अर्थात् आज जाति का राजनीतिकरण हो रहा है।

(5) आर्थिक संगठन में परिवर्तन-विज्ञान के आविष्कार, प्रौद्योगिकी, औद्योगीकरण और प्रजातंत्रवाद ने भारतीय सामाजिक संगठन के आर्थिक पक्ष को भी महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया है। भारतीय सामाजिक संगठन में यदि एक ओर उद्योगवाद और पूंजीवाद का भरपूर विकास हुआ है तो दूसरी ओर बेकारी, निर्धनता और मंहगाई ने जनता की कमर ही तोड़ दी है। यद्यपि ग्रामोद्योगों का पतन हुआ है, परन्तु अधिक तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन के कारण देशवासियों के जीवन का स्तर निश्चित रूप से पहले से कहीं अधिक उच्च देखने को मिल रहा है।

(6) धार्मिक जीवन में परिवर्तन-आज विज्ञान का युग है। यह सर्वविदित है कि विज्ञान और धर्म एक दूसरे के विरोधी हैं। इस रूप में भारतीय संगठन, जो धर्म-प्रधान रहा है, विज्ञान की प्रगति से अत्यधिक प्रभावित हुआ है। वास्तविकता तो यह है कि वैज्ञानिक आविष्कारों के साथ-साथ धार्मिक कट्टरता में कमी आई है। और तो और धर्म से सर्वाधिक प्रभावित ग्रामीण भी आज धर्म से विमुख होते जा रहे हैं। पहले ग्रामवासी धर्म, पूजा-पाठ इत्यादि को जीवन का एक अभिन्न अंग मानते थे, परन्तु आज उनके दृष्टिकोण में अन्तर आ गया है। अतः स्पष्ट है कि भारतीय समाज में धर्म का प्रभाव निरन्तर घट रहा है।

(7) सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन-भारतीय समाज के सांस्कृतिक जीवन में भी हमें आज अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। इस सम्बन्ध में विशेषकर पाश्चात्य संस्कृति के कुछ प्रभावों का उल्लेख किया जा सकता है। पश्चिम सभ्यता व संस्कृति के प्रभाव के कारण स्त्रियाँ पढ़ने लिखने लगी हैं और नौकरी भी करती हैं। साथ ही प्रेम-विवाह भी काफी मात्रा में हो रहे हैं तथा विवाहोपरान्त विवाह-विच्छेदों की संख्या की क्रमशः बढ़ रही है। पर्दा-प्रथा लगभग समाप्त सी हो गई है और विवाह अब पाश्चात्य तरीकों से सम्पन्न होने लगे हैं। इतना ही नहीं, देश में रहन-सहन व वेशभूषा पर भी पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। स्त्री-पुरुष पाश्चात्य जीवन शैली में जीने के आदी हो गए हैं, इसलिए आज भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य संस्कृति से अत्यधिक प्रभावित कहा जा सकता है।

(8) अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन-इन परिवर्तनों के अतिरिक्त भारतीय सामाजिक संगठन में अन्य अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों ने भी जन्म लिया है। आश्रम व्यवस्था, कर्म का सिद्धान्त, पुरुषार्थ और संस्कार जो भारतीय समाज के आधार स्तम्भ थे, आज कोरे आदर्श बनकर रह गये हैं। इसी प्रकार गांव-पंचायतों में "पंच परमेश्वर" की धारणा विलुप्त हो गई है। आज इस समाज में अपराध, व्याभिचार, भ्रष्टाचार, झूठ व धोखाधड़ी आदि का कहीं अधिक बोलबाला है। विशेषकर ग्रामीण समाज का यदि इस सम्बन्ध में विश्लेषण किया जाए तो स्पष्ट होगा कि नैतिकता के दृष्टिकोण से ग्रामों का स्तर कहीं अधिक गिर गया है।

उपर्युक्त वर्णन से भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना में हो रहे कुछ प्रमुख परिवर्तनों की प्रकृति बहुत कुछ स्पष्ट हो जाती है। वास्तव में किसी भी सामाजिक संरचना में होने वाले परिवर्तनों को पूर्णतया स्पष्ट नहीं किया जा सकता क्योंकि परिवर्तन की प्रक्रिया तो निरन्तर चलती ही रहती है। इतना सब कुछ होते हुए भी यह निश्चित है कि भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना इस समय अभूतपूर्व परिवर्तनों से गुजर रही है। कुछ समाजशास्त्रियों ने भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना में आ रहे परिवर्तनों का अपने शब्दों में उल्लेख किया है। कुछ विचार प्रस्तुत हैं -

एस0 सी0 दुबे के अनुसार भारतीय ग्रामीण संरचना में होने वाले परिवर्तन:

1. धार्मिक दृष्टिकोण ; तमसपहपवने वनजसववाद्ध समाप्त होता जा रहा है और इसके विपरीत सांसारिक दृष्टिकोण पनपता जा रहा है। अर्थ के महत्व में वृद्धि हो रही है।
2. जाति-प्रथा निर्बल होती जा रही है और सामाजिक संस्तरण का आधार आर्थिक होता जा रहा है।
3. सामाजिक संस्तरण का जातिगत आधार लुप्त होता जा रहा है और उसके स्थान पर धन, शिक्षा, क्षमता, योग्यता आदि को अधिक महत्व दिया जा रहा है।

- 4- जातीय कठोरता कम हो रही है और इसके प्रतिबन्ध अब टूट रहे हैं। जाति में विवाह तो अभी भी प्रचलित है।
 - 5- व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण अब जाति के आधार पर नहीं, वरन् गुणों एवं योग्यता के आधार पर होता है।
 - 6- ग्रामीण समुदायों के उच्च वर्गों ने पाश्चात्य व आधुनिक जीवन-प्रतिमानों को अपना लिया है और निम्न वर्ग की जनता उच्च वर्ग का अनुकरण करने लगी है।
- ए0 आर0 देसाई के अनुसार भारतीय ग्रामीण संरचना में होने वाले परिवर्तन:
1. सामूहिकता के स्थान पर व्यक्तिवादिता व वैयक्तिक प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है।
 2. व्यक्तिगत स्वामित्व की समाप्ति।
 3. अब बाजार अर्थव्यवस्था का विकास होता जा रहा है।
 4. मशीनीकरण के प्रभाव से कुटीर उद्योग धन्धे नष्ट हो रहे हैं।
 5. कुटीर उद्योगों के नष्ट होने से दस्तकार बेकार हो रहे हैं और भूमिहीन मजदूरों की संख्या में वृद्धि हो रही है।
 6. पारिवारिक सत्ता का ह्रास हो रहा है और संयुक्त परिवार का स्थान छोटे परिवार लेते जा रहे हैं।

2.11 बोध प्रश्न-02

1. ग्रामीण सामाजिक संरचना का अर्थ स्पष्ट कीजिये।
2. ग्रामीण सामाजिक संरचना की प्रमुख इकाईयां कौन सी हैं ?
3. ग्रामीण सामाजिक संरचना किस सीमा तक परिवर्तित हुई है ?
4. ग्राम अध्ययन की प्रकृति स्पष्ट कीजिए।

2.12 सारांश (Summary)

इस इकाई में हमने कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ज्ञानार्जन किया, यथा-सामाजिक संरचना किसे कहते हैं ? ग्रामीण सामाजिक संरचना किसे कहते हैं ? ग्रामीण सामाजिक संरचना की प्रमुख निर्माणक इकाईयां कौन सी हैं ? भारत में अब तक हुए ग्राम अध्ययनों से क्या निष्कर्ष सामने आये हैं ? व भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना में आ रहे वर्तमान परिवर्तन कौन-कौन से हैं ? ज्ञात हुआ कि किसी समाज की बाहरी रूपरेखा को उस समाज की सामाजिक संरचना कहा जाता है। समाज की आन्तरिक संरचना सामाजिक व्यवस्था कहलाती है। सामाजिक संरचना के प्रमुख विचारक टॉलकट पारसनस , एस0 एफ0 नैडेल, कार्ल मैन्हीम व रेडक्लिफ ब्राउन आदि हैं।

भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना की प्रमुख इकाईयां परिवार, नातेदारी, जाति, पंचायत, मूल्य संरचना व धर्म आदि हैं। भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना कृषि प्रधान है और आज भी इस समाज में आर्थिक साधनों व धन संचय का इतना अधिक महत्व नहीं है, जितना कि परम्परागत मूल्यों व आदर्शों के अनुपालन का। भारत में एस0 सी0 दुबे, एम0 एन0 श्रीनिवास, वृजराज चौहान, इरावती कर्वे, आन्द्रे बिताई व मैकिम मेरियट प्रमुख ग्रामीण समाजशास्त्री रहे हैं जिन्होंने भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना का वृहद् अध्ययन किया है।

यह भी स्पष्ट हुआ कि भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना परिवर्तनशील है। वर्तमान में हम देख रहे हैं कि संयुक्त परिवार विघटित हुए हैं, विवाह के स्वरूप में परिवर्तन आया है, जाति के बन्धन शिथिल हुए हैं और सांस्कृतिक व आर्थिक जीवन में परिवर्तन आ रहे हैं।

2.13 शब्दावली (Glossary)

सामाजिक संरचना: प्रत्येक समाज की रचना अनेक अंगों से मिलकर होती है। ये सभी अंग मिलकर जिस ढांचे का व्यवस्थित तरीके से निर्माण करते हैं, समाज के उसी ढांचे को सामाजिक संरचना कहते हैं।

ग्रामीण सामाजिक संरचना: किसी गांव में परिवार, नातेदारी समूह, संस्थाओं, सत्ता, शक्ति, धर्म, जाति, शिक्षा और अर्थ व्यवस्था के आधार पर जो बाहरी ढांचा दिखाई पड़ता है, उसे ही ग्रामीण सामाजिक संरचना कहते हैं।

2.14 अभ्यास प्रश्न (Practise Questions)

- सामाजिक संरचना के प्रमुख विद्वान हैं-
 (क) एस0 एफ0 नैडेल (ख) रेडक्लिफ ब्राउन
 (ग) हरबर्ट स्पेन्सर (घ) उपरोक्त सभी
- सामाजिक संरचना एक अखण्ड इकाई नहीं है, यह कथन है-
 (क) सत्य (ख) असत्य
 (ग) भ्रामक (घ) अवैज्ञानिक
- 'रूरल प्रोफाइल्स' पुस्तक के लेखक हैं-
 (क) रामकृष्ण मुकर्जी (ख) राधा कमल मुकर्जी
 (ग) ए0 आर0 देसाई (घ) डी0 एन0 मजूमदार
- ग्रामीण सामाजिक संरचना की सबसे महत्वपूर्ण इकाई है-
 (क) जाति व जनजाति (ख) नातेदारी
 (ग) गांव की बसावट (घ) ये सभी
- गांव में सामाजिक संस्तरण का प्रमुख आधार है-
 (क) शिक्षा (ख) व्यवसाय
 (ग) जाति (घ) इनमें से कोई नहीं
- 'भारतीय समाजशास्त्रीय चिन्तन' पुस्तक के लेखक हैं-
 (क) एम0 एन0 श्रीनिवास (ख) एस0 सी0 दुबे
 (ग) के0 एल0 शर्मा (घ) बी0 के0 नागला
- 'इण्डियन विलेज' पुस्तक के लेखक हैं-
 (क) ए0 आर0 देसाई (ख) एस0 सी0 दुबे
 (ग) मैकिम मेरियट (घ) एम0 एन0 श्रीनिवास
- 'विलेज इण्डिया' पुस्तक के सम्पादक हैं-
 (क) राम कृष्ण मुकर्जी (ख) इरावती कर्वे

- (ग) मैकिम मेरियट (घ) इनमें से कोई नहीं
- 9 मैकिम मेरियट के अध्ययन में सम्मिलित गांव कौन सा है-
- (क) तंजौर (ख) किशनगढ़ी
- (ग) राणावतों की सादड़ी (घ) शमीरपेट
- 10 एस0 सी0 दुबे के अध्ययन में कौन सा गांव सम्मिलित था-
- (क) भोजपुर (ख) शमीरपेट
- (ग) रामपुर (घ) तंजौर

2.15 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practise Questions)

- 1 (घ) उपरोक्त सभी 2 (क) सत्य 3 (घ) डी0 एन0 मजूमदार 4 (घ) ये सभी
- 5 (ग) जाति 6 (घ) बी0 के0 नांगला 7 (ख) एस0 सी0 दुबे 8 (ग) मैकिम मेरियट 9 (ख) किशनगढ़ी 10 (ख) शमीरपेट।

2.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

- 1- सामाजिक संरचना से आप क्या समझते हैं ? सामाजिक संरचना की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
- 2- ग्रामीण सामाजिक संरचना की अवधारणा को इसकी निर्माणक इकाईयों के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
- 3- भारत में ग्रामीण सामाजिक संरचना सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण अध्ययनों को प्रस्तुत कीजिए।
- 4- भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना में आ रहे वर्तमान परिवर्तनों को सामने लाइये।

2.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- बैते, आंद्रे, 'कास्ट, क्लास एंड पावर: चेंजिंग पैटर्न ऑफ स्ट्रेटिफिकेशन इन तंजौर विलेज' (1965), यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया, यू0एस0ए0।
- चौहान, बी0 आर0, 'भारत में ग्रामीण समाज' (1988), ए0 सी0 ब्रदर्स, उदयपुर।
- दोषी, एस0 एल0 एण्ड पी0 सी0 जैन, 'रूरल सोशियोलॉजी' (1999), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- दुबे, एस0 सी0, 'भारतीय ग्राम (अनु0: योगेश अटल, 1996), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
- दुबे, एस0 सी0, 'इण्डियन चेंजिंग विलेजेज' (1958), लंदन: रूटज एण्ड कीगन पाल।
- कर्वे इरावती एंड दामले, यशवन्त भाष्कर, 'ग्रुप रिलेशंस इन विलेज कम्युनिटी' (1963), मोनोग्राफ सीरीज 24, पुणे, डेक्कन कॉलेज।
- मजूमदार, डी0 एन0, 'कास्ट एण्ड कम्युनिकेशन इन एन इण्डियन विलेज' (1958), एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे।
- मेरियट, मैकिम, 'विलेज इण्डिया' (1961), एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे।
- नागला, बी0 के0, 'भारतीय समाजशास्त्रीय चिन्तन' (2015), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- रेडफील्ड, रॉबर्ट, 'लघु समुदाय' (1973), राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
- यादव, रामगणेश (सम्पादक), 'भारतीय समाजशास्त्र के अग्रणी चिन्तक' (2014), ओरियंट ब्लैकस्वान, हैदराबाद।

2.18 सहायक उपयोगी ग्रन्थ (Helpful Text)

- आहूजा, राम, 'भारतीय समाज' (2004), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- देसाई, ए0 आर0, 'भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र' (1997), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- मुकर्जी, आर0 एन0, 'समकालीन उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धान्त' (2002), विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- सिंह, योगेन्द्र, 'मॉडर्नाइजेशन ऑफ इण्डियन टेम्पडिशन' (1994), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- श्रीवास्तव, ए0 आर0 एन0, 'भारतीय समाज' (2002) के0 के0 पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

इकाई 10 ग्रामीण विकास हेतु कार्यक्रम (Programmes for Rural Development)

- 10.1 प्रस्तावना (Introduction)
- 10.2 उद्देश्य (Objectives)
- 10.3 ग्रामीण विकास की अवधारणा (Concept of Rural Development)
- 10.4 विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास (Rural Development in Various Five-Year Plans)
- 10.5 बोध प्रश्न-01
- 10.6 ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Rural Development Programs)
- 10.7 ग्रामीण विकास के वर्तमान कार्यक्रम (Current programs of Rural Development)
- 10.8 ग्रामीण विकास की अनुपम योजना (Unique Schemes of Rural Development)
- 10.9 बोध प्रश्न-02
- 10.10 सूचना प्रौद्योगिकी तथा ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Information Technology and Rural Development Program)
- 10.11 ग्रामीण विकास की रणनीतियां (Rural Development Strategies)
- 10.12 ग्रामीण विकास की रणनीतियां: एक नजर में (Rural Development Strategies: At a Glance)
- 10.13 बोध प्रश्न-03
- 10.14 सारांश (Summary)
- 10.15 शब्दावली (Glossary)
- 10.16 अभ्यास प्रश्न (Practise Questions)
- 10.17 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practise Questions)
- 10.18 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)
- 10.19 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
- 10.20 सहायक उपयोगी ग्रन्थ (Helpful Texts)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

ग्रामीण विकास का विचार उतना ही प्राचीन है, जितनी कि कृषि, क्योंकि ग्रामीण विकास का पर्यायवाची कृषि विकास को माना जाता था। देखने में आ रहा है कि समय के साथ-साथ ग्रामीण विकास के विचार में भी परिवर्तन आया है। ग्रामीण समाज के जानकार व लेखक बैजनाथ सिंह अपनी पुस्तक 'सामुदायिक ग्रामीण विकास' में लिखते हैं कि चूंकि गांव में कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धुरी है, इसलिये कृषि विकास के लिये इससे सम्बन्धित योजनाओं, जैसे-सिंचाई व विद्युत सुविधाओं का विकास व प्रसार करना ही ग्रामीण विकास है।

किन्तु यह ग्रामीण विकास की संकुचित अवधारणा है क्योंकि विकास के लिए केवल रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था हो जाना ही पर्याप्त नहीं है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, संचार, स्वच्छता व पेयजल की व्यवस्था करना भी अनिवार्य है। अतः ग्रामीण विकास में निर्धनता और आय की असमानता को दूर करना, रोजगार के अवसरों को बढ़ाना व सम्पत्ति और सेवाओं की असमानताओं में कमी करना सम्मिलित है। इन्हीं बातों को दृष्टिगत रखते हुए ही स्वतंत्रता के पश्चात से भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों का निर्माण व क्रियान्वयन किया जा रहा है, ताकि दो तिहाई ग्रामीण जनसंख्या वाले इस देश में ग्रामीण विकास के मोर्चे पर हम पिछड़ न सकें। प्रस्तुत इकाई में विकास के विभिन्न नवीनतम कार्यक्रमों, पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास की स्थिति व ग्रामीण विकास की रणनीतियों पर चर्चा की गई है व ग्रामीण विकास में सूचना तकनीकी की भूमिका का मूल्यांकन भी किया गया है।

10.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान सकेंगे कि-

- ✓ ग्रामीण विकास से क्या अभिप्राय है?
- ✓ पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास की क्या स्थिति रही है?
- ✓ स्वतंत्रता के बाद से भारत में ग्रामीण विकास के कौन-कौन से कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये?
- ✓ वर्तमान समय में ग्रामीण विकास के कौन कौन से कार्यक्रम चल रहे हैं?
- ✓ महात्मा गांधी नरेगा क्या सफल योजना है?
- ✓ ग्रामीण विकास में सूचना तकनीकी की क्या भूमिका है?
- ✓ ग्रामीण विकास की रणनीतियां क्या हैं?

10.3 ग्रामीण विकास की अवधारणा (Concept of Rural Development)

ग्रामीण क्षेत्र से अर्थ उन क्षेत्रों से है जहां पर कृषि रीढ़ की हड्डी है और कार्यशील जनसंख्या का अधिकतर भाग या तो कृषक है या कृषि मजदूर है। चूंकि ग्रामीण क्षेत्रों में देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या निवास करती है इसलिए विकास का अर्थ ही ग्रामीण विकास है।

ग्रामीण विकास का विचार उतना ही पुराना है जितनी कि कृषि है। क्योंकि ग्रामीण विकास का पर्यायवाची कृषि विकास माना जाता था। हां, कृषि विकास ग्रामीण विकास का हृदयस्थल है लेकिन संपूर्ण शरीर नहीं है। देखने में आ रहा है कि समय के साथ-साथ ग्रामीण विकास के विचार में भी बदलाव आया है। चूंकि गांव में कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धुरी है इसलिए कृषि विकास के लिए इससे सम्बन्धित योजनाओं जैसे सिंचाई व विद्युत सुविधाओं का विकास व प्रसार करना ही ग्रामीण विकास है। लेकिन ग्रामीण विकास की यह संकुचित अवधारणा थी क्योंकि विकास के लिए रोटी, कपड़ा व मकान ही काफी नहीं है। रहन-सहन

में गुणवत्ता लाना भी आवश्यक है जिसके लिए पेट पूजन के अलावा शिक्षा, चिकित्सा, सड़क, संचार, स्वच्छ पानी, स्वच्छता आदि भी जरूरी है। इसलिए ग्रामीण विकास में गरीबी और आय की असमानता को दूर करना, रोजगार के अवसरों को बढ़ाना व सम्पत्ति और सेवाओं की असमानताओं में कमी करना शामिल है।

अतः ग्रामीण विकास वह प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य गरीबी एवं असमानता को दूर करने के लिए ग्रामीण मिल-जुल कर अपनी सोच समझ से सहभागिता के आधार पर प्रयास करते हैं। वैसे तो ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में बचत, विनियोग व राष्ट्रीय उत्पादन आदि के घटकों का सन्दर्भ दिया जाता है, लेकिन ग्रामीण विकास की वृहत आयाम के रूप में संकल्पना की जाती है। इसलिए विकास का अभिप्राय शिक्षा, जीवन-अवधि में वृद्धि, शिशु मृत्यु दर की कमी, पेय जलापूर्ति, स्वच्छता, रोजगार, आधारभूत सुविधाओं को बढ़ाना शामिल है। इस प्रकार ग्रामीण विकास केवल कृषि और उद्योग धन्धों के विकास तक ही सीमित न रहकर शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, आधारभूत सुविधाओं व परिवार नियोजन आदि क्षेत्रों को बढ़ावा देकर ग्रामीण जीवन-स्तर में सुधार लाता है।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि व्यापक सन्दर्भ में ग्रामीण विकास की संकल्पना ग्रामों का समग्र एवं व्यापक रूपान्तरण है जो स्वयं में एक बहुआयामी और बहुउद्देशीय अनवरत प्रक्रिया है। इसके उद्देश्यों को संक्षेप में निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया जा सकता है-

1. उत्पादन में बढ़ोत्तरी और रोजगार अवसरों का सृजन।
2. आधुनिक निवेशों और सेवाओं की उचित मात्रा में प्राप्ति और उनकी समाज के सभी वर्गों को समान सुलभता।
3. आय का समान वितरण और समाज के विभिन्न वर्गों को विकास के समान अवसर उपलब्ध कराना।
4. जन-कल्याण और रहन-सहन के स्तर में सुधार।
5. गरीब जनों की विकास कार्यक्रमों के निर्धारण और क्रियान्वयन में सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित करने का प्रयास करना।
6. स्वप्रेरित और स्वावलम्बी विकास सुनिश्चित करना।
7. पर्यावरणीय जागृति उत्पन्न करना और जीवन में गुणात्मक सुधार करना।

संक्षेप में ग्रामीण विकास से अर्थ परिणामात्मक सुधार (जैसे रोजगार के साधनों का सृजन) के साथ-साथ गुणवत्ता सुधार (जैसे शिक्षा आदि) भी लाना है। संक्षेप में कहा जाये तो ग्रामीण विकास का विचार बहुआयामी है। इसमें कृषि विकास के अतिरिक्त उद्योग-धन्धों की स्थापना, सामाजिक सुविधाओं और अवस्थापना जैसे सड़क, संचार, विद्युत, विपणन, जलापूर्ति, बैंक, जन कल्याण सेवाएं व बीमारी नियंत्रण, पोषण में सुधार, प्रौढ़ साक्षरता जैसे कार्यक्रम भी सम्मिलित हैं। इसका सम्बन्ध आर्थिक प्रगति से न होकर ग्रामीण गरीबों जैसे गरीब कृषक, खेतिहर मजदूर, दस्तकार व अन्य दुर्बल वर्गों के शारीरिक और सामाजिक कल्याण में प्रगति से भी है। इस प्रकार ग्रामीण विकास ग्रामीणों की सहभागिता के आधार पर उनके रहन-सहन में सुधार और उनको आत्मनिर्भर बनाने की प्रक्रिया से सम्बन्धित है।

10.4 विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास (Rural Development in Various Five-Year Plans)

प्रथम पंचवर्षीय योजना

प्रथम पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य जनता की भागीदारी से जनता के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना और बेहतर जीवन के लिए अवसर प्रदान करना था। लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए ग्राम स्तर

पर कोई एजेंसी/संगठन होने की बात भी इस योजना में कही गई थी। लोकतांत्रिक संस्थाओं का जिक्र भी इस योजना में किया गया था। इस योजना के प्रारूप के अनुसार स्थानीय नियोजन आवश्यक है। संक्षेप में इस योजना में विकेंद्रीकृत नियोजन लोगों की भागीदारी के साथ करने पर बल दिया गया था। सकारात्मक बात इस योजना की यह रही कि इस योजना के दौरान सामुदायिक विकास व राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम शुरू हुए जिनका उद्देश्य ग्रामीणों के सामाजिक व आर्थिक स्तर में बढ़ोत्तरी करना था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

द्वितीय पंचवर्षीय योजना ने भी लोकतांत्रिक योजना में सामुदायिक सहयोग व सहभागिता के महत्व को पहचाना। इस योजना में इस मुद्दे पर प्रकाश डाला गया था कि गांव की औसत जनसंख्या कितनी होनी चाहिए ताकि गांव की उचित योजना बन सके। इसी ध्येय को ध्यान में रखकर इस योजना में इस बात पर जोर दिया गया कि गांव की जनसंख्या का पुनरावलोकन करने की जरूरत है ताकि प्रभावी गांव इकाई व जीवंत पंचायत स्थापित हो सके। स्थानीय शासन विभागों के मंत्रियों की 1954 में हुई बैठक में यह बात कही गई थी कि एक पंचायत की जनसंख्या 1000 से 1500 के बीच हो तो उचित होगा। इस योजना के अन्तर्गत गांव स्तर पर कार्यकलाप चित्रण की भी बात कही गयी। यह मुद्दा प्रभावी नियोजन के लिए जरूरी है क्योंकि पंचायतों/प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर कार्यों का बंटवारा उनकी क्षमता को ध्यान में रखकर करना चाहिए। गांव, ब्लॉक, टाउन, तहसील स्तरों पर योजना बनाने की बात भी इस योजना के अन्तर्गत कही गयी थी। योजना बनाने के लिए जिला स्तर पर जिला विकास समिति व ब्लॉक स्तर पर विकास समिति बनाने की बात भी कही गयी थी। ये दोनों व्यवस्थाएं ग्राम नियोजन के लिये उचित कदम थे।

कुल मिलाकर कहें कि इस योजना में ग्राम नियोजन, ब्लॉक नियोजन व जिला नियोजन की बात पर जोर दिया गया तथा इसके लिये संस्थाओं के गठन की भी बात कही गई थी लेकिन ये सब अलग-अलग तरीके से कहा गया और कुल मिलाकर यह प्रयास एकीकृत रूप में संपूर्ण योजना प्रक्रिया का हिस्सा नहीं बन सका। इसी दौरान 1957 में बलवंत राय मेहता समिति ने सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा का मूल्यांकन कर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें तीन स्तरीय (ग्राम, ब्लॉक व जिला) पंचायती राज व्यवस्था स्थापित करने की सिफारिश की थी तथा राज्य सरकारों से पंचायतों को जरूरी संसाधन, अधिकार व शक्तियां प्रदान करने की भी सिफारिश इस समिति ने प्रस्तुत की थी ताकि ये संस्थाएं अपने स्तर पर हस्तांतरित कार्यों का सम्पादन उचित प्रकार से कर सकें।

तृतीय पंचवर्षीय योजना

तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी पंचायती राज संस्थाओं के विकेंद्रीकृत नियोजन में भागीदार होने की बात दोहराई गयी थी ताकि ये योजनाएं लोगों के द्वारा, लोगों के लिए स्थानीय संसाधनों के आधार पर बनाई जा सकें व लागू भी की जा सकें। लेकिन इस योजना अवधि में भी विभिन्न स्तरों पर संस्थाएं बनाने की बात, जो दूसरी पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में कही गई थी, फलीभूत नहीं हो सकी।

चौथी पंचवर्षीय योजना

- | | | |
|---------------------------------------|---------|--|
| 1. ग्रामीण रोजगार के कार्यक्रम | 1971-72 | ग्रामीण विकास हेतु नए रोजगार बढ़ाना। |
| 2. सूखा आशंकित क्षेत्र | 1972-73 | सूखाग्रस्त ग्रामीण इलाकों में प्राकृतिक कार्यक्रम संसाधनों को विकसित करना। |
| 3. पायलट गहन ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम | 1972-73 | गांव में निर्माण कार्य। |

पांचवी पंचवर्षीय योजना

- | | | | |
|----|-----------------------------------|---------|---|
| 1. | समेकित बाल विकास योजना | 1975-76 | बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास हेतु। |
| 2. | ग्रामीण युवा स्वरोजगार (ट्राइसेम) | 1976-77 | ग्रामीण युवाओं को तकनीकी प्रशिक्षण हेतु प्रशिक्षण देना। |
| 3. | मरुस्थल विकास कार्यक्रम | 1977-78 | मरुभूमि विस्तार प्रक्रिया नियंत्रण पर्यावरण संतुलन बनाये रखने हेतु। |
| 4. | अंत्योदय योजना | 1977-78 | गरीबी रेखा के नीचे वाले परिवारों को आर्थिक सहायता पहुंचाना। |
| 5. | काम के बदले अनाज योजना | 1978-79 | विकास प्रक्रियाओं के काम हेतु खाद्यान्न देना। |
| 6. | प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम | 1978-79 | प्रौढ़ों को साक्षर कर जाग्रत करना। |

छठी पंचवर्षीय योजना

- | | | | |
|----|--|---|---|
| 1. | ट्राइसेम 1979-80 | गरीब परिवार के युवाओं (18-35) को तकनीकी प्रशिक्षण हेतु लाभ। | |
| 2. | समन्वित ग्रामीण विकास 1980-81 | ग्रामीण परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाना। कार्यक्रम | |
| 3. | राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम | 1980-81 | ग्रामीण गरीबों को लाभकारी रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना। |
| 4. | ग्रामीण क्षेत्रों में महिला तथा बाल विकास (डवाकरा) | 1982-83 | ग्रामीण परिवारों की महिलाओं को स्वरोजगार के उपयुक्त अवसर प्रदान करना। |
| 5. | ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम | 1983-84 | भूमिहीन कृषकों व श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराना। |

सातवीं पंचवर्षीय योजना

- | | | | |
|----|---------------------|---------|---|
| 1. | इंदिरा आवास योजना | 1985-86 | अनुसूचित जाति/जनजाति के लोगों तथा मुक्त कराए गए बंधुआ श्रमिकों के लिए मकानों का निर्माण करना। |
| 2. | किशोरी बालिका योजना | 1985-86 | बालिकाओं के समग्र विकास को सुनिश्चित करने हेतु विशेष |

सुविधाएँ देना।

- | | | | |
|----|----------------------------|---------|---|
| 3. | व्यापक फसल बीमा योजना | 1985-86 | विभिन्न फसलों का बीमा कराने हेतु। |
| 4. | जवाहर रोजगार योजना | 1989-90 | गांव में गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले बेरोजगार स्त्री व पुरुषों को अतिरिक्त लाभकारी रोजगार देना। |
| 5. | सामाजिक सुरक्षा बीमा योजना | 1988-89 | दुर्घटना होने के पश्चात् आर्थिक राहत देने हेतु। |

आठवीं पंचवर्षीय योजना

- | | | | |
|----|---|---------|--|
| 1. | राष्ट्रीय महिला कोष | 1992-93 | गरीब महिलाओं की ऋण संबंधी जरूरतों को पूरा करना। |
| 2. | रोजगार आश्वासन को अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराना। | 1993-94 | गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले ग्रामीणों योजना |
| 3. | डवाकरा ;क्ब्त्।द्ध | 1992-93 | ग्रामीण महिलाओं को समूह में संगठित कर आत्मनिर्भर बनाने हेतु। |
| 4. | उन्नत टूलकिट्स योजना | 1993-93 | ग्रामीण शिल्पियों के कौशल में सुधार तथा उनका शहरों की ओर पलायन रोकना, आय में वृद्धि करना। |
| 5. | प्रधानमंत्री रोजगार योजना | 1994-95 | ग्रामीण एवं शहरी शिक्षित बेरोजगार युवकों को स्वयं उद्योग सेवा/व्यवसाय स्थापित करने हेतु ऋण उपलब्ध कराना। |

नौवीं पंचवर्षीय योजना

- | | | | |
|----|------------------------------------|-----------|--|
| 1. | जवाहर ग्राम समृद्धि योजना | 1999-2000 | गांवों में रोजगार तथा परिसम्पत्तियों का सृजन करना। |
| 2. | राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना | 1999-2000 | किसानों को उनकी फसल की बर्बादी से सुरक्षा प्रदान करना। |
| 3. | स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना | 1999-2000 | गांवों में गरीब लोगों को स्वरोजगार अपनाने हेतु प्रेरित करना। |
| 4. | अंत्योदय अन्न योजना | 2000-2001 | आर्थिक विपन्न लोगों को सस्ती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना। |
| 5. | जिला निर्धनता उन्मूलन | 2000-2001 | सर्वाधिक गरीबी वाले जिलों में गरीबी |

योजना	निवारण हेतु रोजगार के अवसर पैदा करना।
6 राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना	2005-2006 निर्धनता रेखा से नीचे के परिवारों को निःशुल्क विद्युत कनेक्शन देना।

दसवीं पंचवर्षीय योजना

दसवीं पंचवर्षीय योजना में भी नवीं पंचवर्षीय योजना में कही बात दोहराई गई थी कि पंचायतों को कारगर योजना बनाने व उन्हें लागू करने के लिये जरूरी कार्य, संसाधन और कर्मी हस्तांतरित करने की जरूरत है। राज्य सरकारों ने जिला नियोजन समितियों के गठन व उनको कार्यशील करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। इसके अतिरिक्त, जिला नियोजन समिति से पहली प्रक्रिया जो ग्राम सभा से लेकर जिला परिषद तक योजना बनाने के लिए करनी है, उस तरफ भी कुछ राज्य जैसे केरल को छोड़कर कोई खास प्रयास नहीं हुआ। दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान ही विकेंद्रीकरण की ओर एक महत्वपूर्ण कदम मई 2004 में पंचायती राज मंत्रालय का गठन था। इस मंत्रालय के अस्तित्व में आने के बाद विकेंद्रीकृत शासन, योजना व विकास को नई शक्ति प्रदान करने का अवसर प्राप्त हुआ। मंत्रालय के गठन के बाद नियोजन के क्षेत्र में अनेक सकारात्मक चीजें घटित हुईं।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना

वर्ष 2005 में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के लागू होने के समय पंचायती राज मंत्रालय ने वी0 रामचन्द्रन की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ दल का गठन किया जिसका उद्देश्य जमीनी स्तर पर नागरिकों की बुनियादी न्यूनतम जरूरतों की पूर्ति के लिए सभी पंचायत स्तरों पर जिला और उप-जिला योजनाएं तैयार करने के संबंध में अध्ययन कर अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करना था। पंचायती राज मंत्रालय और योजना आयोग ने विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट को स्वीकार करने के बाद अगस्त, 2006 में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में जिला योजनाओं के बारे में विस्तृत दिशा-निर्देश जारी किये। इस योजना में जोर देकर कहा गया है कि विकास प्रक्रिया की समावेशिता के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि आवश्यक जन सेवाओं की प्रदायगी के नियोजन, कार्यान्वयन और पर्यवेक्षण में स्थानीय जन प्रतिनिधियों को पूरी तरह से शामिल किया जाए। इस योजना में स्थानीय नियोजन, कार्यान्वयन और मॉनीटरिंग के केन्द्र में स्थानीय सरकारों को रखने के लिए आवश्यक सुधारों के बारे में विस्तार से बताया गया है। योजना में इस बात पर भी बल दिया गया है कि हर जिले को जिला विकास योजना तैयार करनी होगी जिसमें उसके शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों की योजनाओं को समेकित किया जाएगा और साथ ही विभिन्न योजनाओं के क्षेत्रीय आवंटन भी शहरी होंगे। इसमें आगे यह सुझाव भी दिया गया है कि तीन अवधियों -

- (1) दीर्घकालीन योजना 20-25,
- (2) अल्पावधिक एकीकृत विकास योजनाएं, और
- (3) विशिष्ट परियोजनाओं और स्कीमों से संबंधित योजनाओं के लिए अंततः संबद्ध योजनाओं की जरूरत है।

10.5 बोध प्रश्न-01

1. ग्रामीण विकास की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
2. विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास पर प्रकाश डालिये।

10.6 ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Rural Development Programs)

भारतवर्ष में चल रहे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है-

(1) प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास)

प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास) 4 अप्रैल, 2000 को शुरू की गई। इस योजना के तहत इंदिरा आवास योजना समूचे देश में लागू की गई। इस योजना के तहत वित्त मंत्रालय ने सीधे राज्य सरकारों को धनराशि जारी की। वर्ष 2001-02 के दौरान ग्रामोदय योजना के लिए 406.85 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया, जिसमें से 291.51 करोड़ रुपये वित्त मंत्रालय द्वारा जारी किए गए। इसके बाद भी प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना की योजना आयोग द्वारा पुनः समीक्षा की गई है। इस पुनः समीक्षा के क्रियाकलापों को आगे बढ़ाने व उससे प्रतिसूचना लेकर राज्यों व योजना आयोग ने आधारभूत न्यूनतम सेवा कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2002-03 में सीधे व्यवस्था करने का फैसला किया।

(2) समग्र आवास योजना

पहली अप्रैल, 1999 से समग्र आवास योजना की शुरुआत की गई है। यह एक व्यापक आवास योजना है, जिसका उद्देश्य आवास, स्वच्छता और पेयजल की समग्र व्यवस्था करना है। समग्र आवास योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के सम्पूर्ण पर्यावरण के साथ-साथ लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना है। विभिन्न ग्रामीण विकास गतिविधियों, जैसे- आवास निर्माण, स्वच्छता सुविधाएं तथा पेयजल योजनाओं का अभिसरण तथा उपयुक्त प्रौद्योगिकी के निरंतर प्रवेश तथा अभिनव विचारों द्वारा इनका क्रियान्वयन इस योजना का विशिष्ट उद्देश्य है।

प्रथम चरण में इस योजना को 24 राज्यों में 25 जिलों के प्रत्येक विकास खंड तथा एक केन्द्रशासित प्रदेश में लागू किया गया। इस योजना के अन्तर्गत इच्छित लाभार्थी ग्रामीण गरीब हैं, जो विशेषकर गरीबी-रेखा से नीचे हैं। वर्ष 1999-2000, 2000-01 और 2002-03 के दौरान इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए क्रमशः 2.67 करोड़ रुपये, 3.05 करोड़ रुपये और 0.32 करोड़ रुपये जारी किए गए।

(3) खाद्यान्न बैंक योजना

केन्द्र सरकार द्वारा ग्राम पंचायत स्तर पर 'खाद्यान्न बैंकों' को स्थापित करने की घोषणा वर्ष 2001 में की गई, योजना को वर्ष 2002 में लागू कर दिया गया है। देश में खाद्यान्नों के समृद्ध भण्डार के बावजूद भुखमरी से चिन्तित सरकार द्वारा ग्राम पंचायत स्तर पर खाद्यान्न बैंकों को स्थापित करने के प्रमुख उद्देश्य से इस योजना को प्रारम्भ करने का विचार किया गया।

योजना के अन्तर्गत देश भर में 1.14 लाख गांवों में 1100 करोड़ रुपये से इन खाद्यान्न बैंकों हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 100 करोड़ रुपये की धनराशि का 10 लाख टन गेहूं और चावल निःशुल्क उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई है तथा इस योजना के अन्तर्गत शीघ्र ही अतिरिक्त गांवों को आच्छादित करने का इरादा भी व्यक्त किया गया है।

(4) किसान ऋण कार्ड धारकों के लिए व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा योजना

किसान ऋण कार्ड धारकों के लिए मृत्यु या अपंगता की स्थिति में बीमा सुरक्षा प्रदान करने के लिए व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा योजना 10 अक्टूबर 2001 से शुरू की गई। इसके तहत इन कार्ड धारकों की दुर्घटना में मृत्यु या स्थाई अपंगता की स्थिति में 50,000 रुपये तथा आंशिक विकलांगता के लिए 25,000 रुपये की क्षतिपूर्ति की जाएगी। यह पॉलिसी 70 वर्ष तक की आयु वाले किसान ऋण धारकों के लिए है। प्रीमियम 17.85 रुपये प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष है। जबकि तीन साल की पॉलिसी के लिए प्रीमियम 45 रुपये प्रति व्यक्ति होगा।

(5) काम के बदले अनाज कार्यक्रम

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने जनवरी, 2001 में सूखा प्रभावित राज्यों के ग्रामीण इलाकों में काम के बदले अनाज कार्यक्रम शुरू किया। यह कार्यक्रम रोजगार गारन्टी योजना के तहत शुरू किया गया। बाद में इस योजना का विस्तार कर उसे केरल और बिहार के बाढ़/भारी वर्षा प्रभावित क्षेत्रों में भी लागू किया गया। इस कार्यक्रम के तहत अतिरिक्त संसाधन के तौर पर अनाज (गेहूं और चावल) के निःशुल्क आवंटन की व्यवस्था है।

(6) भूमि सुधार कार्यक्रम

स्वतंत्रता के बाद से अपनाई गई भूमि सुधार नीति का लक्ष्य समाजवादी सामाजिक ढांचे की व्यवस्था के लिए कृषि सम्बन्धों का पुनर्गठन, भूमि सम्बन्धों में शोषण समाप्त करना, किसान को जमीन प्रदान करने के सदियों पुराना लक्ष्य प्राप्त करना, ग्रामीण गरीबों के भूमि धारण के अधिकार को बढ़ाना, कृषि उत्पादन को बढ़ाना तथा कृषि अर्थ व्यवस्था का विविधीकरण करना है। प्रारम्भ से सितम्बर 2001 तक देश में 73.00 लाख एकड़ भूमि घोषित की गई, जिसमें से लगभग 64.95 एकड़ भूमि को अधिग्रहीत किया गया और 53.79 एकड़ भूमि 55.84 लाख लाभार्थियों में वितरित की गई, जिनमें से 36 प्रतिशत लोग अनुसूचित जातियों से सम्बन्धित थे तथा 15 प्रतिशत लोग अनुसूचित जनजाति के थे।

10.7 ग्रामीण विकास के वर्तमान कार्यक्रम (Current programs of Rural Development)

आजकल राष्ट्रीय प्रसार योजना या विकास कार्यक्रम को ग्राम समुदाय की महसूस की जाने वाली जरूरतों के आधार पर न बनाकर या समग्र विकास की परियोजना के रूप में न लेकर केन्द्र या राज्य स्तर से कार्यक्रमों का निर्माण व संचालन किया जाता है। इन कार्यक्रमों का विवरण निम्नवत है-

1. जवाहर रोजगार योजना: यह योजना वर्ष 1989 से क्रियान्वित की जा रही है। इसके उद्देश्य हैं-ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगार और अल्प रोजगार वाले पुरुष व महिलाओं दोनों के लिए अतिरिक्त रोजगार सृजन करना व सामुदायिक व सामाजिक परिसंपत्तियों का सृजन करना। इस योजना की वर्तमान व्यवस्था निम्नवत है-

(क) यह योजना एक केन्द्र प्रायोजित योजना के रूप में केन्द्र और राज्य के बीच 80:20 के अनुपात में लागत वहन करने के आधार पर क्रियान्वित की जाती है।

(ख) जिले को आवंटित निधियों का 65 प्रतिशत हिस्सा ग्राम पंचायत को, 15 प्रतिशत क्षेत्र पंचायत को तथा 20 प्रतिशत जिला ग्राम्य विकास अभिकरण द्वारा अंतर/खंड/ग्राम कार्य पर उपयोग किया जाता है।

(ग) ग्राम पंचायतों में निधियों का आवंटन जनसंख्या के आधार पर किया जाता है।

(घ) योजनांतर्गत श्रम एवं सामग्री का अनुपात 60:40 रखा जाता है।

जवाहर रोजगार योजना का एक अलग खाता बैंक शाखा में खोलकर यह धनराशि रखी जाती है। ग्राम पंचायत अधिकारी व ग्राम प्रधान के संयुक्त हस्ताक्षर से चैक द्वारा यह धनराशि आहरित की जाती है।

इस योजनांतर्गत कराए जाने वाले प्रमुख कार्य हैं-सिंचाई, तालाब, सड़क, पुलिया, मछली पालन, तालाब, ड्रेस, पाठशाला भवन, छात्रावास प्रशिक्षण केन्द्र, पर्यावरण सुरक्षा, भूमि एवं जल संरक्षण, पशुपालन सुधार, चरागाह विकास नवीकरण आदि। ग्राम पंचायतों की बैठक के माध्यम से योजनाओं का चयन किया जाता है।

योजना के क्रियान्वयन में कमियां-निम्नलिखित दोष इस योजना में अब तक परिलक्षित हुए हैं-

1. अधिकांश कार्य मिट्टी, वृक्षारोपण एवं हैंड पंप के कराए गए हैं जो ग्रामीण क्षेत्र में भौतिक सत्यापन के समय उपलब्ध नहीं हैं अथवा आंशिक रूप से नहीं पाए जा रहे हैं। इस प्रकार के कार्यों में धन के दुरुपयोग की अधिकाधिक संभावनाएँ हैं।
2. ग्राम स्तर पर अभिलेखों का रखरखाव सही नहीं है, फलतः एक ही मिट्टी के कार्य को कई बार प्रस्तावित व निर्मित दिखाकर धन का दुरुपयोग किया जा रहा है।
3. प्रधान द्वारा समय से धन के व्यय का सदुपयोग नहीं किया जा रहा है।
4. ग्राम प्रधान द्वारा इस योजना से कराए गए कार्यों की कोई व्यवस्था सुनिश्चित नहीं है। अतः बहुत बड़ी धनराशि से बहुत थोड़ा कार्य हो रहा है।

2. दस लाख कूप योजना

यह योजना केन्द्र द्वारा पुनर्निर्धारित योजना है। 80 प्रतिशत धनराशि केन्द्र तथा 20 प्रतिशत धनराशि राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाती है। योजना का उद्देश्य सिंचन क्षमता तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि करना है। इस योजना के लक्षित वर्ग अनुसूचित जाति/जनजाति, मुक्त बंधुआ श्रमिक, लघु एवं सीमांत कृषक हैं। दो-तिहाई भाग लक्षित वर्ग के व्यक्तियों को उपलब्ध कराना है। सामूहिक लाभों की भूमि विकास एवं जल निकासी आदि की योजनाओं में योजना के अंतर्गत कम से कम दस कृषक होने चाहिए, जिसमें पांच कृषक अनुसूचित जाति तथा 25 प्रतिशत भूमि अनुसूचित जाति की होनी चाहिए। चूंकि योजना का उद्देश्य सिंचन क्षमता में वृद्धि करना है, इसलिए व्यक्तिगत ट्यूबवैल स्थापित कराकर लाभार्थियों को उपलब्ध करा दिया जाए। इसमें 50 प्रतिशत अनुसूचित जाति तथा 50 प्रतिशत लघु सीमांत कृषकों को भी लाभ दिया जाए।

3. सुनिश्चित रोजगार योजना

भारत सरकार द्वारा गैर-कृषि गांव के गरीब परिवारों को लाभदायक व श्रमपूरक रोजगार उपलब्ध कराना इस योजना का मूल उद्देश्य है। इच्छुक गरीब परिवार को इस योजना में लाभ देने के लिए विकास खण्ड द्वारा पंजीकृत किया जाता है तथा परिवार के दो व्यक्तियों को वर्ष में 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराने की व्यवस्था कराने का दायित्व विभिन्न कार्यकारी संस्थाओं को दिया गया है। यह कार्यकारी संस्थाएँ इस योजना के अन्तर्गत पंजीकृत श्रमिकों के कार्य न कराकर ठेकेदारी से कार्य कराती हैं जिसके फलस्वरूप योजना का मूल स्वरूप ही नष्ट हो जाता है। वास्तव में इस योजना का उद्देश्य यह था कि स्थानीय मजदूरों को ग्राम में ही रोजगार उपलब्ध हो, ताकि शहरों की तरफ इनका पलायन रोका जा सके, परन्तु ठेकेदारी प्रथा में ठेकेदार बाहरी मजदूरों को लाकर मनमाने तरीके से कार्य कराते हैं। इस प्रकार की कमी को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि कार्यान्वयन पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से किया जाए। सुनिश्चित रोजगार योजना की 80 प्रतिशत धनराशि ग्राम पंचायत एवं क्षेत्र पंचायत के माध्यम से व्यय किया जाना अनिवार्य किया जाए। शेष 20 प्रतिशत धनराशि बड़े कार्यों के लिए जिला स्तर पर रोककर शासन द्वारा निर्धारित मानकों के अनुरूप कार्य कराया जाना चाहिए।

4. एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम

यह योजना दो अक्टूबर, 1980 से किग्रान्वित की जा रही है। योजना का मूल उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभान्वित करार गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। वर्तमान समय में गरीबी रेखा की सीमा प्रति परिवार ₹0 11,000.00 वार्षिक आय निर्धारित की गई है। लाभार्थियों का चयन ग्राम पंचायत की खुली बैठक के माध्यम से वित्तीय वर्ष के प्रारंभ में ही किया जाता है। वित्त पोषण की व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम पंचायत की खुली बैठक में

चयनित लाभार्थी की ऋण पत्रावली विकास खंड स्तर से तैयार कर सेवा क्षेत्र से संबंधित बैंक शाखा में प्रेषित की जाती है। बैंक शाखाओं का यह दायित्व है कि प्रार्थना पत्र प्राप्ति के 15 दिन के अंदर उसका निस्तारण करें। लाभार्थियों को नकद भुगतान किया जाता है। वर्तमान समय में लाभार्थी अपनी इच्छानुसार परिसंपत्ति क्रय करता है। क्रय के पश्चात उसका समायोजन बैंक शाखा को प्रस्तुत करता है। इस योजना के क्रियान्वयन में निम्नलिखित कमियाँ हैं-

1. बैंक शाखाओं में प्रेषित पत्रावलियों का निस्तारण निर्धारित समय सीमा अर्थात् 15 दिन के अंदर नहीं किया जाता है, जिससे लाभार्थी समय से लाभान्वित नहीं हो पाता।
2. विभिन्न वर्गों के लिए आरक्षित प्रतिशत के कारण वास्तविक लाभार्थी लाभान्वित नहीं हो पाते।
3. गरीबी की सीमा वर्तमान आर्थिक व्यवस्था में कम है।
4. समाज के अनुदानखोर के रूप में एक वर्ग प्रभावी है, जो लाभ प्राप्त करने के लिए सदैव उत्सुक रहता है।

5. टैनिंग आफ रूरल यूथ्स फॉर सेल्फ इम्प्लॉयमेंट (ट्राइसेम)

यह कार्यक्रम एकीकृत ग्राम्य विकास योजना का उपकार्यक्रम है। यह कार्यक्रम केन्द्र तथा राज्य सरकार की समान भागीदारी से 15 अगस्त, 1979 से प्रारंभ किया गया है। इसी कार्यक्रम में एकीकृत ग्राम्य विकास योजना के अन्तर्गत चयनित परिवार के युवाओं को विभिन्न टेबुल्स में प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि वे स्वतः स्ववेतन परिवार में नियोजित होकर आय में वृद्धि कर गरीबी रेखा से ऊपर उठ सकें। इस योजनांतर्गत युवाओं को प्रशिक्षण जिला ग्राम्य विकास अभिकरण राजकीय/गैर राजकीय संस्थाओं के माध्यम से दिया जाता है। इस योजना की कमियाँ निम्नलिखित हैं-

1. इस योजना में चयन के समय स्कूल/कॉलेज में पढ़ने वाले छात्रों का चयन कर लिया जाता है, जो प्रशिक्षण मात्र मानदेय पाने के लिए लेते हैं।
2. प्राइवेट संस्थाओं द्वारा प्रशिक्षण देने पर वास्तविक प्रशिक्षण नहीं हो पाता, क्योंकि उनके पास अवस्थापना सुविधाएँ एवं वेतनभोगी प्रशिक्षकों का अभाव होता है।
3. प्रत्येक विकास खंड में राजकीय प्रशिक्षणदायी संस्थाओं का अभाव है।

6. उन्नत टूल किट

उन्नत टूल किट की योजना वर्ष 1992-93 से प्रारंभ की गई है। योजना का उद्देश्य दस्तकारों की उत्पादकता में वृद्धि करना एवं कार्यकुशलता तथा जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार करना है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले दस्तकारों को लाभान्वित करना लक्षित है। इन दस्तकारों का चयन ग्राम पंचायत की खुली बैठक में किया जाता है। दस्तकारों की मांग एवं व्यवसाय के अनुसार किट दी जाती है। इस किट को देने में 10 प्रतिशत धनराशि लाभार्थी से अंशदान के रूप में ली जाती है। किट का अधिकतम मूल्य 2000.00 रुपये तक रखा जाता है।

7. राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम

राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य वैकल्पिक ऊर्जा सृजन के साथ साथ ग्रामीण क्षेत्रों में पशुधन से प्राप्त गोबर को उच्च कोटि के कम्पोस्ट खाद के रूप में परिवर्तित करना है। यह कार्यक्रम घरेलू महिलाओं को परंपरागत चूल्हे पर खाना बनाते समय धुएँ से बचाकर स्वास्थ्य, सुरक्षा में सहायक सिद्ध हुआ है, वहीं ग्रामीण कृषकों के कृषि उपज की वृद्धि में भी वरदान साबित हुआ है।

8. राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम

योजना का प्रमुख उद्देश्य ईंधन संरक्षण, रसोईघर से धुआँ कम करना, ईंधन की बचत करना एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर को बढ़ाना है। इस कार्यक्रम में परंपरागत अकुशल चूल्हों के स्थान पर धुम्ररहित उन्नत चूल्हों की स्थापना की जाती है।

9. ग्रामीण महिला एवं बालोत्थान योजना

ग्रामीण महिला एवं बालोत्थान योजना (डी0 डब्लू0 सी0 आर0 ए0) एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम की एक उपयोजना है, जो वर्ष 1983-84 से कार्यान्वित की जा रही है। महिला की आय, भरण-पोषण, शिक्षा तथा उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाते हुए बच्चों के स्वास्थ्य एवं विकास की समुचित जानकारी देना योजना का उद्देश्य है। गरीबी रेखा के नीचे आय वर्ग की महिलाओं का एक गुच्छे के रूप में एक विशिष्ट कार्य योजना के तहत चयन किया जाता है। उक्त चयन ग्राम पंचायत की खुली बैठक में किया जाता है। साथ-साथ यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि उक्त महिलाएँ अपनी आय का स्रोत बनाने हेतु कौन सा कार्य करेंगी। समूह की महिलाओं की उम्र 18 से 35 वर्ष होनी चाहिए। उक्त समूह को पंजीकृत कराकर टेब्ड के अनुसार व्यक्तिगत या समूह के रूप में ऋण तथा अनुदान उपलब्ध कराया जाता है। समूह को प्रशिक्षण भी दिया जाता है। प्रशिक्षण के दौरान महिलाओं को मानदेय दिया जाता है।

10.8 ग्रामीण विकास की अनुपम योजना (Unique Schemes of Rural Development)

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 5 सितंबर, 2005 से लागू किया गया है। 31 दिसंबर, 2009 से इस अधिनियम में संशोधन करके इसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 का नाम दिया गया है। अब इसे आम तौर पर महात्मा गांधी नरेगा के रूप में जाना जाता है। प्रथम वर्ष में इसके अंतर्गत 200 जिले सम्मिलित किए गए थे। इसके बाद के वर्ष में इसमें अन्य 130 जिलों को भी शामिल किया गया था। अंततः इस कार्यान्वयन के तीसरे वर्ष अर्थात् 2008-09 में इसे 285 जिलों में लागू किया गया। इसी दौरान पुराने जिलों के विभाजन के फलस्वरूप अनेक नए जिले बने थे। इस प्रकार, वर्तमान में महात्मा गांधी नरेगा के अंतर्गत शामिल जिलों की संख्या 619 है।

उद्देश्य: महात्मा गांधी नरेगा के अंतर्गत प्रत्येक ग्रामीण परिवार जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के इच्छुक हैं, को एक वित्तीय वर्ष (अर्थात् अप्रैल से मार्च के बीच में) में 100 दिनों के मजदूरी रोजगार की कानूनी गारंटी का प्रावधान किया गया है। ये मजदूरी दरें ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अधिसूचित की गई हैं।

आवेदन की प्रक्रिया: क्षेत्र में रहने वाले किसी ग्रामीण परिवार के सभी सदस्य सदस्य, जो अकुशल शारीरिक कार्य करने के इच्छुक हैं, रोजगार के लिए आवेदन कर सकते हैं। यदि कोई व्यक्ति किसी कार्य में पहले से ही नियोजित/कार्यरत हो, उसे भी इसके अंतर्गत रोजगार की मांग करने का अधिकार है। अधिनियम के तहत महिलाओं को प्राथमिकता दी गई है। कम से कम एक तिहाई लाभार्थी महिलाएँ होंगी जिन्होंने योजना के अंतर्गत पंजीकरण कराया है और रोजगार के लिए अनुरोध किया है। योजना का लाभ पाने के इच्छुक परिवार को निर्धारित लिखित फार्म के जरिए अथवा मौखिक रूप से अपने आपको पंजीकरण के लिए आवेदन करना होता है। पंजीकरण फार्म और प्रक्रिया निःशुल्क है। पंजीकरण के लिए आवेदन ग्राम पंचायत या विकासखण्ड कार्यालय को किया जाएगा। पंजीकरण प्रमाणित करने के लिये पंचायत यह सत्यापित करती है कि आवेदक उस गांव में रहता है और वह वयस्क व्यक्ति है। पंजीकरण की इकाई परिवार है। सत्यापन के पश्चात ही ग्राम पंचायत परिवार के जाँब कार्ड जारी करेगी।

जॉब कार्ड का अर्थ: जॉब कार्ड एक मूल कानूनी दस्तावेज है जो पंजीकृत परिवार को गारंटीयुक्त रोजगार की मांग करने के लिए समर्थ बनाता है। जॉब कार्ड आवेदन करने की तारीख से 15 दिनों के भीतर जारी किया जाता है और इसकी मान्यता पांच वर्षों के लिए है। पारिवारिक जॉब कार्ड में प्रत्येक पंजीकृत सदस्य का नाम और फोटो रहेगा। जॉब कार्ड और फोटो आवेदक को निःशुल्क मिलता है।

बेरोजगारी भत्ता: यदि रोजगार की मांग करने वालों को आवेदन देने की तारीख से अथवा जिस तारीख से रोजगार की मांग की गई है, जो भी बाद में हो, 15 दिनों के भीतर रोजगार नहीं मिलता है तो अधिनियम के अनुसार दैनिक बेरोजगारी भत्ता देना होता है। यदि आवेदक अधिसूचित होने के 15 दिनों के भीतर कार्य के लिये रिपोर्ट नहीं करता/करती है तो वह बेरोजगारी भत्ते का हकदार नहीं होगा/होगी। तथापि आवेदक कार्य के लिए पुनः आवेदन कर सकता है।

कार्यस्थल सुविधाएँ: कार्यस्थल सुविधाओं में स्वच्छ पेयजल, बच्चों के लिये ठहरने का स्थान और विश्राम की अवधि, कार्य से जुड़ी छोटी छोटी जोखिमों और स्वास्थ्य संबंधी अन्य परेशानियों के आपात उपचार के लिए प्राथमिक चिकित्सा बक्सा शामिल है। यदि छह वर्ष से कम उम्र के पांच से अधिक बच्चे हों तो उक्त बच्चों की देखभाल के लिए एक व्यक्ति को काम पर लगाए जाने का प्रावधान है।

रोजगार उपलब्ध कराने के लिए काम का चयन: स्थायी परिसम्पत्तियों का सृजन और ग्रामीण गरीबों के जीविकोपार्जन संसाधन आधार को सुदृढ़ करना योजना का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। प्राथमिकता के अनुसार स्वीकृत कार्यों की विभिन्न श्रेणियां निम्न प्रकार हैं

- जल संरक्षण और जल एकत्रीकरण
- सूखारोधन (वनीकरण और वृक्षारोपण)
- सश्रम और लघु सिंचाई कार्य सहित सिंचाई नहर।

अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के परिवारों के स्वामित्व वाली जमीन अथवा बी०पी०एल० परिवारों या भूमि सुधार के भू-लाभार्थियों या भारत सरकार की इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत लाभार्थियों या कृषि ऋण अधित्याग और ऋण योजना 2008 में परिभाषित छोटे किसानों या सीमान्त किसानों की जमीन में सिंचाई सुविधाएँ, बागवानी, पौधारोपण और भूमि विकास की सुविधाएँ मुहैया कराना।

- तालाबों से गाद निकालने सहित परंपरागत जल निकायों का नवीनीकरण।
- भूमि विकास।
- जल जमाव वाले क्षेत्रों में जल निकासी सहित बाढ़ नियंत्रण और संरक्षण कार्य।
- बारहमासी सड़क संपर्क उपलब्ध कराने के लिए गांवों को सड़कों से जोड़ना।
- भारत निर्माण राजीव गांधी सेवा केन्द्र का निर्माण।
- अन्य कार्य जिन्हें राज्य सरकार के परामर्श से केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाए।

मजदूरी भुगतान: रोजगार प्राप्त व्यक्ति अधिसूचित मजदूरी दर के अनुसार मजदूरी प्राप्त करेगा/करेगी। ये मजदूरी दरें ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अधिसूचित की गई हैं। मजदूरी प्रत्येक सप्ताह अथवा किसी भी स्थिति में ऐसे कार्य किए जाने की तारीख से एक पखवाड़े के भीतर दी जायेगी। कामगारों को प्रायः किए गए कार्य और समय अर्थात् एक घंटे की विश्रामावधि सहित सात घंटे के कार्यों के आधार पर भुगतान किया जाता है। दरों की अनुसूची के अनुसार कार्य की गणना की जाती है। मजदूरी कर्मियों को बीमा कवर हेतु जीवन बीमा निगम की जनश्री बीमा योजना की श्रेणी में रखा गया है। कर्मियों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के लाभ उपलब्ध कराने का भी प्रयास किया जा रहा है।

तालमेल: कार्यक्रमों के बीच तालमेल एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे मौजूदा योजनाओं तथा संसाधनों को एकजुट रखा जाता है बिना अतिरिक्त व्यय एवं बजट प्रावधान के। वास्तव में तालमेल का मुख्य आधार पंचायती राज संस्थाओं विशेषकर ग्राम सभा तथा ग्राम पंचायतों की मुख्य भूमिका के साथ विकेंद्रीकरण तथा सामुदायिक

भागीदारी है। तालमेल प्रक्रिया से संसाधनों तथा क्रियाकलापों में सहयोग के साथ-साथ नियोजन और कार्यान्वयन में प्रभावी गुणवत्ता आती है, जिससे कार्य पुख्ता होता है।

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने विभिन्न योजनाओं एवं विशिष्ट कार्यक्रमों तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के राष्ट्रीय वनीकरण कार्यक्रम और अन्य योजनाओं, जल संसाधन मंत्रालय की योजनाओं, पी०एम०जी०एस०वाई० (ग्रामीण विकास विभाग), एस०जी०एस०वाई० (ग्रामीण विकास विभाग), कृषि एवं मात्स्यिकी मंत्रालय तथा कृषि मंत्रालय की योजनाओं के साथ महात्मा गांधी नरेगा के तालमेल के लिए दिशा-निर्देश बनाए गए हैं और उनका प्रचार-प्रसार किया गया है। वन और पर्यावरण मंत्रालय, जल संसाधन मंत्रालय और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा 23 राज्यों में 150 प्रायोगिक जिलों को निर्धारित किया गया है। इन जिलों में तालमेल संबंधी स्थिति प्रगति की नियमित निगरानी की जाती है।

पारदर्शिता और जवाबदेही संबंधी प्रावधान

- ओम्बड्समैन-चयन समिति की सिफारिशों पर राज्य सरकार ओम्बड्समैन को नियुक्त करेगी। ओम्बड्समैन केन्द्र या राज्य सरकार के नियंत्रण से मुक्त स्वतंत्र एजेंसी होगी।
- सामाजिक लेखा परीक्षा-ग्रामीण विकास मंत्रालय ने ग्राम पंचायतों द्वारा सामाजिक लेखा परीक्षा कराने की प्रक्रिया को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है और राज्यों को निर्देश दिए हैं कि वे इसे प्रयोजनार्थ आवश्यक व्यवस्था करें। सामाजिक लेखा- परीक्षा कराने संबंधी प्रक्रियाविधियों का प्रावधान करने के लिए इस अधिनियम में संशोधन किया गया था।
- हेल्पलाइन-ग्रामीण विकास मंत्रालय ने शिकायत प्राप्त करने और अधिनियम के अंतर्गत मजदूरों की हकदारी एवं अधिकारियों के संरक्षण के बारे में मंत्रालय से पूछताछ करने के लिए एक निःशुल्क राष्ट्रीय हैल्प लाइन 1800110707 शुरू की है। ये शिकायतें कार्यवाही के लिए राज्य सरकारों को भेजी जाती है और मंत्रालय इनकी निगरानी करता है। मंत्रालय की हेल्पलाइन के अलावा राज्य और जिला भी शिकायतें प्राप्त करने के लिए हेल्पलाइन बना रहे हैं।

10.9 बोध प्रश्न-02

1. प्रमुख ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के नाम बताइये।
2. ग्रामीण विकास के नवीनतम कार्यक्रमों के नाम बताइये।
3. महात्मा गांधी नरेगा का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कीजिए।

10.10 सूचना प्रौद्योगिकी तथा ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Information Technology and Rural Development Program)

भारत जैसे विकासशील देश के गांवों की तरफ़ी में आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी की उपयोगिता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भौगोलिक जटिलताओं, संसाधनों के अभाव और सम्पर्क साधनों की कमी से जूझते भारत के गांव आधुनिक सुविधाओं तथा ज्ञान-विज्ञान में पिछड़े होने के कारण दुनिया के विकसित देशों से सुविधा और जानकारी के मामलों में काफी पीछे हैं। संचार प्रौद्योगिकी के रूप में आज ऐसी संभावनायें सुलभ हो गयी हैं जिनके सहयोग से हम भारतीय गांवों को अधुनातन जानकारी, ज्ञान विज्ञान की सूचनाओं को आसानी से उपलब्ध कराकर एक क्रान्तिकारी आयाम प्रदान कर सकते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी पर आधारित प्रमुख ग्रामीण विकास योजनाएँ या कार्यक्रम निम्नलिखित हैं-

(1) ई-गवर्नेंस परियोजना-दिसम्बर, 2002 में तत्कालीन सूचना टेक्नोलॉजी और संचार मंत्री ने देश के सभी राज्यों के एक-एक जिले में ई-गवर्नेंस परियोजना लागू करने के लिए 309 करोड़ रुपये लागत की

महत्वाकांक्षी योजना का उद्घाटन किया। ई-गवर्नेंस लोकतांत्रिक सरकार के कामकाज के हर स्तर पर जनता और प्रशासन के बीच आने वाली बाधाओं को दूर करने का सर्वोत्तम विकल्प है। ई-गवर्नेंस प्रशासन के जनता के अनुकूल, पारदर्शी और जवाबदेह बनाने की दिशा में एक जोरदार प्रयास है।

(2) इंटरनेट सेवा योजना-देश के बहुसंख्य गांवों में तो नहीं, किन्तु अनेक जगहों पर इंटरनेट का प्रयोग शुरू भी हो गया है जिसके अपेक्षित परिणाम सामने आ रहे हैं। तमिलनाडु के अरागुंडा गांव में इंटरनेट के जरिए ही आम ग्रामीण अब उच्चस्तरीय चिकित्सा सुविधाएं हासिल कर रहे हैं। झांसी (उत्तर प्रदेश) के पुनावली कला गांव में भी लोग इंटरनेट के जरिए ही अब अपने दुग्ध उत्पादों को उचित मूल्य पर बेच रहे हैं और बिचौलियों के शिकंजे के बाहर आ सके हैं। भटिंडा (पंजाब) तथा वायनाड (केरल) के कई गांव भी अब इंटरनेट से प्राप्त जानकारी के बूते अपना नक्शा बदल रहे हैं। ग्रामीण विकास में अत्यधिक सहायक होने के कारण इंटरनेट से ग्रामीणजन न केवल प्रभावित हैं बल्कि बहुत आशान्वित भी हैं।

(3) 'फ्रेंड्स (फास्ट, रिलाएबल, इन्सटेंट, एफीशेंट नेटवर्क फार डिस्बर्समेंट सर्विसेज) परियोजना'- केरल में नागरिकों को करों के भुगतान में होने वाली परेशानियों को दूर करने के लिए सूचना टैक्नोलॉजी पर आधारित यह परियोजना शुरू की गई है। इससे बिचौलियों, रिश्वतखोरी, देरी और लंबी लंबी लाइनों को समाप्त करने में मदद मिली है। एक वर्ष के अन्तराल में यह परियोजना केरल के 13 जिलों के 1.3 करोड़ लोगों की पहुंच के दायरे में आ गई है। फ्रेंड्स के पीछे मूल सोच यही है कि नागरिकों को मूल्यवान ग्राहक माना जाए।

(4) 'सौकार्यम' ई-सेवा परियोजना-यह परियोजना आन्ध्र प्रदेश के लोगो में तत्काल लोकप्रिय हो गई है। यह विशाखापतनम के बंदरगाह शहर में लागू है। इसके माध्यम से संपत्ति कर का ऑन लाइन भुगतान किया जा सकता है तथा सरकार तथा स्थानीय निकायों की कई परियोजनाओं का ब्यौरा देखा जा सकता है।

(5) मोबाइल डाकिया योजना-यह योजना पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के जन्म दिन के मौके पर 24 दिसम्बर, 2002 को शुरू की गई थी। यह योजना फिलहाल प्रयोग के तौर पर देश के करीब 10,000 गांवों में ही शुरू की गई है। इन गांवों तक पहुंचने का जिम्मा 2,000 डाकघरों के जरिए ग्रामीण डाकियों को सौंपा गया है। इसके लिए शुरू में पांच करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण डाकसेवकों को वायरलेस इन लोकल लूप प्रौद्योगिकी से संचालित होने वाले मोबाइल टेलीफोन उपकरण दिये जा रहे हैं जिनसे वह आवंटित गांवों में डाक पहुंचाने के साथ ही साथ बारी-बारी से हरेक घर पर पहुंचकर, उन्हें परदेश गये अपने सगे-सम्बन्धियों से बात कराने की सुविधा प्रदान करेंगे। इन सभी फोन उपकरणों पर एस०टी०डी० और आइ०एस०डी० सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है।

(6) ई-चौपाल-गांव में चौपाल एक ऐसा सार्वजनिक स्थान होता है, जहां सार्वजनिक से लेकर व्यक्तिगत खबरों तक का आदान-प्रदान होता है, जहां सामुदायिक महत्व के निर्णय लिए जाते हैं, जहां ग्रामीणजन अपने खाली समय में एकत्र होकर एक दूसरे की कहते सुनते हैं। ये चौपाल ग्रामीण संप्रेषण की एक महत्वपूर्ण इकाई हैं। समय के साथ-साथ चौपालों की संप्रेषण व्यवस्था को भी आधुनिक संचार प्रौद्योगिकी से जोड़ दिया गया है जिससे रेडियो व टेलीविजन जैसे इलैक्ट्रानिक माध्यमों से उपयोगी सूचनाओं का प्रचार व प्रसार ग्रामीणों के बीच हो सके। इस योजना के अन्तर्गत गांवों की चौपालों में सामुदायिक रेडियो तथा टेलीविजन सैट मुहैया कराए गए हैं।

ई-चौपाल दरअसल आधुनिकतम संचार सुविधाओं से लैस एक प्रकार की सहकारी समिति है, जिसका उद्देश्य मूलतः किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकें अपनाने, फसल की उत्पादकता बढ़ाने, कृषि विविधीकरण आदि से सम्बन्धित जानकारी देने से लेकर उन्हें उनकी फसलों की उचित कीमत दिलाना है। कृषि और बाजार की सुविधाओं के अतिरिक्त ई-चौपाल ग्रामीण विकास के प्रति भी समर्पित है। इसके माध्यम से अनेक स्वयंसेवी

संस्थाएं पशु नस्ल सुधारीकरण, जल संग्रहण तकनीकों, स्वयं सहायता समूहों जैसे मुद्दों पर काम कर रही हैं। अब तक उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र व आन्ध्र प्रदेश राज्यों में कुल 5,000 ई-चौपालों की स्थापना हो चुकी है जिनके तहत कुल 29,5000 गांवों के लगभग 30 लाख कृषक जुड़े हुए हैं।

(7) 'किसान चैनल' तथा 'किसान कॉल सेंटर'-ये काल सेंटर देशभर में सप्ताह में सातों दिन और 24 घंटे किसानों को खेती और मौसम सम्बन्धी उनके सवालों का उनकी स्थानीय भाषा में जवाब देने के लिए शुरू किए गए हैं। खास बात यह है कि इसका नम्बर 1551 पूरी तरह टोल फ्री है। यानि कॉल करने पर किसान का कोई खर्चा नहीं होगा। दिन के समय तो ऑनलाइन सेवा है और रात के समय की जाने वाली कालें दर्ज करके उनका डाक द्वारा समाधान करने की व्यवस्था की गई है। ये कॉल सेंटर शुरू हुए अभी ज्यादा समय नहीं हुआ है, फिर भी देश के ऐसे आठ किसान कॉल सेंटरों में दो हजार से ज्यादा टेलीफोन रोज आ रहे हैं। दिल्ली का यह केन्द्र तीन राज्यों राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली के किसानों को सेवा देता है। इसी प्रकार किसान चैनल कृषकों को कृषि से सम्बन्धित ज्ञान उपलब्ध कराता है।

(8) ग्रामीण सचिवालय-मध्य प्रदेश शासन ने ग्रामीणों की समस्याओं का गांव में ही त्वरित निराकरण करने के लिए तीन स्तरीय सचिवालय स्थापित किए हैं। यह सचिवालय बहुत ही कारगर सिद्ध हो रहे हैं। मध्य प्रदेश शासन द्वारा अगस्त, 2004 से लागू की गई ग्रामीण सचिवालय व्यवस्था के अन्तर्गत निकाय जिले में 66 ग्रामीण सचिवालय, 12 उप विकासखण्ड स्तरीय एवं 3 विकास खंड स्तरीय सचिवालय व्यवस्था के बेहतर परिणाम परिलक्षित होने लगे हैं। ग्रामीण सचिवालयों के माध्यम से शासन ने स्वयं ग्रामीणों के द्वार पर पहुंचकर उनकी समस्याओं के निराकरण की सार्थक पहल की है। इसका लाभ ग्रामीणों को मिल रहा है।

10.11 ग्रामीण विकास की रणनीतियां (Rural Development Strategies)

भारत में आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया सन 1951 में आरम्भ हुई। तब से अब तक 11 पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हो चुकी हैं और 12वीं पंचवर्षीय योजना इस समय चल रही है। ग्रामीण विकास की रणनीतियों के तहत विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास से सम्बन्धित अनेक कार्यक्रम संचालित किए गए। इन योजनाओं और कार्यक्रमों के द्वारा आर्थिक क्रियाओं तथा ग्रामीण विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इन क्रियाओं को इस प्रकार नियंत्रित किया जाता है कि पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। वास्तव में 'रणनीति' से तात्पर्य किसी कार्य योजना अथवा कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए कारगर कदम उठाना तथा समय-समय पर उसकी प्रगति की समीक्षा करना तथा समुचित निगरानी की व्यवस्था करना, उसकी खामियों को दूर करना तथा उस योजना से सम्बन्धित अधिकारियों की जवाबदेही निश्चित करना है।

ग्रामीण विकास की रणनीतियों के सफल क्रियान्वयन के फलस्वरूप ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की उपयोगिता बढ़ी है। इन कार्यक्रमों ने ग्रामीण समाज के निर्धन, बेरोजगार, अर्ध बेरोजगार एवं सीमान्त कृषकों एवं श्रमिकों की दयनीय स्थिति को परिवर्तित करने का श्रेय प्राप्त किया है। असंख्य ग्रामीण व्यक्ति जो गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे थे, आज उनकी आर्थिक स्थिति में काफी सुधार हुआ है। आज इस रेखा से कहीं ऊँची उनकी स्थिति है। उनकी जीवन शैली, सोच व मानसिकता में समयानुकूल परिवर्तन आया है। यह विकास का एक सुखद लक्षण है। ग्रामीणों ने विकास कार्य में रुचि लेनी आरम्भ की है। अब वे ग्रामीण विकास की योजनाओं और कार्यक्रमों के महत्व को समझने लगे हैं। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में उनकी सहभागिता पूर्ण निष्ठा से होने लगी है।

गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को प्राथमिकता-सरकारी रणनीति के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है। प्रत्येक वर्ष इन कार्यक्रमों की समीक्षा कर उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करने के प्रयास किए गए हैं। इसके परिणाम बहुत उत्साहजनक रहे हैं। देश की औसत आबादी के सम्बन्ध में अगर

हम देखें तो ग्रामीण गरीबी वर्ष 1973-74 में 56.44 प्रतिशत थी, जो घटकर वर्ष 1993-94 में 37.27 प्रतिशत रह गई। वर्ष 1999-2000 में इसमें और गिरावट आई और यह 27.09 प्रतिशत रह गई। लेकिन यह चिन्ता का विषय है कि अब भी ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 19.30 करोड़ आबादी गरीब है। जिसकी वजह से गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की समीक्षा और पुनर्गठन किया गया है। स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना और अन्य कार्यक्रमों का पुनर्गठन इसी समीक्षा का नतीजा है। स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना 1 अप्रैल, 1999 को शुरू की गई। यह योजना कार्यक्रम क्रियान्वयन की दृष्टि से पहले की योजनाओं से भिन्न है।

इसके अतिरिक्त 25 सितम्बर, 2001 को सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना शुरू की गई। इसके तहत कुल वार्षिक खर्च 10,000 करोड़ रुपये रखा गया। इस योजना के तहत हर वर्ष प्रत्येक राज्य और केन्द्र शासित प्रदेश को 5,700 करोड़ रुपये मूल्य का 50 लाख टन अनाज मुफ्त उपलब्ध कराया जाना है। करीब 5,000 करोड़ रुपये की राशि मजदूरी और परिसम्पत्तियों के लिए खर्च की जाएगी। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक वर्ष लगभग 100 करोड़ श्रम दिवसों के बराबर रोजगार के अवसर उपलब्ध होने की उम्मीद है। इसमें लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए इस कार्यक्रम को पंचायती राज संस्थाओं के जरिए चलाया जाएगा।

सरकार अपनी रणनीति के तहत विभिन्न राज्यों व संघ शासित प्रदेशों में चल रहे सभी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के मूल्यांकन व निगरानी पर विशेष जोर देती है। राज्यों व संघ शासित प्रदेशों को कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में अधिक पारदर्शिता लाने व उन पर निगरानी रखने के लिए राज्य व जिला स्तर पर सतर्कता व निगरानी समितियों के गठन की सलाह दी गई है। इन समितियों में सांसद, विधायक, पंचायती राज संस्थाओं और गैर सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि शामिल हैं।

10.12 ग्रामीण विकास की रणनीतियां: एक नजर में (Rural Development Strategies: At a Glance)

14 नवम्बर, 2004 को प्रधानमंत्री ने आन्ध्र प्रदेश में रंगारेड्डी जिले के अलूर गांव में 'काम के बदले अनाज' का राष्ट्रीय कार्यक्रम प्रारम्भ किया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत देश के चुने हुए 150 सबसे पिछड़े जिलों में आमदनी बढ़ाने वाले अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराना है। इस योजना का राष्ट्रीय कार्यक्रम पूरी तरह केन्द्र द्वारा संचालित कार्यक्रम है। इसमें जल संरक्षण, सूखे से बचाव, बाढ़-नियंत्रण, ग्रामीण विकास और गांवों को सड़कों से जोड़ने पर जोर दिया जाता है।

-रोजगार गारंटी विधेयक के तहत प्रत्येक ग्रामीण परिवार के कम से कम एक सक्षम व्यक्ति को मजदूरी की न्यूनतम दर पर परिसम्पत्तियों से सृजन सम्बन्धी सार्वजनिक कार्यों में साल में कम से कम 100 दिन के रोजगार की कानूनी गारंटी मिल गई है।

-सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना नये जोश से लागू की जा रही है और इस पर इसके स्थानीय लाभार्थियों द्वारा कड़ी निगरानी और सतर्कता बरतने के लिए प्रणाली बनाई जाती है।

-स्व-रोजगार के तमाम पहलुओं को ध्यान में रखने के लिए 'स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्व-रोजगार योजना' के अंतर्गत एक समग्र कार्यक्रम बनाया गया है। इसके लागू होने के बाद 19.79 लाख स्वयं-सहायता समूह गठित किये गये हैं और स्व-रोजगार के लिए 45 लाख लोगों को 9669.12 करोड़ रुपये की सहायता दी गयी है।

-ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं के प्रावधान की योजना के अन्तर्गत 2004-05 में परीक्षण के तौर पर 6 परियोजनाएं शुरू की गईं।

-10 राज्यों ने 1,000 से अधिक आबादी वाली सभी बस्तियों को सड़क सम्पर्क से जोड़ दिया है। ये राज्य हैं- आन्ध्र प्रदेश, गोवा, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, नागालैण्ड, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु। इसके अलावा गुजरात, मेघालय, मिजोरम और सिक्किम यह लक्ष्य प्राप्त करने के बहुत समीप पहुंच गए हैं।

-ग्रामीण विकास मंत्रालय ने गरीबी रेखा से नीचे गुजर-बसर करने वाले सभी बेघर लोगों को अगले पांच साल में आवास उपलब्ध कराने के लिए उनकी आवश्यकताओं का पता लगाया है और इंदिरा आवास योजना के तहत करीब 118 लाख मकान बनाए जा चुके हैं।

-पेयजल आपूर्ति विभाग को 2004 तक सभी गांवों में स्वच्छ पेयजल की हर हालत में व्यवस्था करने का दायित्व सौंपा गया है।

-परती भूमि के विकास की समन्वित योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार को बढ़ावा दिया जा रहा है।

-मरुस्थल विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 215 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया है। इससे 7 राज्यों के 40 जिलों में 245 विकास खंडों को लाभ होगा।

10.13 बोध प्रश्न-03

1. ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में सूचना तकनीकी की भूमिका स्पष्ट कीजिये।
2. ग्रामीण विकास की रणनीतियों का संक्षिप्त परिचय दीजिये।

10.14 सारांश (Summary)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात ज्ञात हुआ कि ग्रामीण विकास से अभिप्राय ऐसे विकास से है, जो न केवल ग्रामवासियों को रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था उपलब्ध कराये बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य व चिकित्सा, सड़क, संचार, पेयजल व स्वच्छता के स्तर पर भी ग्रामवासियों को समृद्ध करते हुए उन्हें समानता के अवसर उपलब्ध कराये। वैसे तो ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में बचत, विनियोग व राष्ट्रीय उत्पादन आदि घटकों का सन्दर्भ लिया जाता है, किन्तु ग्रामीण विकास की वृहत आयाम के रूप में संकल्पना की जाती है। इसी बात को दृष्टिगत रखते हुए भारत में ग्रामीण विकास को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है और अनेकों योजनाएँ इस दिशा में क्रियाशील हैं। इस इकाई में ऐसी ही अनेक योजनाओं का परिचय प्रस्तुत किया गया।

10.15 शब्दावली (Glossary)

ग्रामीण विकास: ग्रामीण विकास वह प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य ग्रामीण निर्धनता एवं असमानता को दूर करना है। इसके लिए सरकार और ग्रामीण लोग मिल जुलकर अपनी सोच समझ से सहभागिता के आधार पर प्रयास करते हैं।

पंचवर्षीय योजनाएँ: भारत के समग्र विकास के लिए नियोजन के दृष्टिकोण से जो पांच वर्ष की रूपरेखा तैयार की जाती है, उसे ही पंचवर्षीय योजना कहा जाता है। सन 1950 में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय योजना आयोग की स्थापना की गई। इस आयोग ने सन 1951 में प्रथम पंचवर्षीय योजना प्रकाशित की, जो सन 1952 में आंशिक संशोधन के साथ स्वीकार कर ली गई।

10.16 अभ्यास प्रश्न (Practise Questions)

1. प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना कब प्रारम्भ की गई-
(क) 04 अप्रैल 2000 (ख) 04 मई, 2000

- (ग) 04 जून, 2000 (घ) 04 जुलाई, 2000
2. समग्र विकास योजना कब प्रारम्भ की गई-
- (क) 1 अप्रैल, 1996 (ख) 1 अप्रैल, 1997
- (ग) 1 अप्रैल, 1998 (घ) 1 अप्रैल, 1999
3. बीमा ग्राम योजना कब घोषित की गई-
- (क) सन 2000 में (ख) सन 2001 में
- (ग) सन 2002 में (घ) सन 2003 में
4. खाद्यान्न बैंक योजना कब लागू की गई-
- (क) 2000 में (ख) 2001 में
- (ग) 2002 में (घ) 2003 में
5. काम के बदले अनाज कार्यक्रम कब प्रारम्भ किया गया-
- (क) जनवरी, 2001 (ख) फरवरी, 2002
- (ग) मार्च, 2003 (घ) अप्रैल, 2004
6. जवाहर रोजगार योजना कब से क्रियान्वित की जा रही है-
- (क) सन 1988 से (ख) सन 1989 से
- (ग) सन 1990 से (घ) सन 1991 से
7. एकीकृत ग्राम्य विकास योजना कब से क्रियान्वित है-
- (क) 1978 से (ख) 1979 से
- (ग) 1980 से (घ) 1981 से
8. ट्राइसेम योजना कब से प्रारम्भ है-
- (क) 15 अगस्त, 1978 (ख) 15 अगस्त, 1979
- (ग) 15 अगस्त, 1980 (घ) 15 अगस्त, 1981
9. महात्मा गांधी नरेगा योजना कब से लागू है-
- (क) 2004 से (ख) 2005 से
- (ग) 2006 से (घ) 2007 से
10. महात्मा गांधी नरेगा योजना में प्रारम्भ में मानदेय क्या था-
- (क) 90 रुपये प्रतिदिन (ख) 100 रुपये प्रतिदिन
- (ग) 110 रुपये प्रतिदिन (घ) 120 रुपये प्रतिदिन।

10.17 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practise Questions)

1. (क) 04 अप्रैल, 2000 2. (घ) 01 अप्रैल, 1999 3. (ग) सन 2002 में
4. (ख) 2001 में 5. (क) जनवरी, 2001 में 6. (ख) सन 1989 में
7. (ग) 1980 से 8. (ख) 15 अगस्त, 1979 9. (ख) 2005 से

10. (ख) 100 रुपये प्रतिदिन।

10.18 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. ग्रामीण विकास किसे कहते हैं ? विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास की स्थिति स्पष्ट कीजिए।
2. ग्रामीण विकास के अद्यतन कार्यक्रमों की जानकारी दीजिए।
3. ग्रामीण विकास में महात्मा गांधी नरेगा योजना की भूमिका का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
4. ग्रामीण विकास में सूचना तकनीकी की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।
5. ग्रामीण विकास की रणनीतियों को सामने रखिए।

10.19 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- चौहान, बी० आर०, 'भारत में ग्रामीण समाज' (1988), ए० सी० ब्रदर्स, उदयपुर।
- दोषी, एस० एल० एण्ड पी० सी० जैन, 'रूरल सोशियोलॉजी' (1999), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- दुबे, एस० सी०, 'भारतीय ग्राम (अनु०: योगेश अटल, 1996)', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
- दुबे, एस० सी०, 'इण्डियाज चेंजिंग विलेजेज' (1958), लंदन, रूटज एण्ड कीगन पाल।
- महीपाल, 'ग्राम नियोजन' (2016), राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।
- सिंह, बैजनाथ, 'सामुदायिक ग्रामीण विकास' (2016), राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

10.20 सहायक उपयोगी ग्रन्थ (Helpful Texts)

- आहूजा, राम, 'भारतीय समाज' (2004), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- देसाई, ए० आर० 'भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र' (1997), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

इकाई-13

Agrarian Movement

कृषि आन्दोलन

इकाई की रूपरेखा

- 13.1 परिचय
- 13.2 कृषि आंदोलन और कृषि वर्ग क्या हैं?
 - 13.2.1 अवधारणा
 - 13.2.2 कृषि वर्गों के बीच अंतर
- 13.3 कृषि आंदोलनों को स्टडी करने के तरीके
- 13.4 आज़ादी से पहले के कृषि आंदोलन
- 13.5 आज़ादी के बाद के कृषि आंदोलन
- 13.6 वैश्वीकरण और किसान आंदोलन
- 13.6 सारांश
- 13.7 अभ्यास प्रश्न
- 13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

13.1 परिचय

भारत में खेती के आंदोलन को आम तौर पर एक सामाजिक आंदोलन माना जाता है। इसे समाज में सोच, विश्वास, मूल्यों, नज़रिए, रिश्ते और मुख्य संस्थाओं में बदलाव लाने या सामाजिक व्यवस्था में किसी भी बदलाव का विरोध करने के मकसद से लगातार संगठित और मिलकर किए गए प्रयासों के तौर पर देखा जा सकता है। इस मायने में खेती के आंदोलन को 'मूल्यों के आधिकारिक बंटवारे' में बदलाव लाने के लिए मिलकर किए गए प्रयास के तौर पर बताया जा सकता है। इन आंदोलनों का स्वरूप, हल और मांगें समय और जगह के साथ बदलती रहती हैं। खेती के आंदोलन को आम तौर पर किसान आंदोलन के तौर पर जाना जाता है, इसे पावर स्ट्रक्चर के अंदर के संघर्ष के तौर पर देखा जा सकता है, न कि अंदर और बाहर वालों के बीच के संघर्ष के तौर पर राज्य के जवाब में आंदोलनों में लोगों की भागीदारी की मात्रा और खेती के आंदोलनों की सफलता नेत्रत्व के स्वभाव, मुद्दों और लामबंदी के स्वरूप और अधिकारियों के प्रति नज़रिए पर निर्भर करती है। यह इकाई भारत में खेती के आंदोलन, इसकी मुख्य मांग और अलग-अलग समय में इसके स्वरूप की एक ज्ञान-मीमांसा जांच है। आज़ादी से पहले और आज़ादी के बाद के समय में अलग-अलग किसान वर्गों ने मिलकर काम किया है। वर्गों की भागीदारी की मात्रा, राज्य की प्रतिक्रिया और किसान आंदोलनों की सफलता नेत्रत्व के स्वभाव, मुद्दों, लामबंदी के नमूना और अधिकारियों के रवैये पर निर्भर करती थी। यह इकाई किसान आंदोलनों, उनके बढ़ने या गिरने के कारणों और संदर्भ, उनके द्वारा उठाए गए मुद्दों के स्वभाव, नेत्रत्व का स्वभाव और लामबंदी के नमूना पर चर्चा करती है।

13.2 कृषि आंदोलन और कृषि वर्ग क्या हैं?

13.2.1 अवधारणा

खेती के आंदोलनों में खेती से जुड़े उन वर्गों के आंदोलन शामिल हैं जो ज़मीन पर काम करने या उसके मालिकाना हक, दोनों के ही मामले में खेती से जुड़े हैं। या यूँ कहें कि खेतों में काम करने वाले मज़दूरों, गरीब/ कुलक और छोटे किसानों / किराएदारों और अमीर किसानों/ग्रामीण अमीरों के आंदोलन के संदर्भ में हैं। खेती के आंदोलनों में उठाए जाने वाले मुद्दे आम तौर पर आर्थिक होते हैं जो की सामाजिक मुद्दे से भी एक-दूसरे से जुड़े होते हैं। ऐसे आंदोलन में ऐसे मुद्दे भी शामिल होते हैं, जहाँ खेती करने वाला वर्ग

एक आर्थिक और सामाजिक ग्रुप दोनों होते हैं; उदाहरण के लिए, दलितों और महिलाओं के मामले में आर्थिक और सामाजिक (आत्म-सम्मान, गरिमा और जेंडर पर आधारित भेदभाव) भी शामिल होते हैं।

कृषि आंदोलन का मतलब है किसानों, खेतीहरों और खेतिहर मजदूरों का निर्माण, किराएदारी, टैक्स और ज़मीन के मालिकाना हक के शोषणकारी व्यवस्था के खिलाफ़ मिलकर इकट्ठा होना होता है। आन्दोलन में संघर्ष के साथ कोई अलग-थलग घटनाएँ नहीं थीं, बल्कि एक बड़े सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया का हिस्सा थीं। खास तौर पर अक्सर लगान में कमी, सामंती प्रथाओं के उन्मूलन, भूमि पुनर्वितरण, उचित मजदूरी और सुरक्षा की मांग हुआ करती है। कह सकते हैं कि कृषि आंदोलन किसानों, खेतिहरों और मजदूरों का एक सामूहिक, संगठित प्रयास है। इसका मकसद ग़लत खेती के ढांचों को चुनौती देना है – जैसे शोषण करने वाला किराया, ज़्यादा टैक्स, ज़मींदारों का जुल्म और असुरक्षित ज़मीन – और इसका मकसद सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक बदलाव लाना है, जो अक्सर वर्ग, जाति और ज़मीन के रिश्तों के मुद्दों पर आधारित होते हैं। यह इकाई मुख्य रूप से आर्थिक मुद्दों पर खेती करने वाले वर्गों की लामबंदी पर ध्यान केंद्रित करती है।

13.2.2 कृषि वर्गों के बीच अंतर

खेती-बाड़ी वाला समाज एक जैसा नहीं होता है, यह आर्थिक और सामाजिक के बीच बटा होता है। खेती करने वाले समूह का जुटना उससे जुड़े खास मुद्दों पर निर्भर करता है। अलग-अलग समूह के बीच सहयोग या उनके बीच टकराव भी समूह के हितों के मिलने पर निर्भर करता है। इसलिए, अलग-अलग खेती-बाड़ी वाले वर्गों के आंदोलनों को समझने के लिए किसी खास वर्ग को तय करने के मानदंड पर बात करना ज़रूरी है। जानकार अलग-अलग खेती-बाड़ी वाले वर्गों में फर्क करने या उनकी पहचान करने के लिए दो बड़े रूपरेखा का इस्तेमाल करते हैं – यानी, **नॉन-मार्क्सवादी और मार्क्सवादी**। पहले वाले के समर्थक खेती-बाड़ी वाले वर्गों की पहचान करने के लिए जाति, भौगोलिक इलाकों और ज़मीन के आकार जैसे कई कारक को ध्यान में रखते हैं। जो वर्ग निचली जातियों के होते हैं, उन्हें आमतौर पर खेतिहर मजदूर/गरीब और छोटे किसानों के रूप में पहचाना जाता है और जो ऊंची जातियों और बीच की जातियों के होते हैं, उन्हें ऊपरी वर्गों – अमीर किसानों और ज़मींदारों के रूप में पहचाना जाता है। बाद वाले – मार्क्सवादी नज़रिए को मानने वाले लोग गैर-मार्क्सवादी नज़रिए को अवैज्ञानिक मानते हैं और एक दूसरा घटक देते हैं। उनका तर्क है कि किसानों में अंतर करने का एक वैज्ञानिक तरीका यह है कि ज़मीन पर काम करने में परिवार की श्रमिक शक्ति हिस्से को ज़मीन के मालिकाना हक के साथ-साथ बाहरी श्रमिक शक्ति के अनुपात में देखा जाना चाहिए।

यह मापदंड **“माओ और लेनिन”** की लिखी बातों पर आधारित है। उत्सा पटनायक ने अपनी किताब **‘पीजेंट क्लास डिफरेंशिएशन: ए स्टडी इन मेथड विद रेफरेंस टू हरियाणा’ (ऑक्सफोर्ड, 1987)** में माओ और लेनिन के मापदंड को एक साथ रखा है। पटनायक के मॉडल का इस्तेमाल कुछ दूसरे जानकारों ने भी किया है। इस रूपरेखा के मुताबिक, जिनके पास ज़मीन नहीं है, लेकिन वे दूसरों की ज़मीन पर काम करते हैं या जिनके पास ज़मीन का छोटा हिस्सा है और जो अपनी ज़मीन से ज़्यादा दूसरों की ज़मीन पर काम करते हैं, वे खेती-बाड़ी करने वाले मजदूर और छोटे और गरीब किसान हैं; जिनके पास ज़मीन और खेती के संसाधन हैं, जो खेती-बाड़ी करने वाले मजदूरों को काम पर रखते हैं, गरीब और छोटे किसान हैं या जिनके पास ज़मीन है और वे खुद ज़मीन पर काम नहीं करते (सिवाय देखरेख के) बल्कि बाहरी मजदूरों पर निर्भर रहते हैं, उन्हें गांव के अमीर (बीच के किसान, अमीर किसान और ज़मींदार) की श्रेणी में रखा जाता है। लेकिन, उत्सा पटनायक का मॉडल उन इलाकों पर ज़्यादा लागू होता है जहाँ पूंजीवाद रहा है, उन इलाकों के मुकाबले जहाँ अभी भी जागीरदारी का तरीका हावी है। खेती करने वाले समूह को इन वर्गों में समझा जा सकता है।

- (i) **ज़मीन के मालिक (अमीर किसान/ज़मींदार):** काफ़ी ज़मीन के मालिक होते हैं, अक्सर मजदूरों को काम पर रखते हैं, और समाज में उनकी ताकत होती है।
- (ii) **किराएदार/बँटवारा करने वाले:** ऐसी ज़मीन पर खेती करते हैं जो उनकी नहीं होती, किराया या उपज का हिस्सा देते हैं, अक्सर उनके पास मालिकाना हक नहीं होता।

- (iii) **मामूली/छोटे किसान:** कुछ ज़मीन के मालिक होते हैं लेकिन गुजारे के लिए काफ़ी नहीं, अक्सर उन्हें दूसरों के लिए भी काम करना पड़ता है।
- (iv) **खेती करने वाले मज़दूर:** ज़मीन के बिना लोग जो दूसरों के खेतों में मज़दूरी पर काम करते हैं, एक बड़ा, अक्सर गरीब तबका बनाते हैं।
- (v) **गैर-खेती करने वाले:** वे लोग जो गांव के इलाकों में खेती के अलावा दूसरे कामों में शामिल होते हैं। इस इकाई में खेती करने वाले समूह को इन वर्गों में बांट के समझने की कोशिश की जा सकती है :

गांव के गरीब: खेती के मज़दूर और छोटे/गरीब/मामूली किसान —

खेती के मज़दूरों के पास ज़मीन नहीं होती, लेकिन वे मज़दूरी के लिए दूसरों की ज़मीन पर काम करते हैं, या तो खेती के मज़दूर के तौर पर या किराएदार के तौर पर। छोटे/गरीब/मामूली किसानों के पास ज़मीन तो होती है, लेकिन वह उनकी बेसिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए काफ़ी नहीं होती। उन्हें दूसरों की ज़मीन पर भी काम करना पड़ता है;

किसान/बीच के किसान/कुलक/अमीर किसान/गांव के अमीर —

इन समूह के पास ज़मीन और खेती के लिए ज़रूरी दूसरा सामान होता है। वे अपनी ज़मीन पर काम करते हैं या खुद काम नहीं करते, सिवाय पर्यवेक्षक का काम करने और खेती के मज़दूरों को काम पर रखने का कार्य करते हैं।

13.3 कृषि आंदोलनों के अध्ययन के तरीके

राजेंद्र सिंह नाम ने अपनी एक किताब '*सोशल मूवमेंट्स, ओल्ड एंड न्यू: पोस्ट-मॉडर्निस्ट क्रिटिक*' में पोस्ट-मार्क्सियन नज़रिए से सामाजिक आंदोलनों के हिस्से के तौर पर खेती-बाड़ी के आंदोलनों पर माध्यमिक साहित्यकार का विश्लेषण करते हैं। जिसमें वे इन आंदोलनों के समय के साथ इनके बदलते स्वरूप के बारे में बात करते हैं, और उन्हें समझने के विभिन्न तरीकों का इस्तेमाल करते हैं। किसान और खेतिहर मज़दूर किस तरह अपने लिए खड़े होते हैं और हालात को बेहतर बनाने की कोशिश करते हैं, इसका अध्ययन करने के कई तरीके हैं। एक तरीका **मार्क्सवादी** कहलाता है, जो यह देखता है कि कैसे अमीर लोग या कंपनियाँ गरीब किसानों के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार करती हैं, और वे उन अन्यायपूर्ण आर्थिक समस्याओं से कैसे जूझते हैं। यह तरीका आर्थिक निर्धारकवाद की परतें पर आधारित है और तर्क देता है कि किसानों में अंतर करने का एक वैज्ञानिक तरीका यह है कि ज़मीन पर काम करने में बाहरी श्रम शक्ति के मुकाबले परिवार की श्रम शक्ति का अनुपात और ज़मीन का मालिकाना हक भी हो। यह मानदंड लेनिन, माओ और फैनन की लिखी बातों पर आधारित है, जिन्होंने किसानों को क्रांति के केंद्र में रखा है। मार्क्सवादी ढांचा के अनुसार, खेती-बाड़ी के आंदोलन में वे लोग शामिल हैं जिनके पास ज़मीन नहीं है, लेकिन वे दूसरों की ज़मीन या ज़मीन पर काम करते हैं, जो खेती-बाड़ी के मज़दूरों और छोटे और गरीब किसानों की श्रेणी से आते हैं; जिनके पास ज़मीन और खेती के संसाधन हैं, जो खेती-बाड़ी के मज़दूरों को काम पर रखते हैं, गरीब और छोटे किसान, और जिनके पास ज़मीन है और वे खुद ज़मीन पर काम नहीं करते (पर्यवेक्षक को छोड़कर) बल्कि बाहरी मज़दूरी पर निर्भर रहते हैं। वे गाँव के अमीर (बीच के किसान, अमीर किसान और ज़मींदार) हैं। **नॉन-मार्क्सवादी नज़रिए के समर्थक** खेती-बाड़ी के वर्गों की पहचान करने के लिए जाति, भौगोलिक क्षेत्र और ज़मीन के आकार जैसे कई कारक को ध्यान में रखते हैं। जो समूह छोटी जातियों का है, उसे आम तौर पर खेतिहर मज़दूर/गरीब और छोटे किसान माना जाता है और जो ऊँची जाति और बीच की जातियों के हैं, उन्हें ऊँचे तबके-अमीर किसान और ज़मींदार माना जाता है।

एक

और तरीका गैर-

मार्क्सवादी कहलाता है, जो सिर्फ रोकड़ के बजाय संस्कृति, परंपराओं और लोगों के सोचने और महसूस करने के तरीके जैसे अन्य कारणों पर भी ध्यान आकर्षित करता है। 1980 के दशक की शुरुआत में मार्क्सवादी दृष्टिकोण में एक और चीज जोड़ी गई है। **ग्राम्शी** के कथन से प्रभावित होकर इस दृष्टिकोण को **सबाल्टर्न** के नाम से जाना जाने लगा। सबाल्टर्न स्कूल का खेती के आंदोलनों का अध्ययन पर सबसे गहरा असर पड़ा है। इसे **रणजीत गुहा** ने सबाल्टर्न अध्ययन की श्रृंखला में लोकप्रिय बनाया है। यह दृष्टिकोण चिरसम्मत मार्क्सिज्म की आलोचना करता है, जो दूसरे कारक के मुकाबले इकोनॉमिक कारक को प्राथमिकता देता है। सबाल्टर्न स्कूल का तर्क है कि किसानों की अपनी चेतना, नेत्रत्व और दूसरे सांस्कृतिक कारक होते हैं जो वर्ग से कहीं ज्यादा जरूरी भूमिका निभाते हैं। **सबलैटरन स्कूल** की चिरसम्मत मार्क्सिस्ट भी आलोचना करते हैं कि यह चेतना और संस्कृति को आर्थिक ढांचे से अलग करता है और इस तरह असलियत की सही तस्वीर नहीं दिखाता।

13.4 आज़ादी से पहले के कृषि आंदोलन

किसान आंदोलन इतिहास में कभी भी मुख्य चर्चा का विषय नहीं रहा और उन्हें शांत, विरोध न करने वाले और अंधविश्वासी के तौर पर दिखाया गया, जिससे यह साबित होता है कि वे आंदोलनों के खिलाफ हैं। लेकिन ब्रिटिश काल और उसके बाद के ग्रामीण इलाकों में विरोध, विद्रोह और यहां तक कि बड़े पैमाने पर उग्र संघर्ष भी हुए हैं। भारत में किसानों और किसानों को जागीरदारों और जमींदारों के शोषण को रोकने के लिए लगभग सभी प्रांतों में बड़ी लड़ाई लड़नी पड़ी।

डी.डी. कोसांबी और आर.एस. शर्मा ने डैनियल थॉर्न्स के साथ मिलकर पहली बार किसानों को भारतीय इतिहास की पढ़ाई में शामिल किया गया। कैथलीन गौह ने 19वीं और 20वीं सदी के दौरान 77 विद्रोहों की पहचान की। आज़ादी से पहले के समय में देश के लगभग सभी इलाकों में खेती से जुड़े आंदोलन हुए। आम तौर पर, इसे किसान आंदोलन के नाम से जाना जाता है, इसमें सभी शोषित वर्ग, किराएदार, खेतिहर मजदूर, कारीगर वगैरह शामिल थे। उन्नीसवीं सदी का आंदोलन मुख्य रूप से जमींदारों के जुल्म और ज़मीन के बहुत ज्यादा राजस्व के खिलाफ था।

20वीं सदी के पहले तीन दशकों में कुछ किसान आंदोलनों के उदाहरण सामने आए, जहाँ खेती करने वाले लोगों ने किसी न किसी तरह से शोषण करने वाले प्रणाली पर प्रतिक्रिया दी गयी। इन तरीकों में वे तरीके भी शामिल थे जिन्हें **जेम्स स्कॉट “रोज़मरी के विरोध का तरीका”** कहते हैं और संगठित किसान आंदोलनों के रूप में भी बहुत सारे अध्ययन से जो आम बात सामने आती है, वह यह है कि इन आंदोलनों का नेत्रत्व गैर-किसान वर्गों से आई। **कपिल कुमार अपनी किताब “पीजेंट इन रिबोल्ट: टेनेंट्स, लैंडलेस, कांग्रेस, एंड राज इन अवध”** में बताते हैं कि हालांकि अवध किसान आंदोलन की नेतृत्व असल में किसानों की नहीं थी, लेकिन यह राष्ट्रीय आंदोलन की नेतृत्व के समक्ष चलती है। ये आंदोलन आज़ादी से पहले उपनिवेशवाद, ब्रिटिश पॉलिसी, शोषण करने वाले जमींदारों और दबाने वाले राजस्व प्रणाली के खिलाफ विरोध के काम थे। ये मांगें न्याय, सही किराया और सामंतवाद से सुरक्षा को लेकर किसानों की शिकायतों को दिखाती हैं। कुछ आन्दोलनों के बारे में नीचे बताया जा रहा है। जैसे की :

नील विद्रोह (1859-60, बंगाल): किसान यूरोपियन नील के बागान मालिकों के खिलाफ विद्रोह कर रहे थे, जो उन्हें बहुत कम कीमतों पर नील उगाने के लिए मजबूर करते थे। यह उपनिवेशी शोषण के खिलाफ पहले संगठित किसान विद्रोहों में से एक था।

बना कृषि विद्रोह (1873-76, बंगाल): काश्तकारों ने जमींदारों द्वारा गैर-कानूनी तरीके से बेदखली और ज्यादा किराए का विरोध किया। इस आंदोलन का केन्द्र कब्जे के अधिकार और कानूनी सुरक्षा पक्की करने पर था।

क्कन दंगे (1875, महाराष्ट्र): कर्ज और साहूकारों के शोषण की वजह से ये घटनाएं हुईं। किसानों ने साहूकारों पर हमला किया और कर्ज के रिकॉर्ड जला दिए।

तेभागा आंदोलन (1946-47, बंगाल): बटाईदारों ने उपज का आधा हिस्सा देने के बजाय दो-तिहाई हिस्सा (तेभागा) मांगा और अत्याचारी जोतदारों (जमींदारों) का विरोध किया।

बारडोली सत्याग्रह (1928, गुजरात): सरदार वल्लभभाई पटेल के नेतृत्व में किसानों ने अंग्रेजों द्वारा लगाए गए बढ़े हुए जमीन राजस्व के खिलाफ सफलतापूर्वक विरोध किया, और उन्हें "सरदार" के नाम से जाना जाने लगा।

चंपारण सत्याग्रह (1917, बिहार): महात्मा गांधी के नेतृत्व में, किसानों ने तिनकठिया सिस्टम (जबरन नील की खेती) के खिलाफ अपना संघर्ष शुरू किया। यह गांधी के लिए जन राजनीति में प्रवेश का बिंदु था।

किसान सभा आंदोलन (1936 से आगे) : ऑल इंडिया किसान सभा (AIKS) का अध्यक्ष, जिसने पूरे भारत में सामंतवाद, जमींदारों और देश को तबाह करने वाली उपनिवेशी टैक्सेशन पॉलिसी के खिलाफ संघर्ष में किसानों को इकट्ठा किया।

खेती से जुड़े मुद्दे धीरे-धीरे मुख्यधारा नेशनल एजेंडा का हिस्सा बन गए। अपने शुरुआती दौर में किसान आंदोलन की चिंता सिर्फ किराया, भीख और नज़राना तक ही सीमित थी। हालांकि, 1920 के बाद, ज़मीनी स्तर पर राजनीतिक जागरूकता ने इन मुद्दों को साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद और उसके शोषण करने वाले स्वभाव के बड़े सवाल में डुबो दिया। आज़ादी से पहले के किसान आंदोलनों का इंडियन नेशनल कांग्रेस के प्रोग्राम पर काफी असर पड़ा। पार्टी के अंदर कांग्रेस समाजवादी समूह, जिसमें बाद की पीढ़ी के माजवादी, कम्युनिस्ट और भारत के होने वाले प्रधानमंत्री शामिल थे, ने बड़े ज़मीन सुधारों की ज़रूरत की वकालत की। कांग्रेस ने खेती करने वाले वर्ग की परेशानियों को देखने और उनकी हालत सुधारने के उपाय सुझाने के लिए एक कमेटी बनाई। इसका असर देश के आज़ाद होने पर खेती से जुड़ी नीतियों पर पड़ा।

13.5 आज़ादी के बाद के कृषि आन्दोलन

आज़ादी के बाद, राज्य ने नेशनल और प्रांतीय स्तर पर कई पॉलिसी कदम उठाए ताकि खेती के सेक्टर में अच्छा बदलाव लाया जा सके - जो कुल आबादी के दो-तिहाई लोगों को रोज़ी-रोटी देता है। इन कदमों में ज़मीन सुधार, समुदाय विकास प्रोग्राम, और खेती बढ़ाने की स्कीमों, और हरित क्रांति शामिल हैं। इस विकास की वजह से खेती के संरचना में संरचनात्मक बदलाव आए और इस तरह कई नए मुद्दे सामने आए, नए खेती करने वाले वर्ग बने और पुराने वर्ग कम हुए, नए तरह के संगठन बने, और लोगों को इकट्ठा करने के तरीके बने। इस इकाई में अलग-अलग खेती करने वाले वर्गों के आंदोलनों पर चर्चा के साथ साथ पोस्ट-कोलोनीयल अवधि में अलग-अलग एग्रीकल्चरल आंदोलन के स्वभाव और प्रवृत्तियों पर बात की जाएगी। ऐसा करने पर, पूरे एग्रीकल्चरल आंदोलन को दो बड़े ढांचा में बांटा जा सकता है- पहला, वे आंदोलन जो संस्थागत ढांचा के अंदर बदलाव चाहते थे। दूसरा, वे जो संस्थागत ढांचा से आगे जाते हैं। दूसरे शब्दों में, पहला सुधारात्मक है और दूसरा ढांचा कट्टरपंथी प्रकृति का है। विश्लेषण का एक और ढांचा वर्ग परिप्रेक्ष्य है, यानी अलग-अलग वर्ग ने कैसे काम किया और कोशिश की। ये वर्ग हैं खेतिहर मजदूर, गरीब और छोटे किसान और किसान/मध्यम किसान/कुलक/अमीर किसान/ग्रामीण अमीर।

गेल ओमवेट ने इन संघर्षों को दो अलग-अलग श्रेणी में बांटा है। एक आंदोलन जो नए उभरे मालिकाना हक वाले वर्गों ने अमीर मध्यम और सुव्यवस्थित जमींदारों के साथ मिलकर शुरू किया। दूसरा आंदोलन जो खेती करने वाले गरीबों ने शुरू किया जिसमें खेती करने वाले सर्वहारा वर्ग ने मुख्य जगह हासिल की। जमींदारी प्रथा को खत्म करना, भूमि सुधार, सिंचाई का नेटवर्क बनाना, वगैरह आज़ादी के बाद सरकार द्वारा उठाए गए कुछ तुरंत कदम थे। इन सभी का नतीजा यह हुआ कि दबदबे वाली जाति कमजोर हुई और खासकर उत्तरी भारत में बीच की जातियां एकजुट हुईं और वे इलाके के ताकतवर कुलक बनकर उभरीं। साथ ही, कई अनुसूचित जातियों और जनजातियों को आधुनिक तरीकों के कारण गरीब किसानों और भूमिहीन मजदूरों के स्तर पर धकेल दिया गया है।

आज़ादी के बाद के पहले दो दशकों में उत्तर प्रदेश में एक तरफ समाजवादियों और कम्युनिस्टों और दूसरी तरफ नक्सलवादियों और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा ग्रामीण गरीबों का आंदोलन देखा गया। ज़मीनहीन गरीब/छोटे किसानों के लिए भिखारी प्रथा खत्म करना, बेहतर मजदूरी, शोषण से सुरक्षा मुख्य मुद्दे हैं। लेकिन, इस दौरान जाति मेहनतकश और शोषित लोगों की एकता में एक रुकावट बन गई। इसने किसानों के बीच एक बहु-स्तरीय अधिक्रम बनाई, जिसमें अलग-अलग सोच और तरीके थे।

13.5.1 ग्रामीण गरीब: खेतिहर मजदूर और छोटे/गरीब/सीमांत किसान

गाँव के गरीब लोग आर्थिक रूप से पिछड़े हुए लोगों का एक समूह हैं — बिना ज़मीन के खेतिहर मजदूर, किराएदार, गरीब, और छोटे या मामूली किसान जिनके पास बिना पैसे के ज़मीन है और वे खेती या खेती के अलावा दूसरे अनौपचारिक क्षेत्र में मेहनत करके अपनी आय बढ़ाते हैं। उनमें से ज्यादातर निचली जातियों — पिछड़े और दलित समुदायों से हैं। अमीर किसानों के उलट, उन्हें दोहरी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है — सामाजिक भेदभाव और आर्थिक शोषण। इसलिए, जहाँ ज्यादा अमीर खेती करने वाले समूह का जमावड़ा मुख्य रूप से आर्थिक मुद्दों पर होता है, वहीं गाँव की गरीब आबादी का ध्यान सामाजिक और आर्थिक दोनों तरह की चिंताओं पर होता है। कभी-कभी, वे सिर्फ सामाजिक और सांस्कृतिक मामलों पर इकट्ठा होते हैं, जबकि दूसरी बार, उनकी सभाएँ मुख्य रूप से आर्थिक मुद्दों पर ही केंद्रित होती हैं। दलितों के अलग-अलग सामाजिक और सांस्कृतिक संगठनों के ज़रिए, जो मुख्य रूप से अंबेडकरवाद से प्रभावित हैं, वे इन चुनौतियों का सामना करने की कोशिश करते हैं।

आज़ादी के बाद के समय में भारत के अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग तरह के संगठनों ने खेतिहर मजदूरों और गरीब/छोटे किसानों को मिलकर काम करने के लिए इकट्ठा किया है। इनमें समाजवादी और कम्युनिस्ट पार्टियाँ, गांधीवादी, स्वैच्छिक समूह /NGO, आज़ाद लोग और नक्सली शामिल थे। इस उप-अनुभाग में खेती करने वाले तबके के कुछ आंदोलनों के उदाहरणों पर चर्चा की गई है, जो गाँव के गरीब लोग हैं।

प्रतिबाधा के बाद के शुरुआती दो दशकों में उत्तर प्रदेश में गाँव के गरीबों को एक तरफ समाजवादी और कम्युनिस्टों ने, और दूसरी तरफ नक्सलियों और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने इकट्ठा किया। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जिन चिंताओं ने उन्हें इकट्ठा होने के लिए प्रेरित किया, उनमें गाँव समाज की ज़मीन का दोबारा बंटवारा, बेगार खत्म करना, बेहतर मजदूरी की मांग, अमीर लोगों द्वारा गरीब लोगों पर उनके खेतों से चारे के लिए ज़रूरी घास इकट्ठा करने पर लगाई गई रोक हटाना, और अमीर लोगों के पुरुषों के शोषण से महिलाओं की सुरक्षा शामिल थी। विरोध के तरीकों में भूख हड़ताल और प्रदर्शन शामिल थे। 1960 के दशक में रिपब्लिकन पार्टी ऑफ़ इंडिया ने भी दलितों को इकट्ठा किया, जिसने बाद की BSP के उलट, आर्थिक चुनौतियों के साथ-साथ सांस्कृतिक मुद्दों पर भी ध्यान दिया। इसके अलावा, खेतिहर मजदूरों और छोटे/गरीब किसानों के विरोध के अनगिनत उदाहरण हैं, जो **इनफॉर्मल ग्रुप ऑर्गनाइजेशन या जिसे 'रोज़मर्रा के विरोध के तरीके'** कहा गया है, के ज़रिए दिखाए गए (जगपाल सिंह, कैपिटलिज्म एंड डिपेंडेंस: चैप्टर IV 'डिपेंडेंस, रेजिस्टेंस एंड सैक्शनस')। पूर्वी उत्तर प्रदेश के बस्ती ज़िले में, CPI ने 1960 के दशक में ज़मीन हड़पने का आंदोलन चलाया ताकि ज्यादा ज़मीन गरीब तबके को दी जा सके। फिर भी, पारंपरिक लेफ्ट और समाजवादियों ने बिहार, आंध्र प्रदेश, झारखंड, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा के कुछ हिस्सों सहित देश के अलग-अलग इलाकों में दलितों को इकट्ठा करने के लिए संघर्ष किया। यह नाकामी दलितों के मुद्दे को नज़रअंदाज़ करने की वजह से हुई; जबकि समाजवादियों जाति के मामलों पर चिंता जताई, उनका मुख्य ध्यान दलितों के बजाय पिछड़ी जातियों पर रहा। पारंपरिक वाम की इस कमी को आंध्र प्रदेश, बिहार और उड़ीसा में नक्सलियों ने दूर किया। आर्थिक मुद्दों को जाति की कमियों के साथ जोड़ने की उनकी क्षमता ने उन्हें निचली जाति के खेतिहर मजदूरों और गरीब किसानों को इकट्ठा करने में मदद की। भूमि सुधार लागू करने और जातिगत भेदभाव खत्म करने के उनके प्रतिबद्धता ने उन्हें इन लोगों के बीच पॉपुलर बनाया।

13.5.2 किसान/मध्यम किसान/कुलक/अमीर किसान/ग्रामीण अमीर

1970 और 1980 के दशक में प्रमुखता से उभरे ये आंदोलन हरित क्रांति का सीधा नतीजा थे, जिससे समृद्ध क्षेत्रों और खेती करने वाले समुदाय के अमीर वर्गों को फायदा हुआ। इसमें भाग लेने वाले मुख्य रूप से मध्यम जातियों (जैसे, जाट, मराठा, पटेल) के खुद खेती करने वाले मध्यम और अमीर किसान थे।

मुख्य मुद्दे: मांगें बाज़ार अर्थव्यवस्था और वाणिज्यिक खेती की लाभदायक को बेहतर बनाने से संबंधित थीं। मुद्दों में उपज के लिए लाभकारी कीमतें, लागत साधन (खाद, बीज, बिजली, पानी) पर सब्सिडी, टैक्स में कमी, लोन माफी, और खेती और इंडस्ट्री के बीच बेहतर व्यापार शर्तें ("भारत बनाम इंडिया" विभाजन का तर्क) शामिल थे।

उदाहरण: प्रमुख संगठनों में पंजाब और यूपी में भारतीय किसान यूनियन (BKU) (महेंद्र सिंह टिकैत के नेतृत्व में), महाराष्ट्र में शेतकारी संगठन (शरद जोशी के नेतृत्व में), और कर्नाटक राज्य रैथा संघ शामिल थे। इन आंदोलनों की विशेषता बड़े पैमाने पर, संगठित, और अक्सर "गैर-राजनीतिक" आंदोलन थे (हालांकि उनका राजनीतिक प्रभाव था) जिसमें नेतृत्व और लामबंदी के नए तरीके थे, जो कट्टरपंथी आंतरिक सामाजिक बदलाव के बजाय आर्थिक शिकायतों पर केंद्रित थे। जिसका परिणाम यह हुआ की

कृषि संबंधी चिंताओं को राष्ट्रीय राजनीतिक मुद्दे में लाया गया और न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) प्रणाली और विभिन्न साधनों में सब्सिडी जैसी नीतियों को प्रभावित किया।

किसान आंदोलनों की उत्पत्ति

किसानों के आंदोलनों को कृषि इंडस्ट्री के खिलाफ व्यापार की स्थितियाँ मिलीं, क्योंकि ये हरित क्रांति के बाद के आंदोलन थे जो ज्यादातर हरित क्रांति क्षेत्र में हुए थे। पैदावार से मिलने वाला मुनाफा खेती में बढ़ती लागत को पूरा करने के लिए काफी नहीं था। इसके अलावा, सिस्टम की बिजली सप्लाई करने में नाकामी और पब्लिक संस्थानों का बढ़ता कर्ज, जो ज्यादातर बुनियादी ढांचा की जरूरतों को पूरा करने के लिए था, ने किसानों के लिए नई समस्याएँ खड़ी कर दीं। ग्रामीण गरीब लोगों के बड़े हिस्से की तुलना में बेहतर स्थिति में होने के बावजूद, इस ग्रुप को सरकार ने नज़रअंदाज़ कर दिया। नेताओं के लोकलुभावन वादे और ग्रामीण वोट बैंक पर इस वर्ग की पकड़ ने इस धारणा को और मज़बूत किया कि राजनीतिक अभिजात वर्ग ने उन्हें धोखा दिया है।

1970 के दशक में जनता पार्टी प्रशासन के सत्ता में आने के बाद से, केंद्र और राज्य सरकारों में विधायकों की बढ़ती संख्या के कारण सिस्टम से उनकी उम्मीदें बढ़ गई हैं। यह तब हुआ जब आम जनता का राजनीति से विश्वास उठ गया, जिसका मतलब वे औपचारिक राजनीतिक संस्थाओं, मुख्य रूप से राजनीतिक पार्टियों, चुनावों और नेताओं से समझते थे।

इन हालात में, किसानों ने वैकल्पिक तरीके से लामबंदी पर अच्छी प्रतिक्रिया की थी, जिसकी खासियत "गैर-राजनीतिक" या "अराजनीतिक" मुद्दे पर लामबंदी था, जिसमें ग्रामीण इलाकों को एक ऐसी एकजुट इकाई के तौर पर दिखाया गया जिसका शहरों में निहित स्वार्थ वाले लोग फायदा उठा रहे थे। गैर-पेशेवर नेतृत्व के लिए इन आंदोलनों का नेतृत्व करना आसान था। इस स्थिति में, UP का BKU आंदोलन एक सही मॉडल हो सकता है, UP का BKU आंदोलन मुख्य रूप से 1988-1989 में हुआ था, जबकि पहले के किसान आंदोलन 1970 के दशक और 1980 के दशक की शुरुआत में हुए थे। 29 मई, 1987 को चरण सिंह की मौत और उससे पहले उत्तर प्रदेश में किसान आंदोलन के टूटने की वजह से, उस समय किसान नेतृत्व की पूरी कमी थी।

1967 में आर. एम. लोहिया के निधन के बाद, चरण सिंह की राजनीतिक पार्टी ने अपना नाम बदलकर इस कमी को पूरा किया। जब चरण सिंह कांग्रेस के सदस्य थे, तो उन्होंने आंदोलन वाली राजनीति को नकार दिया था, लेकिन उन्होंने 125-बिंदु का योजना बनाकर मध्यम वर्ग और अमीर किसानों के बीच अपना राजनीतिक समर्थन बनाने में सफलता हासिल की। हालांकि, उनकी पार्टी का राजनीतिक आंदोलन में सामूहिक जुड़ाव समाजवादियों और कम्युनिस्टों की तुलना में कम संगठित और कम बार होता था। टिकैत का BKU एक गैर-पार्टी राजनीतिक संगठन था जो बड़े पैमाने पर राजनीतिक लामबंदी के लिए जिम्मेदार था। शुरुआत में उस समय, किसानों को पारंपरिक खाप (जाति परिषद) संरचना द्वारा सक्रिय रूप से लामबंद किया गया था। विभिन्न जातियों के खापों के नेता खाप (जाति परिषद) के पारंपरिक नेतृत्व का हिस्सा थे, जिसका नेतृत्व जाट खाप नेता महेंद्र सिंह टिकैत कर रहे थे।

13.6 कृषि आंदोलन-उदारीकरण के बाद का दौर

पिछले आंदोलनों के उलट, वैश्वीकरण के दौर में किसानों ने वैश्वीकरण से जुड़ी चुनौतियों पर अलग तरह से प्रतिक्रिया दी है। पश्चिमी देशों ने देश की कृषि अर्थव्यवस्था में दखल देने की कोशिश की, खासकर किसानों के आंदोलन ने Dunkel Draft और GATT पर अलग-अलग तरह से प्रतिक्रिया दी। कर्नाटक राज्य रैयत संघ के प्रो. नंजुदासवामी और उत्तर प्रदेश के BKU के महेंद्र सिंह टिकैत ने वैश्वीकरण का विरोध किया, जबकि महाराष्ट्र के शेतकरी संगठन के नेता शरद जोशी ने इसका समर्थन किया। शरद जोशी के अनुसार, भारतीय कृषि को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के लिए खोलने से भारतीय किसानों को फायदा होगा। उनके इस नज़रिए की वजह से वे **वी. पी. सिंह** के प्रशासन के तहत भारत सरकार के सलाहकार बन पाए। स्थानीय सामंतवाद के खिलाफ प्राचीन किसान संघर्षों से लेकर वैश्विक बाज़ार और नवउदारवादी सरकारी नीतियों के खिलाफ समकालीन आंदोलनों तक का बदलाव वैश्वीकरण और किसान आंदोलनों से ज़ाहिर होता है। जो लोग ग्लोबलाइजेशन का विरोध करते हैं, उनमें कई समाजवादी और गांधीवादी, साथ ही वंदना शिवा जैसे अकादमिक कार्यकर्ता ने नंजुदासवामी और टिकैत का समर्थन किया। उनका तर्क था कि वैश्वीकरण से भारतीय किसानों को ही नुकसान होगा। बीजों से जुड़े कानूनों में बदलाव की कोशिश से यूरोपीय किसानों के साथ गलत मुकाबले के कारण किसानों से बीज पैदा करने और उन्हें बचाने के उनके पारंपरिक अधिकार छीन लिए जाएंगे। उन्होंने ज़ोर दिया कि यूरोपीय देश अपने किसानों को सब्सिडी देना बंद करें और सरकार द्वारा पेटेंट कानूनों में बदलाव की कोशिश का विरोध किया। इसके अलावा, वे उन बहुराष्ट्रीय संस्था के खिलाफ थे जो भारत के पानी और दूसरे प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल करके

सॉफ्ट ड्रिंक्स बनाती थीं। असल में, **वंदना शिवा** जैसे विद्वानों का मानना है कि हरित क्रांति में तकनीकी प्रौद्योगिकी के लोकप्रिय होने से प्रजनन पर बुरा असर पड़ा है। ज़मीन की मदद करने के बजाय उसे नुकसान पहुँचाया है। अपना विरोध जताने के लिए, वैश्वीकरण के विरोधी विरोध प्रदर्शन, रैलियाँ और सेमिनार योजना करते हैं। प्रोफ़ेसर नंजुदासवामी के गुजर जाने के बाद से वैश्वीकरण के खिलाफ किसानों के विरोध प्रदर्शन कमजोर हो गए हैं।

वैश्वीकरण और किसानों के आंदोलनों का मिलन, लोकल सामंतवाद के खिलाफ पारंपरिक किसान संघर्षों से लेकर वैश्विक बाज़ार और नवउदारवादी सरकारी नीतियों के खिलाफ आधुनिक आंदोलनों तक एक बदलाव को दिखाता है।

1. "किसान" से "बाज़ार-उन्मुख किसान" की ओर बदलाव

इस ज़माने में, विद्वान "किसानों" और "खेतिहरों" के बीच फ़र्क करते हैं। पारंपरिक रूप से गुजारा करने वाले सामाजिक-आर्थिक समूह जिनके आंदोलन राजस्व और ज़मीन के मालिकाना हक के बारे में औपनिवेशिक अधिकारियों और स्थानीय ज़मींदारों पर केंद्रित थे। **किसानहरित क्रांति के बाद**, "बाज़ार-उन्मुख किसान" नाम का किसानों का एक नया वर्ग सामने आया। वे बाज़ार के लिए उत्पादन करते हैं और खाद और बीज जैसे वैश्विक संसंधानों पर निर्भर रहते हैं। उनके आंदोलन सरकार पर दुनिया के बाज़ार की मनमानियों से लोगों को बचाने में नाकाम रहने का आरोप लगाते हैं।

2. शिकायतों पर वैश्वीकरण का असर (1990 के दशक के बाद)

वैश्वीकरण और विश्व व्यापार संगठन (WTO) के नियमों के कारण ग्रामीण इलाकों पर आर्थिक दबाव बढ़ गया है, सरकारी मदद हटाना, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नियमों का पालन करने के लिए नवउदारवादी नीतियों के कारण सरकारी सब्सिडी (जैसे बिजली, पानी और खाद पर) कम कर दी गई है।

कॉर्पोरेट कंट्रोल: जेनेटिकली मॉडिफाइड (BT) बीजों जैसे महंगे संसंधानों के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियों पर बढ़ती निर्भरता के कारण "कर्ज का दुष्चक्र" और किसानों की आत्महत्याओं की दर बढ़ गई है।

बाज़ार में उतार-चढ़ाव: वैश्विक मार्केट में शामिल होने के कारण किसानों को अंतर्राष्ट्रीय कीमतों में उतार-चढ़ाव का सामना करना पड़ता है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए अमीर देशों से भारी सब्सिडी वाले आयातित सामानों से मुकाबला करना अक्सर नामुमकिन हो जाता है।

3. वैश्विक किसान आंदोलनों की विशेषताएं

वैश्वीकरण का मुकाबला करने के लिए, आज के कृषि आंदोलनों ने नई रणनीतियों और वैचारिक ढांचों को अपनाया है:

"भारत बनाम इंडिया" विचारधारा: शरद जोशी जैसे नेताओं द्वारा लोकप्रिय बनाया गया यह विचार, "इंडिया" को शहरी-औद्योगिक संयोजन के रूप में दिखाता है जो औपनिवेशिक-शैली के शोषण का वारिस है और "भारत" को दबे-कुचले ग्रामीण उत्पादकों के रूप में दिखाता है।

ग्लोबल नेटवर्किंग: आंदोलनों ने राष्ट्रीय सीमाओं को पार कर लिया है। उदाहरण के लिए, भारतीय किसान यूनियन (BKU) और कर्नाटक राज्य रैयत संघ (KRRS) ने **ला वाया कैपेसिना** जैसे अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्कों के साथ साझेदारी की है और कारगिल जैसी कंपनियों के यूरोपीय कार्यालयों में प्रदर्शन किए हैं।

प्रतीकात्मक और डिजिटल एक्टिविज़्म: अंतर्राष्ट्रीय ध्यान आकर्षित करने और राष्ट्रीय सरकार पर दबाव डालने के लिए, 21वीं सदी के आंदोलन सोशल मीडिया, अंतर्राष्ट्रीय हैशटैग और प्रतीकात्मक कार्यों (जैसे "क्रेमेट मॉनसेंटो" अभियान) का उपयोग करते हैं।

4. आधुनिक अभिव्यक्तियाँ (2024–2025)

2025 के आखिर तक भी आंदोलन खेती के "कॉर्पोरेटीकरण" का विरोध कर रहे हैं:

कानूनी MSP की मांग: दुनिया भर में कीमतों में गिरावट से बचाव के तौर पर, मुख्य मांग न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) के लिए कानूनी गारंटी है।

नए कानूनों का विरोध: बिजली संशोधन बिल और नए बीज कानूनों जैसे बिल, जिनके बारे में माना जाता है कि वे कॉर्पोरेट हितों का समर्थन करते हैं, उनका विरोध जारी है।

एकजुट मोर्चे: सिर्फ स्थानीय समस्याओं के बजाय पूरे नवउदारवादी प्रोजेक्ट का विरोध करने के लिए, आंदोलन बड़े गठबंधनों में विकसित हुए हैं, जैसे कि कृषि और ट्रेड यूनियन।

13.7 सार संक्षेप

निष्कर्ष रूप में, भारत में आज़ादी से पहले और बाद में दोनों समय में किसान वर्ग के आंदोलन हुए हैं। अलग-अलग किसान वर्ग अपने-अपने संगठनों और नेताओं के ज़रिए अपने-अपने मुद्दों पर एकजुट होकर समन्वित कार्रवाई करते रहे हैं। हरित क्रांति से पहले के दौर में देश के अलग-अलग इलाकों में पारंपरिक मार्क्सवादियों (CPI और CPM), समाजवादियों और नक्सलियों द्वारा किसान आंदोलन शुरू किए गए थे। देश के उन अमीर इलाकों में, जिन्हें हरित क्रांति से फायदा हुआ था, हरित क्रांति के बाद कुलकों, यानी अमीर किसानों के आंदोलन उभरे। कुछ शिक्षाविद इन्हें "नए सामाजिक आंदोलन" कहते हैं। इनकी खासियतों में "गैर-राजनीतिक स्वभाव," ग्रामीण-शहरी बंटवारे पर फोकस, कृषि कमर्शियल सेक्टर की मुश्किलों पर फोकस, लामबंदी का एक नया तरीका और लीडरशिप का एक नया स्टाइल शामिल था। हालांकि, कुछ शिक्षाविद इस बात से असहमत हैं कि ये खासियतें सिर्फ इन्हीं आंदोलनों की हैं। इन संगठनों की लीडरशिप की भी ग्लोबलाइजेशन को लेकर अलग-अलग राय थी। इस दौरान, ग्रामीण गरीबों को संगठित करने के वैकल्पिक तरीकों में भी बढ़ोतरी हुई है, जिसमें बुद्धिजीवी एक्टिविस्ट और सिविल सोसाइटी संगठनों ने हिस्सा लिया है।

13.18 अभ्यास प्रश्न

1. कृषि आंदोलनों के अध्ययन के तरीकों के बारे में विस्तार से समझाये।
2. किसानों के आंदोलनों ने वैश्वीकरण पर कैसी प्रतिक्रिया दी? चर्चा करें।
3. आज़ादी के बाद के दौर के किसान आंदोलनों पर एक नोट लिखें।
4. आज़ादी से पहले के समय में हुए किसान आंदोलनों पर एक नोट लिखें।

13.19 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- Nadkarni, M.V. (1987). 'Farmers movement in India', Allied Publishers, New Delhi
- Joshi. P.C. (1975). 'Land Reforms in India: Trends and Perspective, Allied Publishers, New Delhi.
- Rao, M.S.A. (1979). 'Social Movements and Social Transformation in India', McMillan, New Delhi.
- Hobsbawm E.T. (1980). 'Peasantry in History: Essays in Honour of Daniel Thorner', Oxford University Press.
- Betel lie Andre (1974), 'Studies in Agrarian Social structure, Oxford University Press
- Mehta Uday (1965). 'Peasant Movement in India' in the Cell, Vol XVI, New Delhi.
- Shah Ghanshyam (2004). 'Social movement in India: A review of the literature', Sage Publication, New Delhi.
- Peasant Class Differentiation: A study in method with reference to Haryana (Oxford 1987).
- Venkatachalam, Potharaju (2015); Peasant Movement in India, International Journal of Multidisciplinary Advanced Research Trends, ISSN: 2349-7408 Volume II, Issue 2(2). September 2015.

इकाई .16 ग्रामीण व्यवस्था पर हरित क्रांति का प्रभाव (Impact of Green Revolution on Rural System)

- 16.1 प्रस्तावना (Introduction)
- 16.2 उद्देश्य (Objectives)
- 16.3 ग्रामीण विकास विभाग का इतिहास (History of Rural Development Department)
- 16.4 हरित क्रांति की उपलब्धियां (Achievements of Green Revolution)
- 16.5 उन्नत बीजों के प्रयोग में वृद्धि (Increase in Use of Improved Seeds)
- 16.6 बहु-फसली कार्यक्रम (Multi-Cropping Program)
- 16.7 आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग (Use of Modern Agricultural Equipment)
- 16.8 कृषि सेवा केन्द्रों की स्थापना (Establishment of Agricultural Service Centres)
- 16.9 मृदा परिक्षण (Soil Testing)
- 16.10 भूमि संरक्षण कार्यक्रम (Land Conservation Program)
- 16.11 कृषि शिक्षा का विस्तार (Expansion of Agricultural Education)
- 16.12 नवीन प्रौद्योगिकी तथा कृषि का आधुनिकीकरण (New technology and Modernization of Agriculture)
- 16.13 हरित क्रांति का प्रभाव (Impact of Green Revolution)
- 16.14 ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण (Empowerment of Rural Women)
- 16.15 हरित क्रांति की प्रगति (Progress of Green Revolution)
- 16.16 सारांश (Summary)
- 16.17 शब्दावली (Glossary)
- 16.18 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
- 16.19 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
- 16.20 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत प्रारंभ से ही एक कल्याणकारी देश रहा है और सभी सरकारी प्रयासों का बुनियादी उद्देश्य भारत के लोगों का हित.कल्याण करना रहा है। योजना स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही भारतीय नीति.निर्माण का एक मुख्य स्तंभ रही है और योजना की उपलब्धि ही देश की शक्ति है। ग्रामीण गरीबी के उन्मूलन के उद्देश्य को लेकर ही नीतियां और कार्यक्रम बनाए जाते रहे हैं और भारत में योजनाबद्ध विकास का यह मुख्य उद्देश्य रहा है। यह महसूस किया गया कि गरीबी उन्मूलन की चिरस्थायी कार्यनीति, प्रगति की प्रक्रिया में रोजगार के सार्थक अवसर बढ़ाने के सिद्धांत पर होनी चाहिए। गरीबी, अज्ञानता, रोगों तथा अवसरों की असमानता को दूर करना और देशवासियों को बेहतर तथा उच्च जीवन स्तर प्रदान करना ऐसी बुनियादी कार्यनीतियां हैं जिन पर विकास की सभी योजनाओं का ताना.बाना बुना गया है।

ग्रामीण विकास का अभिप्राय एक ओर जहां लोगों का बेहतर आर्थिक विकास करना है वहीं दूसरी ओर वृहत सामाजिक कायाकल्प भी करना है। ग्रामीण लोगों को आर्थिक विकास की बेहतर संभावनाएं मुहैया कराने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में लोगों की उत्तुत्तर भागीदारी सुनिश्चित करने, योजना का विकेन्द्रीकरण करने, भूमि सुधार को बेहतर ढंग से लागू करने और ऋण प्राप्ति का दायरा बढ़ाने का प्रावधान किया गया है।

भारत में हरित क्रांति की शुरुआत सन १९६६.६७ से हुई। हरित क्रांति प्रारम्भ करने का श्रेय नोबल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर नारमन बोरलॉग को जाता हैं। हरित क्रांति से अभिप्राय देश के सिंचित एवं असिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उपज देने वाले संकर तथा बौने बीजों के उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि करना हैं।

हरित क्रांति भारतीय कृषि में लागू की गई उस विकास विधि का परिणाम है, जो 1960 के दशक में पारम्परिक कृषि को आधुनिक तकनीकी द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने के रूप में सामने आई। क्योंकि कृषि क्षेत्र में यह तकनीकी एकाएक आई, तेजी से इसका विकास हुआ और थोड़े ही समय में इससे इतने आश्चर्यजनक परिणाम निकले कि देश के योजनाकारों, कृषि विशेषज्ञों तथा राजनीतिज्ञों ने इस अप्रत्याशित प्रगति को ही शहरित क्रांति की संज्ञा प्रदान कर दी। हरित क्रांति की संज्ञा इसलिये भी दी गई, क्योंकि इसके फलस्वरूप भारतीय कृषि निर्वाह स्तर से ऊपर उठकर आधिक्य स्तर पर आ चुकी थी।

16.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- ✓ ग्रामीण विकास विभाग के इतिहास से अवगत होंगे।
- ✓ हरित क्रांति की उपलब्धियों को जान सकेंगे।
- ✓ उन्नत बीजों के प्रयोग में वृद्धि की स्थिति समझ सकेंगे।
- ✓ नई विकास नीति का अध्ययन कर सकेंगे।
- ✓ बहु.फसली कार्यक्रम का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ✓ नवीन प्रोद्योगिकी तथा कृषि के आधुनिकीकरण के प्रभाव को समझ सकेंगे।
- ✓ ग्रामीण महिला सशक्तिकरण की अवधारणा से अवगत होंगे।
- ✓ हरित क्रांति का प्रभाव एवं प्रगति से अवगत होंगे।

16.3 ग्रामीण विकास विभाग का इतिहास (History of Rural Development Department)

अक्तूबर, 1974 के दौरान ग्रामीण विकास विभाग खाद्य और कृषि मंत्रालय के अंग के रूप में अस्तित्व में आया। 18 अगस्त, 1979 को ग्रामीण विकास विभाग का दर्जा बढ़ा कर उसे ग्रामीण पुनर्गठन मंत्रालय का नाम दिया गया। 23 जनवरी, 1982 को इस मंत्रालय का नामकरण ग्रामीण विकास मंत्रालय किया गया। जनवरी, 1985 के दौरान ग्रामीण विकास मंत्रालय को फिर से कृषि तथा ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधीन एक विभाग के रूप में बदल दिया गया जिसे बाद में, सितम्बर, 1985 के दौरान कृषि मंत्रालय का नाम दिया गया। 5 जुलाई, 1991 को इस विभाग को पुनरु ग्रामीण विकास मंत्रालय का दर्जा दिया गया। 2 जुलाई, 1992 को इस मंत्रालय के अधीन बंजर भूमि विकास विभाग के नाम से एक और विभाग का गठन किया गया। मार्च, 1995 के दौरान इस मंत्रालय का पुनरु नाम बदलकर ग्रामीण क्षेत्र तथा रोजगार मंत्रालय रखा गया और इसमें तीन विभाग शामिल किये गये यथा . ग्रामीण रोजगार तथा गरीबी उन्मूलन विभाग, ग्रामीण विकास विभाग तथा बंजर भूमि विकास विभाग।

वर्ष 1999 में ग्रामीण क्षेत्र तथा रोजगार मंत्रालय का एकवार फिर नाम बदलकर ग्रामीण विकास मंत्रालय रखा गया। यह मंत्रालय व्यापक कार्यक्रमों का कार्यान्वयन करके ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव लाने के उद्देश्य से एक उत्प्रेरक मंत्रालय का कार्य करता आ रहा है। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य गरीबी उन्मूलन, रोजगार सृजन, अवसंरचना विकास तथा सामाजिक सुरक्षा है। समय के साथ-साथ कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में प्राप्त अनुभव के आधार पर तथा गरीब लोगों की जरूरतों का ध्यान रखते हुए कई कार्यक्रमों में संशोधन किये गये और नये कार्यक्रम लागू किये गए। इस मंत्रालय का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण गरीबी को दूर करना तथा ग्रामीण आबादी विशेष रूप से गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे लोगों को बेहतर जीवन स्तर मुहैया करना है। इन उद्देश्यों की पूर्ति ग्रामीण जीवन और कार्यकलापों के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित कार्यक्रमों को तैयार करके, उनका विकास करके तथा उनका कार्यान्वयन करके की जाती है।

इस बात का सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि आर्थिक सुधारों का लाभ समाज के सभी वर्गों को मिले ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन स्तर के लिए महत्वपूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक अवसंरचना के पांच कारकों की पहचान की गई। ये कारक इस प्रकार हैं: स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल, आवास तथा सड़कें। इन क्षेत्रों में किये जा रहे प्रयासों को और बढ़ाने के लिए सरकार ने प्रधान मंत्री ग्रामीण योजना ;पीएमजीवाईडू शुरू की और ग्रामीण विकास मंत्रालय को प्रधान मंत्री योजना ;पीएमजीवाईडू के निम्नलिखित भागों को कार्यान्वित करने का दायित्व सौंपा गया, यथा . पेयजल आपूर्ति, आवास निर्माण तथा ग्रामीण सड़कों का निर्माण करना। नौवीं योजना अवधि के दौरान कई गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का पुनर्गठन किया गया ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे गरीब लोगों को उत्तरोत्तर लाभ देने के लिए कार्यक्रमों की दक्षता बढ़ाई जा सके। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम ;आईआरडीपीडू, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम ;डीडब्ल्यूडीसीआर, ग्रामीण दस्तौदारों को बेहतर औजारों की आपूर्ति से संबंधित कार्यक्रम ;एसआईटीआर, ग्रामीण रोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं के प्रशिक्षण से संबंधित कार्यक्रम ;टी० आर० वाई० एस० ई० एम० डूए गंगा कल्याणी योजना ;जीकेवाईडू तथा मिलियन कूप स्कीम ;एम० डब्ल्यू० क० एस० डू का विलय समग्र स्व.रोजगार योजना में किया गया जिसे स्वर्णजयंती ग्राम स्वय.रोजगार योजना ;एस० जी० एस० वाई० डू का नाम दिया गया।

स्थानीय लोगों की जरूरतों और उनकी आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए पंचायती राज संस्थानों का सहयोग इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन में लिया गया। ये संस्थाएं योजना तथा उसके कार्यान्वयन के विकेंद्रीकृत विकास का रूप हैं। मंत्रालय राज्यों सरकारों से जोर देकर यह कह रहा है कि वे पंचायती राज संस्थानों

को अपेक्षित प्रशासनिक तथा वित्तीय शक्तियां शीघ्रतिशीघ्र दें जैसाकि भारत के 73वें संविधान संशोधन में कहा गया है। 25 दिसम्बर, 2002 को पेयजल क्षेत्र के अधीन श्वा.जलधाराशू नामक नया कार्यक्रम शुरू किया गया जिसके अधीन पेयजल परियोजनाएं तैयार करने, उन्हें कार्यान्वित करने, उनका संचालन करने तथा उनका रखरखाव करने की शक्तियां पंचायतों को देने का प्रावधान है। पंचायती राज संस्थाओं का विकास प्रक्रिया में और सहयोग लेने के उद्देश्य से माननीय प्रधान मंत्री द्वारा 27 जनवरी, 2003 को शहरियालीशू नामक एक नया कार्यक्रम शुरू किया गया। हरियाली नामक कार्यक्रम शुरू करने का उद्देश्य बंजर भूमि विकास कार्यक्रमों अर्थात् आईडब्ल्यूडीपी, डीपीएपी और डीडीपी के कार्यान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं का सहयोग लेना है।

16.4 हरित क्रांति की उपलब्धियां (Achievements of Green Revolution)

हरित क्रांति के फलस्वरूप देश के कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। कृषि आगतों में हुए गुणात्मक सुधार के फलस्वरूप देश में कृषि उत्पादन बढ़ा है। खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता आई है। व्यवसायिक कृषि को बढ़ावा मिला है। कृषकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है। कृषि आधिक्य में वृद्धि हुई है। हरित क्रांति के फलस्वरूप गेहूँ, गन्ना, मक्का तथा बाजरा आदि फसलों के प्रति हेक्टेयर उत्पादन एवं कुल उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई है। हरित क्रांति की उपलब्धियों को कृषि में तकनीकी एवं संस्थागत परिवर्तन एवं उत्पादन में हुए सुधार के रूप में निम्नवत देखा जा सकता है। कृषि में तकनीकी एवं संस्थागत सुधार रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग

नवीन कृषि नीति के परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों के उपभोग की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है। 1960-1961 में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग प्रति हेक्टेयर दो किलोग्राम होता था, जो 2008-2009 में बढ़कर 128.6 किग्रा प्रति हेक्टेयर हो गया है। इसी प्रकार, 1960-1961 में देश में रासायनिक खादों की कुल खपत 2.92 लाख टन थी, जो बढ़कर 2008-2009 में 249.09 लाख टन हो गई।

16.5 उन्नत बीजों के प्रयोग में वृद्धि (Increase in Use of Improved Seeds)

देश में अधिक उपज देने वाले उन्नतशील बीजों का प्रयोग बढ़ा है तथा बीजों की नई नई किस्मों की खोज की गई है। अभी तक अधिक उपज देने वाला कार्यक्रम गेहूँ, धान, बाजरा, मक्का व ज्वार जैसी फसलों पर लागू किया गया है, परन्तु गेहूँ में सबसे अधिक सफलता प्राप्त हुई है। वर्ष 2008-2009 में 1,00,000 क्विंटल प्रजनक बीज तथा 9.69 लाख क्विंटल आधार बीजों का उत्पादन हुआ तथा 190 लाख प्रमाणित बीज वितरित किये गये।

सिंचाई सुविधाओं का विकास

नई विकास नीति के अन्तर्गत देश में सिंचाई सुविधाओं का तेजी के साथ विस्तार किया गया है। 1951 में देश में कुल सिंचाई क्षमता 223 लाख हेक्टेयर थी, जो बढ़कर 2008-2009 में 1,073 लाख हेक्टेयर हो गई। देश में वर्ष 1951 में कुल संचित क्षेत्र 210 लाख हेक्टेयर था, जो बढ़कर 2008-2009 में 673 लाख हेक्टेयर हो गया।

पौध संरक्षण

नवीन कृषि विकास विधि के अन्तर्गत पौध संरक्षण पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इसके अन्तर्गत खरपतवार एवं कीटों का नाश करने के लिये दवा छिड़कने का कार्य किया जाता है तथा टिड्डी दल पर नियन्त्रण करने का प्रयास किया जाता है। वर्तमान में समेकित कृषि प्रबन्ध के अन्तर्गत पारिस्थितिकी अनुकूल कृषि नियंत्रण कार्यक्रम लागू किया गया है।

16.6 बहु-फसली कार्यक्रम (Multi-Cropping Program)

बहुफसली कार्यक्रम का उद्देश्य एक ही भूमि पर वर्ष में एक से अधिक फसल उगाकर उत्पादन को बढ़ाना है। अन्य शब्दों में भूमि की उर्वरता शक्ति को नष्ट किये बिना, भूमि के एक इकाई क्षेत्र से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करना ही बहुफसली कार्यक्रम कहलाता है। 1966-1967 में 36 लाख हेक्टेयर भूमि में बहुफसली कार्यक्रम लागू किया गया। वर्तमान समय में भारत की कुल संचित भूमि के 71 प्रतिशत भाग पर यह कार्यक्रम लागू है।

16.7 आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग (Use of Modern Agricultural Equipment)

नई कृषि विकास विधि एवं हरित क्रान्ति में आधुनिक कृषि उपकरणों, जैसे- ट्रैक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, बुलडोजर तथा डीजल एवं बिजली के पम्पसेटों आदि ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस प्रकार कृषि में पशुओं तथा मानव शक्ति का प्रतिस्थापन संचालन शक्ति द्वारा किया गया है, जिससे कृषि क्षेत्र के उपयोग एवं उत्पादकता में वृद्धि हुई है।

16.8 कृषि सेवा केन्द्रों की स्थापना (Establishment of Agricultural Service Centres)

कृषकों में व्यवसायिक साहस की क्षमता को विकसित करने के उद्देश्य से देश में कृषि सेवा केन्द्र स्थापित करने की योजना लागू की गई है। इस योजना में पहले व्यक्तियों को तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाता है, फिर इनसे सेवा केन्द्र स्थापित करने को कहा जाता है। इसके लिये उन्हें राष्ट्रीयकृत बैंकों से सहायता दिलाई जाती है। अब तक देश में कुल 1,314 कृषि सेवा केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं। कृषि उद्योग निगम

सरकारी नीति के अन्तर्गत 17 राज्यों में कृषि उद्योग निगमों की स्थापना की गई है। इन निगमों का कार्य कृषि उपकरणों व मशीनरी की पूर्ति तथा उपज प्रसंस्करण एवं भण्डारण को प्रोत्साहन देना है। इसके लिये यह निगम किराया क्रय पद्धति के आधार पर ट्रैक्टर, पम्पसेट एवं अन्य मशीनरी को वितरित करता है। विभिन्न निगमों की स्थापना

16.9 मृदा परीक्षण (Soil Testing)

कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों की मिट्टी का परीक्षण सरकारी प्रयोगशालाओं में किया जाता है। इसका उद्देश्य भूमि की उर्वरा शक्ति का पता लगाकर कृषकों को तदुनुरूप रासायनिक खादों एवं उत्तम बीजों के प्रयोग की सलाह देना है। वर्तमान समय में इन सरकारी प्रयोगशालाओं में प्रतिवर्ष सात लाख नमूनों का परीक्षण किया जाता है। कुछ चलती फिरती प्रयोगशालाएं भी स्थापित की गई हैं, जो गांव-गांव जाकर मौके पर मिट्टी का परीक्षण करके किसानों को सलाह देती हैं।

16.10 भूमि संरक्षण कार्यक्रम (Land Conservation Program)

कृषि योग्य भूमि को क्षरण से रोकने तथा ऊबड़-खाबड़ भूमि को समतल बनाकर कृषि योग्य बनाया जाता है। यह कार्यक्रम उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात तथा मध्य प्रदेश में तेजी से लागू है। कृषि शिक्षा एवं अनुसन्धान की स्थापना की गई है।

16.11 कृषि शिक्षा का विस्तार (Expansion of Agricultural Education)

सरकार की कृषि नीति के अन्तर्गत कृषि शिक्षा का विस्तार करने के लिये पन्तनगर में पहला कृषि विश्वविद्यालय स्थापित किया गया है। आज कृषि और इससे सम्बन्धित क्षेत्रों में उच्च शिक्षा के लिये 4 कृषि

विश्वविद्यालय, 39 राज्य कृषि विश्वविद्यालय और इम्फाल में एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय है। कृषि अनुसन्धान हेतु 9 भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद है, जिसके अन्तर्गत 53 केन्द्रीय संस्थान, 32 राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, 12 परियोजना निदाशाल 64 अखिल भारतीय समन्वय अनुसन्धान परियोजनायें हैं।

इसके अतिरिक्त देश में 527 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं, जो शिक्षण एवं प्रशिक्षण का कार्य कर रहे हैं। कृषि शिक्षा एवं प्रशिक्षण की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये विभिन्न संस्थाओं के कम्प्यूटरीकरण और इन्टरनेट की सुविधा प्रदान की गई है। ;बद्ध

कृषि उत्पादन में सुधार उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि-

हरित क्रान्ति अथवा भारतीय कृषि में लागू की गई नई विकास विधि का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि देश में फसलों के क्षेत्रफल में वृद्धि, कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि हो गई। विशेषकर गेहूँ, बाजरा, धान, मक्का तथा ज्वार के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई। जिसके परिणाम स्वरूप खाद्यान्नों में भारत आत्मनिर्भर सा हो गया। 1951-1952 में देश में खाद्यान्नों का कुल उत्पादन 5.09 करोड़ टन था, जो क्रमशः बढ़कर 2008-2009 में बढ़कर 23.38 करोड़ टन हो गया। इसी तरह प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में भी पर्याप्त सुधार हुआ है। वर्ष 1950-1951 में खाद्यान्नों का उत्पादन 522 किग्रा प्रति हेक्टेयर था, जो बढ़कर 2008-2009 में 1,893 किग्रा प्रति हेक्टेयर हो गया। हाँ, भारत में खाद्यान्न उत्पादनों में कुछ उच्चावचन भी हुआ है, जो बुरे मौसम आदि के कारण रहा जो यह सिद्ध करता है कि देश में कृषि उत्पादन अभी भी मौसम पर निर्भर करता है।

कृषि के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन-

हरित क्रान्ति के फलस्वरूप खेती के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन हुआ है और खेती व्यवसायिक दृष्टि से की जाने लगी है। जबकि पहले सिर्फ पेट भरने के लिये की जाती थी। देश में गन्ना, कपास, पटसन तथा तिलहनों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। कपास का उत्पादन 1960-1961 में 5.6 मिलियन गांठ था, जो बढ़कर 2008-2009 में 27 मिलियन गांठ हो गया। इसी तरह तिलहनों का उत्पादन 1960-1961 में 7 मिलियन टन था, जो बढ़कर 2008-2009 में 28.2 मिलियन टन हो गया। इसी तरह पटसन, गन्ना, आलू तथा मूंगफली आदि व्यवसायिक फसलों के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। वर्तमान समय में देश में बागबानी फसलों, फलों, सब्जियों तथा फूलों की खेती को भी बढ़ावा दिया जा रहा है।

कृषि बचतों में वृद्धि-

उन्नतशील बीजों, रासायनिक खादों, उत्तम सिंचाई तथा मशीनों के प्रयोग से उत्पादन बढ़ा है। जिससे कृषकों के पास बचतों की उल्लेखनीय मात्रा में वृद्धि हुई है। जिसको देश के विकास के काम में लाया जा सका है। अग्रगामी तथा प्रतिगामी संबंधों में मजबूती

16.12 नवीन प्रौद्योगिकी तथा कृषि का आधुनिकीकरण (New technology and Modernization of Agriculture)

कृषि तथा उद्योग के परस्पर सम्बन्ध को और भी मजबूत बना दिया है। पारम्परिक रूप में यद्यपि कृषि और उद्योग का अग्रगामी सम्बन्ध पहले से ही प्रगाढ़ था, क्योंकि कृषि क्षेत्र द्वारा उद्योगों को अनेक आगत उपलब्ध कराये जाते हैं। परन्तु इन दोनों में प्रतिगामी सम्बन्ध बहुत ही कमजोर था, क्योंकि उद्योग निर्मित वस्तुओं का कृषि में बहुत ही कम उपयोग होता था। परन्तु कृषि के आधुनिकीकरण के फलस्वरूप अब कृषि में उद्योग निर्मित आगतों, जैसे. कृषि यन्त्र एवं रासायनिक उर्वरक आदि, की मांग में भारी वृद्धि हुई है, जिससे

कृषि का प्रतिगामी सम्बन्ध भी सुदृढ़ हुआ है। अन्य शब्दों में कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र के सम्बन्धों में अधिक मजबूती आई है।

इस तरह स्पष्ट है कि हरित क्रान्ति के फलस्वरूप देश में कृषि आगतों एवं उत्पादन में पर्याप्त सुधार हुआ है। इसके फलस्वरूप कृषक, सरकार तथा जनता सभी में यह विश्वास जाग्रत हो गया है कि भारत कृषि पदार्थों के उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर ही नहीं हो सकता, बल्कि निर्यात भी कर सकता है।

देश में योजना काल में कृषि के क्षेत्र में पर्याप्त विकास हुआ है। कुल कृषि क्षेत्र बढ़ा है, फसल के स्वरूप में परिवर्तन हुआ है, सिंचित क्षेत्र बढ़ा है, रासायनिक खादों के उपयोग में वृद्धि हुई है तथा आधुनिक कृषि यन्त्रों का उपयोग होने लगा है। इन सब बातों के होते हुये भी अभी तक देश में कृषि का विकास उचित स्तर तक नहीं पहुँच पाया है, क्योंकि यहाँ प्रति हेक्टेयर कृषि उत्पादन अन्य विकसित देशों की तुलना में कम है। अभी अनेक कृषि उत्पादों का आयात करना पड़ता है। क्योंकि उनका उत्पादन मांग की तुलना में कम है। कृषि क्षेत्र का अभी भी एक बड़ा भाग असिंचित है। कृषि में यन्त्रीकरण का स्तर अभी भी कम है, जिससे उत्पादन लागत अधिक आती है। कृषकों को विभागीय सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलती हैं, जिससे कृषि विकास में बाधा उत्पन्न होती है। अतः इस बात की आवश्यकता है कि कृषि में तकनीकी एवं संस्थागत सुधारों को अधिक कारगर ढंग से लागू कर कृषि क्षेत्र का और अधिक विकास किया जाये। हरित क्रान्ति का विस्तार

केन्द्रीय बजट 2010-2011 में कृषि क्षेत्र के विकास के लिये बनाई गयी कार्य योजना के पहले घटक में ग्राम सभाओं तथा किसान परिवारों के सक्रिय सहयोग से देश के पूर्वी क्षेत्र बिहार, छत्तीसगढ़, पूर्वी उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा उड़ीसा में हरित क्रान्ति के विस्तार के लिये 400 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

16.13 हरित क्रांति का प्रभाव (Impact of Green Revolution)

देश में हरित क्रान्ति के फलस्वरूप कुछ फसलों के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है, खाद्यान्नों के आयात में कमी आई है, कृषि के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन आया है, फिर भी इस कार्यक्रम में कुछ कमियाँ परिलक्षित होती हैं। हरित क्रान्ति की प्रमुख कमियों एवं समस्याओं को निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है-

1. **प्रभाव -**हरित क्रान्ति का प्रभाव कुछ विशेष फसलों तक ही सीमित रहा, जैसे. गेहूँ, ज्वार, बाजरा। अन्य फसलों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। यहाँ तक कि चावल भी इससे बहुत ही कम प्रभावित हुआ है। व्यापारिक फसलें भी इससे अप्रभावित ही हैं।
2. **पूँजीवादी कृषि को बढ़ावा-** अधिक उपजाऊ किस्म के बीज एक पूँजी.गहन कार्यक्रम हैं, जिसमें उर्वरकों, सिंचाई, कृषि यन्त्रों आदि आगतों पर भारी मात्रा में निवेश करना पड़ता है। भारी निवेश करना छोटे तथा मध्यम श्रेणी के किसानों की क्षमता से बाहर हैं। इस तरह, हरित क्रान्ति से लाभ उन्हीं किसानों को हो रहा है, जिनके पास निजी पम्पिंग सेट, ट्रैक्टर, नलकूप तथा अन्य कृषि यन्त्र हैं। यह सुविधा देश के बड़े किसानों को ही उपलब्ध है। सामान्य किसान इन सुविधाओं से वंचित हैं।
3. **संस्थागत सुधारों की आवश्यकता पर बल नहीं-** नई विकास विधि में संस्थागत सुधारों की आवश्यकता की सर्वथा अवहेलना की गयी है। संस्थागत परिवर्तनों के अन्तर्गत सबसे महत्वपूर्ण घटक भू.धारण की व्यवस्था है। इसकी सहायता से ही तकनीकी परिवर्तन द्वारा अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। देश में भूमि सुधार कार्यक्रम सफल नहीं रहे हैं तथा लाखों कृषकों को आज भी भू.धारण की निश्चितता नहीं प्रदान की जा सकी है। श्रम.विस्थापन की समस्या . हरित क्रान्ति के अन्तर्गत प्रयुक्त कृषि यन्त्रीकरण

- के फलस्वरूप श्रम.विस्थापन को बढ़ावा मिला है। ग्रामीण जनसंख्या का रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन करने का यह भी एक कारण है।
4. **आय की बढ़ती असमानता** - कृषि में तकनीकी परिवर्तनों का ग्रामीण क्षेत्रों में आय.वितरण पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। डॉ॰ वीणू केणू आरणू वीणू राव के अनुसार, यह बात अब सर्वविदित है कि तथाकथित हरित क्रान्ति, जिसने देश में खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ाने में सहायता दी है, के साथ ग्रामीण आय में असमानता बढ़ी है, बहुत से छोटे किसानों को अपने काश्तकारी अधिकार छोड़ने पड़े हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक और आर्थिक तनाव बढ़े हैं।
 5. **आवश्यक सुविधाओं का अभाव**- हरित क्रान्ति की सफलता के लिए आवश्यक सुविधाओं यथा. सिंचाई व्यवस्था, कृषि साख, आर्थिक जोत तथा सस्ते आगतों आदि के अभाव में कृषि.विकास के क्षेत्र में वांछित सफलता नहीं प्राप्त हो पा रही है।
 6. **क्षेत्रीय असन्तुलन** - हरित क्रान्ति का प्रभाव पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु आदि राज्यों तक ही सीमित है। इसका प्रभाव सम्पूर्ण देश पर ना फैल पाने के कारण देश का सन्तुलित रूप से विकास नहीं हो पाया। इस तरह, हरित क्रान्ति सीमित रूप से ही सफल रही है।

16.14 ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण (Empowerment of Rural Women)

ग्रामीण भारत के विकास के लिए महत्वापूर्ण है। महिलाओं को विकास की मुखेधारा में लाना भारत सरकार का मुख्य दायित्व रहा है। इसलिए गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों में महिलाओं के योगदान का भी प्रावधान किया गया है ताकि इस समाज के इस वर्ग के लिए पर्याप्त निधियों की व्यवस्था की जा सके। संविधान (73वां) संशोधन अधिनियम, 1992 में महिलाओं के लिए चुनिन्दा पदों के आरक्षण की व्यवस्था है। भारत के संविधान में आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों को तैयार करके निष्पादित करने का दायित्वा पंचायतों को सौंपा है, और कई केन्द्र प्रायोजित योजनाएं पंचायतों के जरिये कार्यान्वित की जा रही हैं। इस प्रकार, पंचायतों की महिला सदस्यों और महिला अध्यक्षों, जो बुनियादी रूप से पंचायतों की नई सदस्यां हैं, को अपेक्षित कौशल प्राप्त, करना होगा और उन्हें नेतृत्व का निर्वाह करने तथा निर्णय में सहभागी होने के लिए अपनी उचित भूमिकाओं को निभाने हेतु उचित प्रशिक्षण देना होगा। पंचायती राज संस्थाओं के चुनिन्दा प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण देने का दायित्व बुनियादी रूप से राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों का है। ग्रामीण विकास मंत्रालय राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को भी कुछ वित्तीय सहायता मुहैया कराता है ताकि प्रशिक्षण कार्यक्रमों के स्तर को बेहतर बनाया जा सके और पंचायती राज संस्थाओं के चुने हुए सदस्यों और कार्यकर्ताओं के लिए क्षमता निर्माण पहलों की जा सकें।

मंत्रालय दो अंतर्राष्ट्रीय संगठनों अर्थात् सेंटर ऑन इंटीग्रेटेड रूरल डेवलेपमेंट ऑफ एशिया एंड पेसिफिक (सीआईआरडीएपी) तथा एफ्रो.एशियन रूरल डेवलेपमेंट ऑर्गनाइजेशन (एआरडीओ) के लिए नोडल विभाग है।

ग्रामीण विकास विभाग द्वारा स्व.रोजगार सृजन योजना तथा मजदूरी रोजगार योजना, ग्रामीण गरीबों के लिए मकानों के प्रावधान और लघु सिंचाई साधन योजना, बेसहारा लोगों के लिए सामाजिक सहायता योजनाओं और ग्रामीण सड़क निर्माण योजना का क्रियान्वयन किया जाता है। इसके अलावा, इस विभाग द्वारा डीआरडी, प्रशासन, पंचायती राज संस्थाओं, प्रशिक्षण तथा अनुसंधान, मानव संसाधन विकास, स्वैच्छिक कार्य विकास आदि के लिए सहायक सेवाएं एवं अन्य गुणवत्ता संसाधन उपलब्ध कराए जाते हैं ताकि कार्यक्रमों का समुचित कार्यान्वयन हो सके। ग्रामीण विकास विभाग द्वारा संचालित मुख्य कार्यक्रम इस प्रकार हैं . महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (महात्मा गांधी नरेगा) प्रधानमंत्री ग्राम सड़क

योजना (पीएमजीएसवाई) इंदिरा आवास योजना तथा स्वर्णजयंती ग्राम स्वर्ण.रोजगार योजना (एसजीएसवाई) अब राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के नाम से ज्ञात (एनआरएलएम) राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एनएसएपी) तथा ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं का प्रावधान (पीयूआरए) किया गया है।

भूमि संसाधन विभाग द्वारा देश में बंजर भूमि का विकास करके बायोमास उत्पादन बढ़ाने से संबंधित योजनाओं का कार्यान्वयन किया जाता है। इस विभाग द्वारा सहायता सेवाएं तथा अन्य गुणवत्ताई युक्त कार्य भी किये जाते हैं जैसे भूमि सुधार, राजस्वन पद्धति की बेहतर तथा भू.अभिलेख। यह विभाग देश में मरू क्षेत्रों और सूखे प्रवण क्षेत्रों का विकास भी करता है। भूमि संसाधन विभाग के मुख्य कार्यक्रम इस प्रकार हैं . राष्ट्रीय भू.अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम (एनएलआरएमपी) तथा एकीकृत वाटर शेड प्रबंधन कार्यक्रम (आईडब्ल्यूएमपी)। इनका उद्देश्य अवक्रमित भूमि की बंजर भूमि में मिट्टी तथा नमी संरक्षण और उत्पादकता को बढ़ाना है ताकि लोगों की आय को बढ़ाया जा सके।

पेयजल तथा सफाई व्यवस्था का प्रावधान और ग्रामीण गरीबों को सफाई सुविधाएं देने का प्रावधान पेयजल आपूर्ति विभाग के मुख्य कार्यकलाप हैं। पेयजल आपूर्ति विभाग के मुख्य कार्यक्रम इस प्रकार हैं - सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान (टीएससी) तथा राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम (एनआरडीडब्ल्यूभीपी)।

16.15 हरित क्रांति की प्रगति (Progress of Green Revolution)

1. **संस्थागत परिवर्तनों को प्रोत्साहन** - हरित क्रान्ति की सफलता के लिए भूमि सुधार कार्यक्रमों को प्रभावी और विस्तृत रूप से लागू किया जाना चाहिए। बटाईदारों को स्वामित्व का अधिकार दिलाया जाना चाहिए। सीमा निर्धारण से प्राप्त अतिरिक्त भूमि को भूमिहीन कृषकों में वितरित किया जाना चाहिए। चकबन्दी का प्रभावी बनाकर जोतों के विभाजन पर प्रभावी रोक लगायी जानी चाहिए।
2. **कृषि वित्त की सुविधा** - कृषि वित्त की सुविधाएँ बढ़ाते समय छोटे किसानों को रियायती दर पर साख की सुविधा उपलब्ध करायी जानी चाहिए, ताकि वे आवश्यक उन्नत बीज, रासायनिक खाद तथा कृषि उपकरण क्रय कर सकें।
3. **रोजगार के अवसरों में वृद्धि** - श्रम प्रधान तकनीकों को अपनाया जाना चाहिए तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बेकारी की समस्या के समाधान के लिए कुटीर एवं ग्राम उद्योगों का तेजी से विस्तार किया जाना चाहिए।
4. **सिंचाई के साधनों का विकास** - देश में सिंचाई की सुविधाओं का पर्याप्त विकास किया जाना चाहिए, ताकि कृषक अधिक उपज देने वाली किस्मों का पूरा लाभ उठा सकें। इस सन्दर्भ में लघु सिंचाई परियोजनाओं के विस्तार पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
5. **अन्य संरचनात्मक सुधारों का विस्तार** - कृषि के विकास के लिये आवश्यक बिजली, परिवहन सहित अन्य संरचनात्मक सुविधाओं का विकास किया जाना चाहिए। तभी हरित क्रान्ति अन्य फसलों तथा क्षेत्रों तक फैल सकेगी।
6. **हरित क्रान्ति का अन्य फसलों तक फैलाव** - हरित क्रान्ति की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि इसका विस्तार चावल तथा अन्य फसलों की खेती तक किया जाये। चावल के साथ दालें, कपास, गन्ना, तिलहन, जूट आदि व्यापारिक फसलों के सम्बंध में भी उत्पादन वृद्धि संतोषजनक नहीं रही है। अतः इन फसलों को भी हरित क्रान्ति के प्रभाव क्षेत्र में शामिल किया जाना चाहिए।
7. **छोटे खेत और छोटे किसानों को सम्बद्ध करना** - छोटे खेतों तथा छोटे किसानों को भी हरित क्रान्ति से सम्बद्ध करना चाहिए। इसके लिये आवश्यक है कि- (1) भूमि सुधार कार्यक्रमों को शीघ्रता और प्रभावी ढंग से लागू किया जाना चाहिए, (2) छोटे-छोटे किसानों को उन्नत बीज, खाद आदि आवश्यक चीजों को खरीदने के लिये उदार शर्तों एवं दरों पर साख सुविधाएँ उपलब्ध करायी जानी चाहिए, (3) साधारण कृषि उपकरणों की खरीद के सम्बन्ध में दी गयी सुविधाओं के अतिरिक्त बड़ी.बड़ी फार्म मशीनरी

यथा.ट्रैक्टर, हार्वेस्टर आदि को सरकार की ओर से किराए पर दिया जाना चाहिए, (4) बहुत छोटी-छोटी जोतों वाले किसानों को सहकारी खेती को अपनाने के लिये प्रेरित किया जाना चाहिए।

8. **समन्वित फार्म नीति** - हरित क्रान्ति की सफलता के लिये समन्वित फार्म नीति अपनायी जानी चाहिए, ताकि फार्म तकनीकी व आगतों के मूल्यों के सम्बन्ध में एक उचित नीति अपनाई जा सके तथा कृषकों को उन्नतशील बीज, खाद, कीटनाशक तथा कृषि यन्त्र एवं उपकरण उचित मूल्य पर समय पर उपलब्ध हो सकें। इसके अतिरिक्त सरकार को समस्त कृषि उपजों की बिक्री का प्रबन्ध किया जाना चाहिए तथा उचित मूल्य पर कृषि उत्पादों को खरीदने की गारन्टी भी देनी चाहिए।
9. **नयी राष्ट्रीय कृषि नीति**- केन्द्र सरकार ने श्रयी राष्ट्रीय कृषि नीति की घोषणा 28 जुलाई 2000 को की थी। इस नीति में सरकार ने 2020 तक कृषि के क्षेत्र में प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा है। नयी कृषि नीति का वर्णन शइन्द्रधनुष क्रान्ति के रूप में किया गया है, जिसमें सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देश के कृषि क्षेत्र में विभिन्न क्रान्तियों जैसे 'हरित क्रान्ति' (खाद्यान्न उत्पादन), 'श्वेत क्रान्ति' (दुग्ध उत्पादन), 'पीली क्रान्ति' (तिलहन उत्पादन), 'नीली क्रान्ति' (मत्स्य उत्पादन), 'लाल क्रान्ति' (मांस/टमाटर उत्पादन), 'सुनहरी क्रान्ति' (सेब उत्पादन), 'भूरी क्रान्ति' (उर्वरक उत्पादन), 'ब्राउन क्रान्ति' (गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोत), 'रजत क्रान्ति' (अण्डे/मुर्गी) एवं 'खाद्यान्न श्रंखला क्रान्ति' (खाद्यान्न/सब्जी/फलों को सड़ने से बचाना) को एक साथ लेकर चलना होगा, इसी को 'इन्द्रधनुषी क्रान्ति' कहा गया है।

16.16 सारांश (Summary)

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा निम्नलिखित प्रमुख कार्यक्रमों को ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित किया जा रहा है-

1. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा)।
2. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम) स्वरोजगार और कौशल विकास के लिए योजना। प्रधान मंत्री आवास योजना ग्रामीण (पीएमएवाईजी) बीपीएल परिवारों को आवास उपलब्ध कराने के लिए योजना।
3. प्रधान मंत्री ग्राम सड़क योजना (पीएमजीएसवाई) गुणवत्तापूर्ण सड़कों के निर्माण के लिए योजना।
4. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एनएसएपी) सामाजिक पेंशन के लिए योजना।
5. एकीकृत जलग्रहण प्रबंधन कार्यक्रम (आईडब्ल्यूएमपी) भूमि की उत्पादकता में सुधार लाने के लिए योजना।

इसके अलावा, मंत्रालय के पास ग्रामीण पदाधिकारियों, सूचना, शिक्षा और संचार, निगरानी और मूल्यांकन, क्षमता के विकास के लिए योजनाएं हैं। वर्तमान में कृषि कार्य हेतु आवंटित बजट 86000 करोड़ रुपये वित्त वर्ष 2016.17 के लिए ग्रामीण विकास विभाग के योजना मद के तहत प्रदान की गई है। 9000 करोड़ रुपये की अतिरिक्त राशि विभाग को आरई चरण में आवंटित की गई है जिससे योजना मद 95000 करोड़ रुपये तक बढ़ाने का प्रावधान है। 105447.88 करोड़ रुपये वित्त वर्ष 2017.18 के लिए ग्रामीण विकास विभाग के योजना मद के तहत प्रदान की गई है।

अधिक उपज देने वाली किस्मों एवं उत्तम सुधरे हुये बीजों पर निर्भर करती है। इसके लिये देश में 400 कृषि फार्म स्थापित किये गये हैं। 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम की स्थापना की गई है। 1963 में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम की स्थापना की गई, जिसका मुख्य उद्देश्य कृषि उपज का विपणन, प्रसंस्करण एवं भण्डारण करना है। विश्व बैंक की सहायता से राष्ट्रीय बीज परियोजना भी प्रारम्भ की गई, जिसके अन्तर्गत

कई बीज निगम बनाये गये हैं। भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारिता विपणन संघ ;नेफेड एक शीर्ष विपणन संगठन है, जो प्रबन्धन, विपणन एवं कृषि सम्बंधित चुनिन्दा वस्तुओं के आयात निर्यात का कार्य करता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना कृषि वित्त के कार्य हेतु की गई है। कृषि के लिये खाद्य निगम एवं उर्वरक साख गारन्टी निगमए ग्रामीण विद्युतीकरण निगम आदि भी स्थापित किए गए हैं।

16.17 शब्दावली (Glossary)

हरित क्रांति - हरित क्रांति से अभिप्राय देश के सिंचित एवं असिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उपज देने वाले संकर तथा बौने बीजों के उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि करना है।

16.18 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- पंचायतों का सशक्तीकरण - राकेश चतुर्वेदी 2003 “उद्योग नगर प्रकाशन, ए-32, अशोक नगर, गाजियाबाद।
- ‘विकेन्द्रीकरण’ व्यवस्था में ग्राम-पंचायतों, क्षेत्र पंचायतों तथा जिला पंचायतों को प्रदत्त प्रशासनिक एवं वित्तीय अधिकार: 1998 सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग यू.पी. लखनऊ।
- 3.नागरिक चार्टर: पंचायती राज निदेशालय, उ.प्र. छठा तल जवाहर भवन लखनऊ।
- पंचायती राज सशक्तीकरण हेतु क्षमता विकास: सहभागी शिक्षण केन्द्र लखनऊ तथा पंचायती राज मंत्रालय भारत सरकार एवं प्रिया, नई दिल्ली।
- सामाजिक अनुसंधान (शोध): एम एल गुप्ता डी.डी. शर्मा - साहित्य भवन हास्पिटल रोड आगरा-282003
- हिस्ट्री ऑफ पंचायती राज इन इंडिया: एच.टी.टी.पी./वीकीपीडिया ओ.आर.जी. इन
- रिथिकिंग दा रोटेशन टर्म ऑफ रिजर्वड सीटस् फॉर वीमन इन पंचायती राज: डा. नुपुर तिवारी-कॉमन वेल्थ जनरल ऑफ लोकल गवर्नरनेन्स Wikipedia, 2009
- Deaton, A. and Dreze, J. (2002) “Poverty and Inequality in India”, Economic and Political Weekly, September 7, 3729-48
- Dreze, Jean and Sen, Amartya (2002) India : Development and Participation, New Delhi: Oxford University Press.
- 10 Desai, Vasant (1988) Rural development : Experiment in Rural Development, Bombay : Himalaya Publishing House.
- 11.Harris, John (1986) Rural Development : Theories of Peasant Economy and Agrarian Change, Hutchinson, ELBS.

16.19 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- पंचायती राज सशक्तीकरण हेतु क्षमता विकास: सहभागी शिक्षण केन्द्र लखनऊ तथा पंचायती राज मंत्रालय भारत सरकार एवं प्रिया, नई दिल्ली।

- सामाजिक अनुसंधान (शोध): एम एल गुप्ता डी.डी. शर्मा - साहित्य भवन हास्पिटल रोड आगरा-282003
- Kothari, Rajani (1974) India and the Alternative framework for Rural Development, Development Dialogue, Uppasala: DHF. Mohanty, Siba Sankar (2007) "Rural Indebtedness in India: An Obstacle for Development, Counter Currents, Org. 13 July, 2007.

16.20 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

1. हरित क्रांति से क्या समझते हैं।
2. हरित क्रांति की प्रगति एवं प्रभाव का वर्णन कीजिए।
3. महिला सशक्तीकरण में हरित क्रांति की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

इकाई-17

Agricultural Extension Services

कृषि विस्तार सेवाएँ

इकाई की रूपरेखा

- 17.1 उद्देश्य
- 17.2 परिचय
- 17.3 कृषि प्रसार की अवधारणा और दायरा
- 17.4 कृषि प्रसार के लिए सेवाएँ स्थापित करने के विभिन्न तरीके
- 17.5 कृषि प्रसार सेवा प्रणाली का विकास
 - 17.5.1 स्वतंत्रता के बाद भारत में कृषि प्रसार
 - 17.5.2 टी. और वी. प्रसार प्रणाली
- 17.6 वर्तमान प्रसार सेवा प्रणाली
 - 17.6.1 प्रसार संगठन: विभिन्न स्तरों पर संरचना
 - 17.6.2 कृषि प्रसार की वर्तमान स्थिति
- 17.7 कृषि विश्वविद्यालयों और ICAR संस्थानों की प्रसार भूमिका
- 17.8 प्रसार सेवाओं का निजीकरण
- 17.9 प्रसार सेवा संगठन में नए विकास
- 17.10 प्रसार सेवाओं के साथ मुद्दे और कठिनाइयाँ
- 17.11 अभ्यास प्रश्न
- 17.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

17.1 उद्देश्य

इस इकाई में कृषि प्रसार सेवाएँ संरचना के मूल जानकारी की बातों को प्रसार से बताया गया है और साथ ही ,आप भारत के कृषि प्रसार सेवाएँ संरचना के बारे में भी जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन करने के बाद, आप जान सकेंगे की :

- कृषि प्रसार की सेवाएँ की खासियतों को बताना,
- भारत के कृषि प्रसार सेवा की संरचना के विकास के बारे में बताना,
- भारत में कृषि प्रसार सेवाएँ संरचना के संगठनात्मक संरचना के बारे में बताना और इस प्रणाली की कमियों और समस्याओं के साथ-साथ उनके समाधानों के बारे में बताना।

17.2 परिचय

खेती ग्रामीण भारत की नींव है, और उत्पादन बढ़ाने के लिए, इसे आधुनिक बनाना और बदलना ज़रूरी है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए एक मुख्य औजार कृषि प्रसार सेवा की संरचना है। असल में, भारत सबसे बड़े कृषि प्रसार सेवा का एक संघ है। कृषि प्रसार सेवा के बड़े समाज ने आज़ादी के बाद खेती के उत्पादन में ज़बरदस्त बढ़ोतरी में अहम भूमिका निभाई, खासकर हरित क्रांति के ज़रिए। इसलिए, यह समझना बहुत ज़रूरी है कि यह ग्रामीण भारत के विकास और खेती में बदलाव में कैसे काम करता है। कृषि प्रसार सेवा संरचना को "उन सभी संगठनों का समूह" के रूप में परिभाषित किया गया है जो खेती से जुड़े लोगों की समस्याओं को हल करने और अपनी आजीविका और भलाई को बेहतर बनाने के लिए जानकारी, कौशल और टेक्नोलॉजी हासिल करने में मदद करते हैं (डेविस, बाबू, और रंगासा, 2020)। कई लेखकों ने कृषि प्रसार सेवा संरचना की गुणवत्ता को लेकर किसानों की संतुष्टि पर अनुसंधान किया जिसमें यह दिखाया गया कि किसानों की संतुष्टि न केवल सेवाओं की उपलब्धता, पहुंच, विविधता, प्रासंगिकता और प्रभावशीलता पर निर्भर करती है, बल्कि खेत के आकार, खेती की गतिविधियों की विविधता, सालाना आय और प्रसार सेवाओं में भागीदारी पर भी निर्भर करती है (कस्सेम एट अल., 2021)।

इस इकाई में आपको देश की मौजूदा कृषि प्रसार और कृषि आन्दोलन सेवाओं से परिचित कराया जायेगा, जिसमें कृषि विश्वविद्यालय और अनुसंधान संघटन द्वारा दी जाने वाली सेवाएं भी शामिल हैं। कृषि प्रसार के स्थापना में हुए बदलावों को समझने में आपकी मदद करने के लिए, इस क्षेत्र का एक संक्षिप्त इतिहास भी दिया गया है। साथ में मौजूदा कृषि प्रसार सेवाओं और उनकी समस्याओं की भी समीक्षा करायी जाएगी।

17.3 कृषि प्रसार की अवधारणा और दायरा

कृषि प्रसार का मूल सिद्धांत यह है कि लोगों में शिक्षा के ज़रिए सीखने और अपने अनुभवों को बढ़ाने की बहुत ज्यादा क्षमता होती है, और बदलाव ज़बरदस्ती के बजाय शैक्षिक तरीकों से हासिल किया जा सकता है। **एंसमिंगर (1957)** ने कहा कि "प्रसार शिक्षा है और इसका मकसद उन लोगों के रवैये और आदतों को बदलना है जिनके साथ काम किया जाता है," जो शिक्षा के काम को दिखाता है।

शोध पर आधारित जानकारी फैलाने, तकनीकी कौशल विकास करने और उत्पादकता और जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बनाने के लिए सोच में बदलाव लाने के ज़रिए, कृषि प्रसार एक गैर-औपचारिक शैक्षिक प्रक्रिया है। है जिसका उद्देश्य किसानों को सशक्त बनाना है। विपणन, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, कृषि-घरेलू में सुधार, युवा विकास और ग्रामीण नेतृत्व, ये सभी इसके दायरे में आते हैं, जो फसल उत्पादन से कहीं आगे तक जाता है।

हालांकि, **मोशर (1979)** का मानना है कि विकासशील देशों के मामले में कृषि प्रसार का दायरा सिर्फ शिक्षा तक सीमित नहीं रहना चाहिए, जहाँ किसानों की सबसे ज़रूरी ज़रूरत सिर्फ उनके पास पहले से मौजूद संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल करना नहीं है, बल्कि एक या ज्यादा खास संसाधनों तक पहुँच बनाना है। इसका मतलब है कि प्रसार प्रतिनिधि का काम सिर्फ किसानों को खेती के बेहतर तरीकों के बारे में सिखाना नहीं है, बल्कि बेहतर बीज, खाद, ऋण, विपणन सुविधाओं वगैरह जैसी चीज़ों की सप्लाई के लिए ज़रूरी इंतज़ाम करना भी है।

हालांकि, **कृषि राष्ट्रीय आयोग (1976)** के अनुसार, प्रसार का मतलब "खेती करने वाले परिवार के सदस्यों और खेती के उत्पादन में सीधे या परोक्ष रूप से शामिल दूसरे लोगों के लिए स्कूल के बाहर की अनौपचारिक शिक्षा और सेवाएं हैं, ताकि वे फसल, पशुधन और मछली पालन के उत्पादन, प्रबंधन, संरक्षण और विपणन में बेहतर तरीकों को अपना सकें।" ज्ञान फैलाने और किसी खास बेहतर तरीके को अपनाने के साथ-साथ, कृषि प्रसार का मकसद किसानों का खेती से जुड़े मुद्दों पर नज़रिया बदलना भी है, ताकि वे अपने खेत के काम, घर और आम पारिवारिक जीवन को बेहतर बनाने के तरीकों के लिए खुले रहें और उन्हें सक्रिय रूप से ढूंढें। इसलिए, कार्यप्रणाली और नियामक काम विस्तरण का हिस्सा नहीं हैं, भले ही असरदार प्रसार के लिए समय पर मदद पक्का करने के लिए पर्यवेक्षक और सेवा अधिकारी के साथ मिलकर काम करना ज़रूरी हो। यह अभी भी प्रसार की पारंपरिक परिभाषा है।

प्रसार की अलग-अलग परिभाषाओं का एक कारण यह है कि इसे अलग-अलग नीति परंपराओं और परिस्थिति के अनुसार परिभाषित किया गया है। **रोलिंग (1988)** ने प्रसार की चार परंपराओं को परिभाषित किया, जिनका वर्णन नीचे दिया गया है।

- i) **रूढ़िवादी परंपरा:** इस संदर्भ में, प्रसार को व्यक्तियों को उनके उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सबसे अच्छे फैसले लेने में मदद करने के एक औज़ार के रूप में देखा जाता है। इस प्रथा का दूसरा नाम "ज्ञानकारी देने वाला" प्रसार है।
- ii) **समाजवादी परंपरा:** इस संदर्भ में, प्रसार को गरीब लोगों की मुक्ति या आज़ादी के एक औज़ार के रूप में देखा जाता है, जिसके लिए सामाजिक लक्ष्यों को पूरा करने के लिए संरचनात्मक बदलावों की ज़रूरत हो सकती है। इसे "मुक्ति दिलाने वाला" प्रसार कहा जा सकता है।
- iii) **रचनात्मक या मानव संसाधन विकास परंपरा:** यहाँ, ग्रामीण निवासियों की क्षमताओं को बढ़ाने पर ध्यान दिया जाता है ताकि वे समस्याओं को हल करने और समझदारी भरे फैसले लेने के लिए खुद को संगठित कर सकें।
- iv) **प्रेरक विस्तरण:** यहाँ, पर्यावरण प्रदूषण, स्वास्थ्य जोखिमों आदि के बारे में बचाव वाले व्यवहार को बढ़ावा देने पर ध्यान दिया जाता है।

कृषि प्रसार का दायरा

कृषि प्रसार का दायरा उन नौ कार्यक्रम प्राथमिकता वाले क्षेत्रों से पता चलता है जिन्हें **बेल्सी और हर्न** ने स्थापित किया था। इनमें शामिल हैं: (1) कृषि उत्पादन दक्षता; (2) विपणन, वितरण और उपयोग दक्षता; (3) प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, विकास और उपयोग; (4) खेत और घरेलू प्रबंधन; (5) पारिवारिक जीवन; (6) युवा विकास; (7) नेतृत्व विकास; (8) समुदाय और ग्रामीण क्षेत्र विकास; और (9) सार्वजनिक मामले।

कृषि प्रसार के लक्ष्य

हालांकि, कभी-कभी जल्दी नतीजों के लिए बड़े किसानों पर ध्यान देने की प्रवृत्ति होती है, लेकिन इससे प्रसार का असली लक्ष्य सीमित हो जाता है। समानता के साथ विकास प्रसार का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है, यानी छोटे किसानों की शैक्षिक, तकनीकी और सेवा जरूरतों और हितों को उतना ही पूरा करना जितना बड़े किसानों का है।

- लोगों को उनकी जरूरतों को पहचानने और उनकी मुश्किलों को ढूंढने और उनका विश्लेषण करने में मदद करना।
- व्यक्तियों में नेत्रत्व को बढ़ावा देना और मुद्दों को हल करने के लिए समूह बनाने में उनकी मदद करना।
- उपयोगी और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण वैज्ञानिक नतीजों को इस तरह से बांटना कि लोग उन्हें समझ सकें और लागू कर सकें।
- लोगों को उन संसाधनों को जुटाने और इस्तेमाल करने में मदद करना जो उनके पास पहले से हैं और जो उन्हें बाहरी स्रोतों से चाहिए।
- प्रबंधन की समस्याओं को हल करने के लिए प्रतिक्रियाओं का तथ्य इकट्ठा करना और भेजना।

17.4 कृषि प्रसार के लिए सेवाएँ स्थापित करने के विभिन्न तरीके

खेती के विकास को बढ़ावा देने, किसानों को मजबूत बनाने और खाने की सुरक्षा को बेहतर बनाने के लिए, कृषि प्रसार रणनीतियाँ बहुत जरूरी हैं। इन तरीकों में कई तरह के दृष्टिकोण, तरीके और रणनीतियाँ शामिल हैं, जिनका मकसद खेती करने वाले समुदायों को जानकारी, तकनीकी जानकारी और नए-नए तरीके देना है। कृषि प्रसार रणनीतियाँ अनुसंधान और किसानों के बीच की खाई को पाटकर किसानों को नई पद्धतियों, टिकाऊ तरीकों और बेहतर तकनीकी को अपनाने में मदद करती हैं। इस परिचय में किसानों को अधिकतम उत्पादकता हासिल करने, आजीविका बेहतर बनाने और लगातार बदलते कृषि परिदृश्य में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए जरूरी ज्ञान और क्षमताएँ प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कृषि प्रसार के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। नीचे कुछ कृषि प्रसार रणनीतियाँ दी गई हैं:

1. कृषि प्रसार का सामान्य तरीका

कृषि उत्पादकता और आजीविका बढ़ाने के लिए, सामान्य कृषि प्रसार के तरीके में किसानों और ग्रामीण समुदायों को सबसे नई जानकारी, तरीके और बेहतरीन तरीकों की जानकारी देना शामिल है। आमने-सामने बातचीत, कार्यशाला और प्रदर्शनों के जरिए, प्रसार प्रतिनिधि खास स्थानीय समस्याओं और जरूरतों के लिए समाधान तैयार करते हुए ज्ञान फैलाने में मदद करते हैं (**वेलार्ड एट अल., 2013**)। यह रणनीति किसानों को सशक्त बनाने, उनकी भागीदारी और टिकाऊ तरीकों पर जोर देकर सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देती है और आत्मनिर्भरता की क्षमता बढ़ाती है। प्रसार सेवाएँ लगातार निगरानी और प्रतिक्रिया के जरिए किसानों की क्षमताओं को बेहतर बनाने, नवाचार को बढ़ावा देने और आखिरकार कृषि विकास और खाद्य सुरक्षा में सहायता करने का काम करती हैं।

2. ट्रेनिंग और विज़िट (T&V) का तरीका

ट्रेनिंग और विज़िट (T&V) रणनीति एक कृषि प्रसार की तकनीक है जिसमें किसानों को प्रशिक्षण देने और फिर उन्हें खास सलाह और मदद देने के लिए उनसे मिलने का एक व्यवस्थित और नियंत्रित प्रक्रिया शामिल है। चौधरी एट अल. (2014) के अनुसार, प्रसार प्रतिनिधि और कौशल फैलाने के लिए बार-बार प्रशिक्षण सत्र आयोजित करने के बाद किसानों को नए मिले ज्ञान को अभ्यास में लाने में मदद करने के लिए ऑन-साइट (on-site) विज़िट करते हैं। यह रणनीति अनुकूली शिक्षा, दो-तरफ़ा बातचीत और किसानों की भागीदारी पर बहुत ज़्यादा जोर देती है। यह 1970 के दशक के मध्य में लोकप्रिय हुआ।

3. सहभागी तरीका

कृषि प्रसार के लिए सहभागी तरीके में ग्रामीण समुदायों और किसानों को प्रसार सेवाओं की योजना बनाने, लागू करने और मूल्यांकन में सक्रिय रूप से शामिल करना शामिल है। प्रसार प्रतिनिधि किसानों के साथ मिलकर उनकी खास ज़रूरतों, उद्देश्यों और चिंताओं को समझते हैं। किसानों के अनुभव और तकनीकी क्षमता को चर्चाओं, इंटरैक्टिव कार्यशाला और खेतों पर प्रदर्शनों के जरिए मिलाकर टिकाऊ और संदर्भ-विशिष्ट समाधान बनाए जाते हैं। (मैकलियोड, 2003) खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण विकास और कृषि प्रसार का मुद्दा यह रणनीति किसानों के स्वामित्व, सशक्तिकरण और बेहतर तकनीकों को अपनाने को बढ़ावा देती है। सहभागी दृष्टिकोण स्थानीय ज्ञान को पहचानकर और दो-तरफ़ा संचार को बढ़ावा देकर प्रसार कार्यक्रमों की प्रासंगिकता और प्रभावशीलता में सुधार करता है। इससे आखिरकार बेहतर कृषि उत्पादकता, बेहतर आजीविका और सामान्य ग्रामीण विकास होता है।

4. वस्तु विशेष विधि

यह तरीका किसी खास फसल या सामान, जैसे गन्ना, कॉफी, खर वगैरह पर ध्यान केन्द्रित करता है। कमोडिटी संघटन कार्यक्रम के विकास और उसे लागू करने का जिम्मा संभालता है, जिससे यह बहुत विशेषज्ञता प्राप्त हो जाता है। किसानों को इन चीज़ों के उत्पादन, प्रसंस्करण और बेचने में ज़्यादा से ज़्यादा मदद और खास मार्गदर्शन देने के लिए, प्रसार प्रतिनिधि खास फसलों या जानवरों की खास मुश्किलों और ज़रूरतों को समझने पर ध्यान देते हैं। (गेब्रेमेथिन एट अल., 2006)

5. परियोजना कार्यप्रणाली

कृषि प्रसार में, परियोजना पद्धति में खास कृषि लक्ष्यों या बाधाओं को हल करने के लिए विशेष, समय-सीमा वाली पहलों को लागू करना शामिल है। प्रसार परियोजना सटीक उद्देश्यों, तय कामों और आवंटित अनुदान के साथ योजित किए जाते हैं। वे किसी खास क्षेत्र या समुदाय में किसानों के कौशल को विकसित करने, नई तकनीकी लाने, या टिकाऊ तरीकों को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं (राजलाहती एट अल., 2005)। हितधारक और प्रसार कर्मचारी परियोजना को पूरा करने, प्रगति पर नज़र रखना और परिणामों का मूल्यांकन करने के लिए मिलकर काम करते हैं। परियोजना के दायरे में, परियोजना रणनीति केंद्रित प्रयासों और मापने योग्य प्रभावों को सक्षम करके कृषि पद्धतियों, उत्पादन और सामाजिक-आर्थिक स्थितियों को बेहतर बनाने में मदद करती है जो की भविष्य के प्रसार हस्तक्षेप सफल परियोजना को मॉडल के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं।

6. खेती प्रणाली विकास दृष्टिकोण

कृषि प्रसार का खेती प्रणाली विकास तरीका खेती-बाड़ी के सिस्टम के अंदर मौजूद जटिल रिश्तों को समझने और सुलझाने पर बहुत ज़्यादा जोर देता है। प्रसार प्रतिनिधि किसानों के साथ मिलकर उनके कृषि उत्पादन प्रणाली के सभी पहलुओं का मूल्यांकन करते हैं, जिसमें पशुधन, फसलें और दूसरे तत्व शामिल होते हैं। (मार्टिन 2015)। यह तरीका हर खेत की खास ज़रूरतों और परिस्थितियों को पूरा करने के लिए दखल को अनुकूलित करते समय सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय पहलुओं को ध्यान में रखता है। किसानों को एक समग्र दृष्टिकोण का उपयोग करके टिकाऊ और विविध तकनीकों को लागू करने, कुल उत्पादकता

बढ़ाने और संसाधन प्रबंधन में सुधार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। लचीले और आत्मनिर्भर खेती-बाड़ी के प्रणाली को बढ़ावा देकर, खेती प्रणाली विकास रणनीति ग्रामीण विकास, खाद्य सुरक्षा और आजीविका में सुधार करने की कोशिश करता है।

7. लागत-साझाकरण रणनीति

कृषि प्रसार में, लागत-साझाकरण दृष्टिकोण में प्रसार सेवाओं और हस्तक्षेपों का वित्तीय बोझ किसानों, सरकारी संगठनों, गैर-सरकारी संगठनों और वाणिज्यिक क्षेत्र सहित कई हितधारकों के बीच वितरित करना शामिल है। इस रणनीति के तहत किसानों को मिलने वाली प्रसार सेवाओं की लागत का एक प्रतिशत भुगतान करना होता है, जबकि अन्य अनुदान जैसे स्रोत शेष लागतों को ढक कर रखते हैं (ओजोर एट अल., 2007)। लागत साझाकरण से प्रसार कार्यों में किसानों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित होती है, जिससे जवाबदेही और स्वामित्व की भावना को बढ़ावा मिलता है। अनुदान और संसाधनों में विविधता लाकर, यह प्रसार कार्यक्रमों की स्थिरता में भी योगदान देता है, जिसके परिणामस्वरूप अधिक प्रभावी और महत्वपूर्ण कृषि विकास गतिविधियाँ होती हैं।

8. शैक्षणिक संस्थानों का दृष्टिकोण

शैक्षणिक संस्थानों का दृष्टिकोण छात्रों और आम जनता के बीच कृषि ज्ञान और कौशल को आगे बढ़ाने के लिए, शैक्षणिक संस्थान स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों और अनुसंधान सुविधाओं के साथ सहयोग करते हैं। यह तरीका विशेष पाठ्यक्रम और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करता है, साथ ही कृषि शिक्षा को आधिकारिक पाठ्यक्रम में शामिल करता है। इसके अलावा, यह कृषि नवाचार और अनुसंधान को बढ़ावा देता है, जो सर्वोत्तम प्रथाओं को बनाने और फैलाने में मदद करता है (अग्वू एट अल., 2008)। शैक्षणिक संस्थान सूचना साझा करने, क्षमता निर्माण और सामुदायिक जुड़ाव के केंद्रों के रूप में कार्य करके किसानों और हितधारकों को वर्तमान कृषि ज्ञान के हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करते हैं। कृषि प्रसार शैक्षणिक संस्थानों के साथ बातचीत करके मानव पूंजी में सुधार करता है और निरंतर सीखने और स्थायी कृषि विकास की संस्कृति को बढ़ावा देता है।

17.5 कृषि प्रसार सेवा प्रणाली का विकास

कृषि प्रसार सेवा प्रणाली एक महत्वपूर्ण तंत्र है जो कृषि अनुसंधान (लैब) और किसानों (खेत) के बीच सेतु के रूप में कार्य करती है। यह किसानों को नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकियों, बीजों, और टिकाऊ कृषि पद्धतियों की जानकारी प्रदान कर उत्पादकता, खाद्य सुरक्षा और आय में वृद्धि करती है। समय के साथ यह प्रणाली पारंपरिक तरीकों से आधुनिक डिजिटल और ज्ञान-आधारित कृषि प्रणाली में विकसित हुई है।

17.5.1 स्वतंत्रता के बाद भारत में कृषि प्रसार

देश की आजादी के बाद से, कृषि प्रसार सार्वजनिक क्षेत्र में कई बदलाव आए हैं, जिसकी शुरुआत 1952 में **सामुदायिक विकास कार्यक्रम (CDP)** से हुई, जिसका उद्देश्य समुदाय और इंसानी विकास पर था। एक पेशेवर सहायता वाला राष्ट्रीय बहुउद्देशीय प्रसार नेटवर्क जरूरी हो गया था, नतीजतन, 55 सामुदायिक विकास कार्यक्रम की पहल शुरू की गई। हर परियोजना में दस गांवों के लिए गांव स्तर पर कार्यकर्ता थे, कुल मिलाकर 300 गांव, हर परियोजना में कृषि, पशुपालन, सहयोग, ग्रामीण उद्योग और ग्रामीण इंजीनियरिंग में एक तकनीकी विशेषज्ञ को नियुक्त किया गया था। एकीकृत ग्रामीण विकास मॉडल इस कार्यक्रम का आधार था।

नेशनल प्रसार सर्विस (NES) कार्यक्रम 1953 में शुरू किया गया था, जिसका लक्ष्य 1960-1961 तक पूरे देश को समिलित करना था। यह सामुदायिक विकास कार्यक्रम जैसा ही था, लेकिन इसमें कम संसाधनों का इस्तेमाल किया गया। वैज्ञानिक तरीकों का इस्तेमाल करके, इस कार्यक्रम का मकसद ग्रामीण विकास की दर को बढ़ाना था, जिसमें बेहतर रोजगार और कृषि उत्पादन शामिल था। **इंटेसिव एग्रीकल्चर डिस्ट्रिक्ट प्रोग्राम (IADP)** के साथ, जो 1961 में शुरू हुआ और शुरू में सात जिलों को चुना

गया, फिर नौ और जोड़े गए, खाद्य सुरक्षा नीति के रूपरेखा के तहत तकनीकी स्थानांतरण की दिशा में लगातार तरक्की हुई। इस कार्यक्रम के मुख्य हिस्से थे: (1) जिला और ब्लॉक स्तर पर विषय विशेषज्ञ को तैनात करना; (2) शोध के नतीजों के आधार पर किसानों के लिए तरीकों का एक बेसिक, बेहतर पैकेज बनाना; और (3) बेहतर प्रसार गतिविधियाँ को बढ़ावा देने के लिए VLW को गहन प्रशिक्षण देना।

खाने का उत्पादन तेजी से बढ़ाने के लिए, रणनीति यह थी कि हर खेत के लिए एक बेहतर फार्म रणनीति बनाई जाए और उसे सभी उपलब्ध संसाधनों से सहायता की जाए। बेहतर उत्पादन के मामले में बेहतर और तेज नतीजे पाने के लिए, इस पहल ने सभी जिलों में संसाधनों और कोशिशों को समान रूप से बांटने के बजाय, सबसे अच्छी स्थितियों वाली जगहों पर ध्यान केंद्रित किया।

एक क्षेत्र दृष्टिकोण के आधार पर, 1964-1965 में **इंटेसिव एग्रीकल्चर एरिया प्रोग्राम (IAAP)** के लिए 114 जिलों से 1084 ब्लॉक चुने गए थे। IADP और IAAP के बीच दो मुख्य अंतर थे: पहला खेतों पर केंद्रित था, जबकि दूसरा फसलों पर केंद्रित था, और कर्मचारियों को छोटे पैमाने पर नियुक्त किया गया था। 1966-1967 में **हाई यील्डिंग वैरायटीज प्रोग्राम (HYYP)**, किसान प्रशिक्षण और शिक्षा कार्यक्रम (1966-1967), और छोटे और सीमांत किसान विकास कार्यक्रम (**SMFDP**) (1969-1970) शुरू किए गए।

17.5.2 टी. और वी. प्रसार प्रणाली

खेती-बाड़ी से जुड़ी जानकारी देने के काम को बेहतर बनाने के लिए, भारत ने ट्रेनिंग एंड विजिट (T&V) सिस्टम लागू किया। इस सिस्टम का नाम **गहन कृषि प्रसार और बेहतर प्रसार** भी है। संयुक्त राज्य अमेरिका में, इसे कृषि विभाग कंट्रोल करते हैं। 1974 में, T&V को वर्ल्ड बैंक की मदद से मध्य प्रदेश और राजस्थान में तीन कमांड क्षेत्रीय परियोजनाएँ के हिस्से के तौर पर लागू किया गया था। यह तरीका सबसे पहले 1975 के बीच में पश्चिम बंगाल के छह जिलों में लागू किया गया था, और फिर यह लगभग हर भारतीय राज्य में फैल गया। T&V रणनीति औपचारिक शिक्षा को प्रैक्टिकल प्रशिक्षण के साथ मिलाकर किसानों की तकनीकी कबिलियत बढ़ाने, टिकाऊ तरीकों को बढ़ावा देने और कृषि उत्पादन और कमाई को बढ़ाने की कोशिश करती है। T&V प्रणाली का एक जरूरी हिस्सा किसानों के खेतों का प्रायोजित किया गया दौरा और ग्राम प्रसार कार्यकर्ता (**VEWs**) के लिए सेवा-कालीन प्रशिक्षण का एक व्यवस्थित कार्यक्रम था। हर दो हफ्ते में, VEW को खास खेती की तकनीकों पर ट्रेनिंग मिलती थी जो आने वाले हफ्तों में होने वाले खेती के कामों से सीधे जुड़ी होती थीं। जरूरी फसलों और खेती की तकनीकों पर बहुत ध्यान दिया जाता था। VEW हर दो हफ्ते में एक तय समय पर किसानों से मिलने का सारणी बनाता था। विषय विशेषज्ञ और कृषि प्रसार अधिकारी VEW के दौरों की देखरेख और उन्हें निर्देश करते थे। इस प्रणाली ने कृषि उद्यम और ऋण की सप्लाई और प्रसार कर्मचारियों की गतिशीलता के लिए व्यवस्थाओं को सुव्यवस्थित करना भी सुनिश्चित किया।

17.6 वर्तमान प्रसार सेवा प्रणाली

हमारे देश में, राज्य के कृषि विभाग मुख्य रूप से कृषि प्रसार सेवाएं देने के लिए जिम्मेदार हैं। हाल के सालों में क्रेडिट एजेंसियों, विकासक, आपूर्तिकर्ता और गैर-लाभकारी संस्थाएं संगठनों ने भी कृषि प्रसार सेवाएं देना शुरू कर दिया है। 1960 के दशक तक, राज्य के कृषि विभाग प्रसार के अलावा कृषि शिक्षा और अनुसंधान भी जिम्मेदार थे। इसके बाद कृषि विश्वविद्यालयों ने कृषि शिक्षण और अनुसंधान का काम संभाल लिया। बढ़ती विशेषज्ञता और काम के बोझ के कारण कृषि विभाग को भी कई विभागों और निदेशालयों में बांट दिया गया है, जिसमें बागवानी विभाग, कृषि इंजीनियरिंग विभाग, तिलहन और दलहन निदेशालय आदि शामिल हैं।

कृषि निदेशक, जो हर राज्य में कृषि विभाग की देखरेख करते हैं, राज्य की कृषि उत्पादन नीतियों को लागू करने के प्रभारी होते हैं। कृषि उत्पादन आयुक्त राज्य के कृषि उत्पादन से संबंधित विभागों और संगठनों के सामान्य समन्वय की देखरेख करते हैं।

किसानों की आय बढ़ाने के लिए, भारत में मौजूदा कृषि प्रसार प्रणाली एक हाइब्रिड मॉडल है जिसे पब्लिक सेक्टर ऑर्गनाइजेशन (ICAR, SAUs, KVKs) कंट्रोल करते हैं और जिसे प्राइवेट सेक्टर, NGO और ICT टूल्स का भी सपोर्ट मिल रहा है।

डिसेंट्रलाइज्ड, जिला-स्तर की योजना के लिए **एग्रीकल्चरल टेक्नोलॉजी मैनेजमेंट एजेंसी (ATMA)** और ड्रोन टेक्नोलॉजी, ऐप्स और किसान कॉल सेंटर जैसे डिजिटल टूल्स को तेजी से अपनाना इसके ज़रूरी पहलू हैं।

17.6.1 प्रसार संगठन: विभिन्न स्तरों पर संरचना

सामान्य संगठनात्मक ढांचा कृषि निदेशक राज्य या मुख्यालय स्तर पर कई अतिरिक्त कृषि निदेशकों की देखरेख करते हैं। प्रशासन, कार्मिक प्रबंधन, निवेश, प्रसार, बीज, सूचना, प्रशिक्षण, निगरानी, तकनीकी सहायता आदि जैसे विभिन्न पहलुओं की देखरेख करने वाले कई विषय विशेषज्ञों के अलावा, अतिरिक्त निदेशकों को संयुक्त निदेशकों या उप निदेशकों द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। कई जिलों वाले कुछ राज्यों में, आंचलिक या मंडल प्रसार अधिकारी जिला प्रसार अधिकारी की देखरेख करता है, जिसे कृषि उप निदेशक के नाम से भी जाना जाता है। (जिन्हें **जॉइंट डायरेक्टर ऑफ़ एग्रीकल्चर** भी कहा जाता है)। सब्जेक्ट मैटर स्पेशलिस्ट (SMS) का एक छोटा ग्रुप जिला स्तर पर जिला प्रसार हरित क्रांति ऑफिसर की मदद करता है। सब-डिविजनल प्रसार ऑफिसर (SDEOs) सब-डिविजनल स्तर पर काम करते हैं। एक जिला प्रसार ऑफिसर चार से आठ SDEOs की देखरेख करता है। एक SDEO के निर्देश पर ब्लॉक स्तर पर पाँच से आठ एग्रीकल्चरल प्रसार ऑफिसर (AEOs) काम करते हैं। हर AEO छह से आठ विलेज प्रसार वर्कर (VEWs) की देखरेख और ट्रेनिंग करता है। गाँव स्तर पर, VEWs का किसानों के साथ सीधा संपर्क होता है।

17.6.2 कृषि प्रसार की वर्तमान स्थिति

कृषि विभाग, अपनी प्रसार पक्ष के ज़रिए, राज्य स्तर पर इस क्षेत्रक में मुख्य भूमिका निभाता है। 1970 के दशक के आखिर और 1980 के दशक की शुरुआत में, लगभग हर राज्य में प्रसार की ट्रेनिंग और विज़िट सिस्टम (T&V) की स्थापना की गई थी। इस पहल के लिए वर्ल्ड बैंक का सपोर्ट खत्म होने के बावजूद, राज्यों ने T&V प्रणाली के बुनियादी ढांचे को बनाए रखा है। अनुमान है कि भारत में 110,000 अलग-अलग तरह के प्रसार वर्कर हैं। बीस प्रतिशत प्रसार कर्मचारियों के पास कम से कम कॉलेज की डिग्री तो है ही।

विभिन्न शोध और अनुभवों के अनुसार, T&V रणनीति सिंचित क्षेत्रों के लिए सबसे उपयुक्त थी, जहाँ उत्पादन और उत्पादन में ज्यादा बढ़ोतरी देखी गई है। हालांकि, सीमित संसाधनों वाली जगहों पर यह प्रणाली असरदार नहीं थी। कई राज्यों ने T&V प्रणाली की कमियों को दूर करने के लिए "ब्रॉड बेस्ड" प्रसार लागू किए हैं। कई विकास विभागों के बीच तालमेल के ज़रिए, "ब्रॉड बेस्ड" प्रसार मॉडल का मकसद न सिर्फ मुख्य फसलों से जुड़ी तकनीकी, बल्कि वानिकी, मत्स्य पालन, बागवानी, पशुधन आदि जैसे संबंधित व्यवसायों को भी एक साथ स्थानांतरण करना है। केरल और राजस्थान सहित कुछ राज्यों ने प्रसार के लिए **"समूह दृष्टिकोण"** अपनाया है, जो थाईलैंड और इंडोनेशिया जैसे देशों में असरदार साबित हुआ है। किसानों की भागीदारी सुनिश्चित करने और प्रसार सेवाओं को किसानों की ज़रूरतों के हिसाब से बनाने के लिए, व्यक्तिगत-आधारित दृष्टिकोण के बजाय, समूह-आधारित प्रसार रणनीति ने अच्छे नतीजे दिखाए हैं।

किसानों को योजना प्रक्रिया में शामिल करके, कई राज्य प्रसार कार्यक्रम बनाने के लिए बॉटम-अप तरीकों के साथ प्रयोग भी कर रहे हैं। **"पैरा-प्रसार वर्कर्स"** या **"किसान के नेतृत्व वाला प्रसार"** उन नए तरीकों और तकनीकों में से एक है जिन्हें हाल ही में प्रसार की प्रभावकारिता बढ़ाने के लिए आजमाया गया है। यह रणनीति "किसान से किसान" प्रसार पर निर्भर करती है, जो कृषि समुदाय के सदस्यों की भागीदारी पर आधारित है। किसानों के संगठनों या ग्रुप्स के एक हिस्से को स्वैच्छिक रूप से और थोड़ी फीस पर प्रसार श्रमिक के रूप में काम करने के लिए चुना जाता है। NGOs, **स्टेट एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटीज़ (SAUs)** या **कृषि विज्ञान केंद्रों (KVKs)** के साथ साझेदारी में चुने गए पैरा-प्रसार श्रमिक को ट्रेनिंग देते हैं।

ये **"किसान एक्सटेंशनलिस्ट"** प्रसार संगठनों से बात करते हैं और अपने समूह के सदस्यों के साथ तकनीकी जानकारी शेयर करते हैं। खेती से जुड़े प्रसार से जुड़ी गतिविधियों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रसार निदेशालय द्वारा समन्वयक किया जाता है, जो कृषि और सहकारिता मंत्रालय के कृषि विभाग का एक हिस्सा है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय प्रसार सेवाएं के बाद, प्रसार निदेशालय की स्थापना 1958 में की गई थी। इसका मकसद एक केंद्रीय निकाय के तौर पर काम करना था, जो अलग-अलग राज्यों को सलाह और तकनीकी मदद दे ताकि वे असरदार प्रसार सेवा चला सकें। निदेशालय के काम के क्षेत्र हैं फार्म की जानकारी, प्रसार प्रबंधन और प्रसार प्रशिक्षण आदि।

निदेशालय अपने चार प्रसार शिक्षा संस्थान के ज़रिए प्रसार तकनीकी के कई पहलुओं में प्रशिक्षण भी देता है, जो निलोखेड़ी (हरियाणा), आनंद (गुजरात), हैदराबाद (आंध्र प्रदेश), और जोरहाट (असम) में हैं। वरिष्ठ और मध्यम स्तर के प्रसार श्रमिक

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चरल प्रसार मैनेजमेंट (MANAGE) से प्रसार प्रबंधन में ट्रेनिंग ले सकते हैं, जिसकी स्थापना 1985 में हुई थी।

17.7 कृषि विश्वविद्यालयों और ICAR संस्थानों की प्रसार भूमिका

अनुसंधान को प्रैक्टिकल, क्षेत्र-स्तरीय प्रौद्योगिकी में बदलने के लिए, एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटीज़ (AUs) और ICAR संस्थानों द्वारा कृषि प्रसार ज़रूरी है। किसानों की उत्पादन और जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिए, वे 731 कृषि विज्ञान केंद्रों (KVKs) के नेटवर्क का इस्तेमाल करके खेतों में टेस्टिंग (testing), फ्रंटलाइन डेमोंस्ट्रेशन (frontline demonstration), कैपेसिटी बिल्डिंग (capacity building) और ICT-आधारित, जगह के हिसाब से सलाह देने वाली सेवाएं देते हैं। 1960 के बाद से भारत की कृषि शिक्षा प्रणाली में काफी सुधार हुआ है। भारत के कुछ राज्यों में, अमेरिका की लैंड ग्रांट यूनिवर्सिटीज़ की तर्ज पर कृषि विश्वविद्यालयों नाम के संस्थानों का एक नया समूह स्थापित किया गया। कृषि शिक्षा के क्षेत्र में इस महत्वपूर्ण प्रगति के परिणामस्वरूप, कृषि शिक्षा, अनुसंधान और प्रसार की राष्ट्रीय प्रणाली मजबूत हुई है। ये कृषि विश्वविद्यालय सामान्य विश्वविद्यालयों से बहुत अलग भूमिका निभाते हैं। शिक्षण, अनुसंधान और प्रसार की अपनी तीन भूमिकाओं के माध्यम से, ये विश्वविद्यालय पारंपरिक अर्थों में उच्च शिक्षा के शैक्षणिक संस्थान होने के अलावा, ग्रामीण निवासियों के जीवन को बेहतर बनाने में सक्रिय रूप से योगदान देते हैं।

अनुसंधान और शिक्षा के अपने मुख्य काम के अलावा, इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च (ICAR) कृषि प्रसार में भी शामिल है। रचनात्मक प्रसार रणनीतियों के ज़रिए, ICAR ने कृषि प्रसार में मदद की है। ICAR अपने प्रसार प्रयासों को पूरा करने के लिए कृषि विज्ञान केंद्र (पूरे भारत में 344 जगह), ट्रेनर्स ट्रेनिंग सेंटर (10 जगह), इंस्टीट्यूट विलेज लिंकेज प्रोजेक्ट (42 जगह), और कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र (44 जगह) का इस्तेमाल करता है।

ICAR संस्थानों और कृषि विश्वविद्यालयों के महत्वपूर्ण प्रसार कार्य:

टेक्नोलॉजी असेसमेंट और रिफाइनमेंट (TAR): ऑन-फार्म टेस्टिंग (OFT) का उपयोग करके अलग-अलग खेती प्रणालियों के तहत तकनीकी की जगह की खासियत तय करना।

फ्रंटलाइन डेमोंस्ट्रेशन (FLDs): नई तकनीकी की उत्पादन क्षमता को उजागर करने के लिए किसानों के खेतों पर प्रदर्शन की योजना बनाना।

क्षमता निर्माण: क्षमता निर्माण में किसानों और प्रसार कार्यकर्ताओं को समकालीन, टिकाऊ और जलवायु-स्मार्ट खेती के तरीकों के बारे में शिक्षित करना शामिल है।

सूचना प्रसार: ICT, प्रिंट मीडिया और मास मीडिया के उपयोग से समय पर खेती की सलाह और तकनीकी जानकारी प्रदान करना।

डायग्नोस्टिक सेवाएं: फील्ड स्तर पर नई समस्याओं से निपटने के लिए पेशेवर सलाह और डायग्नोस्टिक सेवाएं प्रदान करना।

लिंकेज और समन्वय: सूचना केंद्र के रूप में कार्य करना और कृषि अर्थव्यवस्था को बढ़ाने के लिए किसानों, प्रसार एजेंटों और शोधकर्ताओं को एक साथ लाना।

संस्थागत ढाँचा:

ICAR (इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च): 99 रिसर्च संस्थानों की देखरेख करता है और राष्ट्रीय स्तर पर कृषि अनुसंधान/शिक्षा को कोऑर्डिनेट करता है।

AUs (एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटीज़): डायरेक्टोरेट ऑफ प्रसार एजुकेशन (DEE), कृषि विज्ञान केंद्रों (KVKs), और एग्रीकल्चरल रिसर्च स्टेशनों (ARSSs) के ज़रिए क्षेत्र-विशिष्ट प्रसार पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

ATARIs (एग्रीकल्चरल टेक्नोलॉजी एप्लीकेशन रिसर्च इंस्टीट्यूट): 11 ATARIs पूरे भारत में KVKs के टेक्नोलॉजी एप्लीकेशन को कोऑर्डिनेट और मॉनिटर करते हैं।

ये संगठन अनुसंधान और एप्लीकेशन के बीच की खाई को पाटने, यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं कि वैज्ञानिक नवाचार बेहतर कृषि उत्पादकता के लिए अंतिम किसान तक पहुँचें।

17.8 प्रसार सेवाओं का वैश्वीकरण

सरकारी संगठन मुख्य रूप से कृषि प्रसार सेवाओं की अनुदान और देखरेख के लिए जिम्मेदार हैं। हाल के सालों में कम संसाधनों और बदलती सरकारी नीतियों जैसी वजहों से "प्रसार का वैश्वीकरण" एक रणनीति के तौर पर माना गया है। **ऑक्सफोर्ड एडवांस्ड लर्नर्स डिक्शनरी (1989)** के अनुसार, "वैश्वीकरण" का मतलब है मालिकाना हक को सरकार से प्राइवेट सेक्टर में ट्रांसफर करना। **सवास (1987)** के अनुसार, "वैश्वीकरण" शब्द का मतलब अब काफी व्यापक हो गया है, क्योंकि यह अब समाज की जरूरतों के बारे में एक अलग नज़रिए और उन जरूरतों को पूरा करने में सरकार की भूमिका पर फिर से विचार करने को दिखाता है। इसमें सरकार पर कम और समाज के प्राइवेट संस्थानों पर ज्यादा निर्भर रहना शामिल है।

किसी गतिविधि या संपत्ति का स्वामित्व में सरकार की भागीदारी कम करने और प्राइवेट सेक्टर की भूमिका बढ़ाने की प्रक्रिया को वैश्वीकरण कहा जाता है।

सदामाते और सुलेमान (2000), विस्तरण सेवाओं के वैश्वीकरण को इन कारणों बताते हैं:

- विस्तरण मशीनरी को फाइनेंस करने में सरकार की असमर्थता
- कृषि अनुसंधान और प्रसार में डोनर के योगदान में कमी;
- सरकारी एजेंसियों द्वारा दी जाने वाली प्रसार सेवाओं की खराब गुणवत्ता
- खेती का गुजारा करने वाली खेती से लाभ कमाने वाले उद्यम में बदलना
- अच्छी तकनीकी वाले प्राइवेट रिसर्च और प्रसार संगठनों का उभरना
- GATT समझौते के बाद अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता

वैश्वीकरण प्रसार के लिए रणनीतियाँ

- प्रसार सेवाओं का व्यापारीकरण:** पब्लिक प्रसार प्रणाली को एक निश्चित कीमत पर एडवांस्ड, मांग के हिसाब से तकनीकी देनी चाहिए।
- कॉन्ट्रैक्ट प्रसार सिस्टम शुरू करना:** खेती की तकनीकी को फैलाने के लिए, पब्लिक प्रसार प्रणाली रजिस्टर्ड प्राइवेट कृषि परामर्श कंपनी के साथ कॉन्ट्रैक्ट कर सकता है।
- शेयरक्रॉपिंग प्रणाली:** शेयरक्रॉपिंग सिस्टम को लागू करने से पब्लिक और प्राइवेट दोनों तरह के प्रसार एजेंटों को फसल का हिस्सा देकर प्रसार कर्मचारियों की जवाबदेही और लगन मजबूत होगी।
- प्राइवेट सेक्टर और गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) को ज्यादा अधिकार और सहयोग के अधिकार देना:** हाल के सालों में, प्राइवेट सेक्टर और NGOs खेती की कंसल्टिंग में ज्यादा शामिल हो गए हैं। उन्हें खेती की तकनीकी के ट्रांसफर में ज्यादा अधिकार दिए जा सकते हैं।

17.9 प्रसार सेवा संगठन में नए विकास

कृषि प्रसार सेवा संगठन में टॉप-डाउन तकनीकी स्थानांतरण रणनीति की जगह बहुलवादी, डिजिटल-फर्स्ट और किसान-केंद्रित तरीके ले रहे हैं। ये डेवलपमेंट मार्केट तक पहुंच को मजबूत करने, लचीलेपन को बढ़ावा देने और छोटे किसानों के लिए जानकारी की कमी को पूरा करने के लिए तकनीकी का इस्तेमाल करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। हाल के महत्वपूर्ण विकास कुछ इस तरह से शामिल हैं :

1. स्मार्ट और डिजिटल प्रसार सेवाएं (ई-प्रसार)

AI-पावर्ड चैटबॉट और ऐप्स: WhatsApp जैसे प्लेटफॉर्म के जरिए, AI का इस्तेमाल रियल टाइम में बीमारियों का पता लगाने, कीटों की निगरानी करने और किसानों को उनकी जरूरत के हिसाब से सलाह देने के लिए किया जाता है।

वर्चुअल KVKs (कृषि विज्ञान केंद्र): वर्चुअल KVKs का इस्तेमाल करके मौसम और मिट्टी के स्वास्थ्य पर प्रोफेशनल गाइडेंस तक ज्यादा व्यापक, किफायती और दूर से पहुंच संभव होती है। IoT, ड्रोन और सैटेलाइट इमेज का इस्तेमाल मिट्टी की स्थिति और फसल के स्वास्थ्य की सटीक निगरानी करने के साथ-साथ डेटा-आधारित, उपयोगी जानकारी देने के लिए किया जाता है।

ऑफ़लाइन-सक्षम उपकरण: कनेक्टिविटी की चुनौतियों को देखते हुए, अब कई प्लेटफॉर्म दूरदराज के इलाकों के लिए ऑफ़लाइन-सक्षम, क्षेत्रीय रूप से प्रासंगिक और भाषा के हिसाब से सुलभ जानकारी प्रदान करते हैं।

2. किसान-नेतृत्व वाले और भागीदारी वाले तरीके

किसानों के लिए फील्ड स्कूल (FFS): यह एक तेजी से आम होती जा रही रणनीति है जो किसानों को एक साथ टिकाऊ तरीकों और एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) को सीखने और लागू करने से बाहरी इनपुट पर निर्भरता कम करती है।

लीड फार्मर सिस्टम: आगे की सोच रखने वाले किसानों को ढूंढना और उन्हें शिक्षित करना ताकि वे स्थानीय ज्ञान केंद्र के रूप में काम कर सकें, जिससे आपस में सीखने को बढ़ावा मिले और अपनाने की दर बढ़े।

किसान उत्पादक संगठन: FPO को किसानों को एक साथ लाकर मजबूत किया जा सकता है ताकि उन्हें ज्यादा मोलभाव की शक्ति, इनपुट तक आसान पहुंच और बाजारों से सीधा जुड़ाव मिल सके, साथ ही प्रसार का फोकस उत्पादन से हटाकर वैल्यू चेन पर किया जा सके।

3. स्ट्रक्चर और संस्थानों में नए बदलाव

पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप (PPP): बेहतर पहुंच के लिए संसाधनों, लैब्स और ज्ञान को शेयर करने के लिए पब्लिक और प्राइवेट/NGO सेक्टर के बीच पार्टनरशिप (जैसे, KVKs, ATMA)।

एग्री-क्लिनिक और एग्री-बिजनेस सेंटर (ACABC): प्राइवेट प्रसार कंपनियां जो अक्सर खास सेवाओं और इनपुट सप्लाय के लिए वन-स्टॉप शॉप देती हैं।

अलग-अलग तरह के प्रसार एजेंट: इसमें एग्रीकल्चर ग्रेजुएट के अलावा पैराप्रोफेशनल, "मॉनिटर" या लोकल लीडर शामिल हैं जो समुदाय में ज्यादा घुल-मिल जाते हैं और भाषा और संस्कृति के अंतर को पाटते हैं।

4. खास फोकस वाले क्षेत्र

क्लाइमेट-स्मार्ट एग्रीकल्चर (CSA): प्रसार की सलाह में आपदा जोखिम कम करने की तकनीकों और जलवायु-अनुकूल तरीकों को शामिल करना (जैसे, केन्या में "किलिमो सलामा" प्रोग्राम मौसम आधारित बीमा के लिए SMS का इस्तेमाल करता है)।

जेंडर-सेंसिटिव प्रसार: महिला किसानों को वैल्यू चेन, एंटरप्रेन्योरशिप और पोषण में खास ट्रेनिंग देना ताकि उनके फैसले लेने की क्षमता को मजबूत किया जा सके।

मार्केट-लेड प्रसार: कटाई के बाद की हैंडलिंग, फूड प्रोसेसिंग, ब्रांडिंग और सीधे मार्केट से जुड़ाव पर ध्यान देना ताकि प्रसार सेवाओं को मार्केट की जरूरतों के हिसाब से बनाया जा सके।

5. ज्ञान का आदान-प्रदान और क्षमता निर्माण

डिजिटल ग्रीन/वीडियो-आधारित लर्निंग: यह तरीका, जो पीयर लर्निंग के लिए बहुत सफल रहा है, स्थानीय रूप से बनाए गए वीडियो का उपयोग करके नए कौशल सिखाता है।

ऑनलाइन सहयोगी प्रशिक्षण: वेबिनार, लाइव सेशन और वर्चुअल वर्कशॉप के माध्यम से प्रसार स्टाफ सदस्यों को टेक्नोलॉजी में सबसे नई प्रगति के बारे में सूचित रखना।

17.10 प्रसार सेवाओं के साथ मुद्दे और कठिनाइयाँ

खेती-बाड़ी से जुड़ी सेवाओं को जिन जरूरी समस्याओं से निपटना होता है, उनमें काफ़ी कम अनुदान, कर्मचारियों की लगातार कमी, और खराब इंफ्रास्ट्रक्चर शामिल हैं, जिससे किसानों को नई तकनीकी नहीं मिल पाती। अनुसंधान संस्थानों के साथ कमजोर संबंध, किसानों में कम साक्षरता दर, और विकासशील देशों में नौकरशाही की कमियाँ दूसरी बड़ी समस्याएँ हैं। इन

समस्याओं, जलवायु से जुड़ी गड़बड़ियों, और खराब, पुरानी या उपलब्ध न होने वाली संचार-व्यवस्था की वजह से ग्रामीण जीवन को बेहतर बनाने की प्रसार की क्षमता बहुत सीमित हो जाती है।

● किसानों की भागीदारी की कमी

आम तौर पर, किसानों ने प्रसार कार्यक्रम के डेवलपमेंट और लागू करने में एक्टिव रूप से हिस्सा नहीं लिया है। किसानों, खासकर छोटे और सीमांत किसानों, खेतिहर महिलाओं और ग्रामीण समाज के कमजोर वर्गों का ज़रूरतों और प्राथमिकताओं को तय करने में शामिल होना बहुत कम होता है। इसलिए, किसानों की भागीदारी और प्रतिक्रिया के बिना, कई प्रसार कार्यक्रम योजित किए गए और रचनात्मक बदलाव के एक औज़ार के तौर पर बेअसर रहते हैं।

● ट्रिकल डाउन दृष्टिकोण

एक आर्थिक सिद्धांत है, जिसके अनुसार धनी व्यक्तियों और निगमों को करों में छूट या वित्तीय लाभ देने से निवेश और रोजगार बढ़ता है, जिससे अंततः यह लाभ समाज के निम्न वर्गों तक पहुँचता है। यह 'आपूर्ति-पक्ष अर्थशास्त्र' (supply-side economics) से निकटता से जुड़ा है और मानता है कि अमीरों की समृद्धि अंततः गरीबी कम करती है।

● खेती पर ध्यान न देना

कई वजहों से, कृषि प्रसार फार्म प्रौद्योगिकी बांटने पर सीमित केंद्र के साथ काम कर रहा है। प्रसार के प्रयास पूरे खेती प्रणाली को बेहतर बनाने के बजाय खास फसलों पर ज़्यादा केंद्रित हैं। प्रसार के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण की कमी है जो विभिन्न फसलों, जानवरों, वानिकी, बागवानी और मत्स्य पालन को ध्यान में रखे।

● वित्तीय संकट

संसाधनों की कमी के कारण कृषि प्रसार के लिए उपलब्ध पैसे में कमी आ रही है। कार्यक्रम चलाने और भौतिक मूलद्रांचा के रखरखाव के लिए ज़रूरी परिचालन निधि की कमी भी प्रसार प्रणाली के सामने एक और समस्या है।

● प्रसार श्रमिक में प्रेरणा और मनोबल की कमी

हमारे देश की प्रसार सेवा पारंपरिक रूप से कर्मचारियों के कम मनोबल और उत्साह से जूझ रही है। खराब पेशेवर स्थिति, जिसमें कम सैलरी और करियर में आगे बढ़ने के कम मौके शामिल हैं, इस स्थिति के कारणों में से एक है।

● समकालीन संचार टेक्नोलॉजी का अप्रभावी इस्तेमाल

T&V प्रणाली ने आमतौर पर रेडियो, टेलीविज़न, फ़िल्म, वीडियो और अख़बार जैसे मास मीडिया के इस्तेमाल को नज़रअंदाज़ किया है, जबकि प्रसार के आमने-सामने के तरीकों के महत्व पर ज़ोर दिया है। यह देखते हुए कि अब रेडियो और टेलीविज़न सिमल लगभग हर भारतीय तक पहुँचते हैं, किसानों के बीच ज्ञान फैलाने में "कॉन्टैक्ट फार्मर सिस्टम" की नाकामी से असंतोष, मास मीडिया के ज़्यादा इस्तेमाल की ज़रूरत को दिखाता है।

17.11 अभ्यास प्रश्न

1. ऐसे तीन कारक बताएं जो प्रसार सेवाओं के निजीकरण के पक्ष में हों।
2. किसानों के आंदोलनों ने वैश्वीकरण पर कैसी प्रतिक्रिया दी? चर्चा करें।
3. प्रसार की अलग-अलग परिभाषाओं में सामान्य तत्व क्या हैं?
4. भारत में कृषि प्रसार सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए पांच उपाय सुझाएं।

17.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- G.L.Ray, 2019, Covers extension methods, communication, and management. Extension Communication and Management
- B.E. Swanson, R.P. Bentz, & A.J. Sofranko (FAO), 2023 Improving Agricultural Extension: A Reference Manual by: A foundational global text
- A.W. Van den Ban & H.S. Hawkins, 2018 . Focuses on the principles and practices of extension.

- Handbook of Agricultural Extension by ICAR: A comprehensive guide for Indian context.
- C. Karthikeyan, 2017. Focuses on management techniques and tools.
- Sachin Sopan Gondka ,2020 Covers methods, ICT, and institutional support, Agricultural Extension: Principles and Approaches
- Renu Arya, et al,2015. Based on the ICAR syllabus, Fundamentals of Agricultural Extension

इकाई -18 ग्रामीण पुनर्निर्माण Rural Reconstruction

- 18.1 प्रस्तावना (Introduction)
- 18.2 उद्देश्य (Objectives)
- 18.3 ग्रामीण विकास की अवधारणा (Concept of Rural Development)
- 18.4 ग्रामीण पुनर्निर्माण के उपागम एवं रणनीतियाँ (Approaches and Strategies of Rural Reconstruction)
- 18-5 ग्रामीण विकास का गांधीवादी उपागम (Gandhian Approach to Rural Development)
- 18.6 ग्रामीण विकास के विविध कार्यक्रम एवं उनका मूल्यांकन (Various Programs of Rural Development and their Evaluation)
- 18.7 ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका (Role of Cooperative Institutions in Rural Development)
- 18.8 ग्रामीण विकास से संबद्ध मुद्दे: पर्यावरण का क्षरण, अशिक्षा, निर्धनता, ग्रामीण ऋणग्रस्तता एवं उभरती असमानताएं (Issues Related to Rural Development: Environmental Degradation, Illiteracy, Poverty, Rural Indebtedness and Emerging Inequalities.)
- 18.9 सारांश (Summary)
- 18.10 शब्दावली (Glossary)
- 18.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)
- 18.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
- 18.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful/Helpful Text)

18.1 प्रस्तावना (Introduction)

एक कल्याणकारी देश के रूप में भारत अपनी आजादी के समय से ही एक कल्याणकारी देश रहा है और सभी सरकारी प्रयासों का बुनियादी उद्देश्य भारत के लोगों का हित-कल्याण करना रहा है। योजना स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही भारतीय नीति-निर्माण का एक मुख्य स्तंभ रही है और योजना की उपलब्धि ही देश की शक्ति है। ग्रामीण गरीबी के उन्मूलन के उद्देश्य को लेकर ही नीतियां और कार्यक्रम बनाए जाते रहे हैं और भारत में योजनाबद्ध विकास का यह मुख्य उद्देश्य रहा है। यह महसूस किया गया कि गरीबी उन्मूलन की चिरस्थायी कार्यनीति, प्रगति की प्रक्रिया में रोजगार के सार्थक अवसर बढ़ाने के सिद्धांत पर होनी चाहिए। गरीबी, अज्ञानता, रोगों तथा अवसरों की असमानता को दूर करना और देशवासियों को बेहतर तथा उच्च जीवन स्तर प्रदान करना ऐसी बुनियादी कार्यनीतियां हैं जिन पर विकास की सभी योजनाओं का ताना-बाना बुना गया है।

ग्रामीण विकास का अभिप्राय एक ओर जहां लोगों का बेहतर आर्थिक विकास करना है वहीं दूसरी ओर वृहत सामाजिक कार्याकल्प भी करना है। ग्रामीण लोगों को आर्थिक विकास की बेहतर संभावनाएं मुहैया कराने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में लोगों की उत्तुष्ट भागीदारी सुनिश्चित करने, योजना का विकेंद्रीकरण करने, भूमि सुधार को बेहतर ढंग से लागू करने और ऋण प्राप्ति का दायरा बढ़ाने का प्रावधान किया गया है।

अक्तूबर, 1974 के दौरान ग्रामीण विकास विभाग खाद्य और कृषि मंत्रालय के अंग के रूप में अस्तित्व में आया। 18 अगस्त, 1979 को ग्रामीण विकास विभाग का दर्जा बढ़ा कर उसे ग्रामीण पुनर्गठन मंत्रालय का नाम दिया गया। 23 जनवरी, 1982 को इस मंत्रालय का नामकरण ग्रामीण विकास मंत्रालय किया गया। जनवरी, 1985 के दौरान ग्रामीण विकास मंत्रालय को फिर से कृषि तथा ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधीन एक विभाग के रूप में बदल दिया गया जिसे बाद में, सितम्बर, 1985 के दौरान कृषि मंत्रालय का नाम दिया गया। 5 जुलाई, 1991 को इस विभाग को पुनः ग्रामीण विकास मंत्रालय का दर्जा दिया गया। 2 जुलाई, 1992 को इस मंत्रालय के अधीन बंजर भूमि विकास विभाग के नाम से एक और विभाग का गठन किया गया। मार्च, 1995 के दौरान इस मंत्रालय का पुनः नाम बदलकर ग्रामीण क्षेत्र तथा रोजगार मंत्रालय रखा गया और इसमें तीन विभाग शामिल किये गये यथा - ग्रामीण रोजगार तथा गरीबी उन्मूलन विभाग, ग्रामीण विकास विभाग तथा बंजर भूमि विकास विभाग।

ग्रामीण विकास एवं बहुआयामी अवधारणा है जिसका विश्लेषण दो दृष्टिकोणों के आधार पर किया गया है - संकुचित एवं व्यापक दृष्टिकोण। संकुचित दृष्टि से ग्रामीण विकास का अभिप्राय है विविध कार्यक्रमों जैसे- कृषि, पशुपालन, ग्रामीण हस्तकला एवं उद्योग, ग्रामीण मूल संरचना में बदलाव, आदि के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करना।

18.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के द्वारा हम निम्नलिखित तथ्यों से अवगत होंगे-

- ✓ ग्रामीण विकास के आशय से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ भारत में ग्रामीण विकास हेतु विविध उपागम एवं रणनीतियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ✓ महात्मा गांधी का ग्रामीण पुनर्निर्माण सम्बन्धी दृष्टिकोण की अवधारणा से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ भारत में ग्रामीण विकास के प्रमुख कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका की प्रासंगिकता का ज्ञान कर सकेंगे।
- ✓ भारत में ग्रामीण विकास से सम्बद्ध विविध समस्याएँ एवं उनके समाधान की प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।

18.3 ग्रामीण विकास की अवधारणा (Concept of Rural Development)

वृहद दृष्टि से ग्रामीण विकास का अर्थ है ग्रामीण जनो के जीवन में गुणात्मक उन्नति हेतु सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, प्रौद्योगिक एवं संरचनात्मक परिवर्तन करना।

विश्व बैंक (1975) के अनुसार-ग्रामीण विकास एक विशिष्ट समूह- ग्रामीण निर्धनों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को उन्नत करने की एक रणनीति है। बसन्त देसाई (1988) ने भी इसी रूप में ग्रामीण विकास को परिभाषित करते हुए कहा कि-ग्रामीण विकास एक अभिगम है जिसके द्वारा ग्रामीण जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता में उन्नयन हेतु क्षेत्रीय स्त्रोतों के बेहतर उपयोग एवं संरचनात्मक सुविधाओं के निर्माण के आधार पर उनका सामाजिक आर्थिक विकास किया जाता है एवं उनके नियोजन एवं आय के अवसरों को बढ़ाने के प्रयास किये जाते हैं।

क्रॉप (1992) ने ग्रामीण विकास को एक प्रक्रिया बताया जिसका उद्देश्य सामूहिक प्रयासों के माध्यम से नगरीय क्षेत्र के बाहर रहने वाले व्यक्तियों के जनजीवन को सुधारना एवं स्वावलम्बी बनाना है। जान हैरिस (1986) ने यह बताया कि ग्रामीण विकास एक नीति एवं प्रक्रिया है जिसका आविर्भाव विश्व बैंक एवं संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं की नियोजित विकास की नयी रणनीति के विशेष परिप्रेक्ष्य में हुआ है।

ग्रामीण विकास की उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि ग्रामीण विकास की रणनीति में राज्य की भूमिका को महत्वपूर्ण माना गया है। राज्य के हस्तक्षेप के वगैर ग्रामवासियों के निजी अथवा सामूहिक प्रयासों, स्वयंसेवी संगठनों के प्रयासों के आधार पर भी ग्रामीण जनजीवन को उन्नत करने के प्रयास होते रहे हैं, इन प्रयासों को ग्रामीण विकास की परिधि में शामिल किया जा सकता है। किन्तु नियोजित ग्रामीण विकास प्रारूप में राज्य की भूमिका महत्वपूर्ण मानी गयी है। इन परिभाषाओं के विश्लेषण से दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह भी उभरता है कि ग्रामीण विकास सिर्फ कृषि व्यवस्था एवं कृषि उत्पादन के साधन एवं सम्बन्धों में परिवर्तन तक ही सीमित नहीं है बल्कि ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्रौद्योगिक, संरचनात्मक सभी पहलुओं में विकास की प्रक्रियायें ग्रामीण विकास की परिधि में शामिल हैं।

18.4 ग्रामीण पुनर्निर्माण के उपागम एवं रणनीतियाँ (Approaches and Strategies of Rural Reconstruction)

भारत में ग्रामीण विकास की रणनीति अलग-अलग अवस्थाओं में बदलती रही है। इसका कारण यह है कि ग्रामीण विकास के प्रति दृष्टिकोण बदलता रहा है। वस्तुतः ग्रामीण भारत को विकसित करने हेतु राज्य द्वारा अपनाये गये प्रमुख अभिगम (दृष्टिकोण) निम्नलिखित हैं

बहुदेशीय अभिगम: बहुदेशीय अभिगम की प्रमुख मान्यता यह थी कि गावों में लोगों के सामाजिक आर्थिक विकास हेतु यह आवश्यक है कि उनकी प्रवृत्तियों एवं व्यवहारों को बदलने का संगठित प्रयास किया जाय। इस दृष्टिकोण के आधार पर 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की रणनीति अपनाई गयी जिसमें राज्य के सहयोग से लोगों के सामूहिक एवं बहुदेशीय प्रयास को शामिल करते हुए उनके भौतिक एवं मानव संसाधनों को विकसित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस प्रकार बहुदेशीय उपागम के अन्तर्गत एक शैक्षिक एवं संगठनात्मक प्रक्रिया के रूप में सामाजिक आर्थिक विकास के अवरोधों को दूर करने पर बल दिया गया।

जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण अभिगम: इस दृष्टिकोण की प्रमुख मान्यता यह थी कि ग्रामीण विकास के लिए प्रशासन का विकेन्द्रीकरण एवं लोगों की जनतांत्रिक सहभागिता का बढ़ाया जाना आवश्यक है। इस अभिगम के अनुरूप भारत में पंचायती राज संस्थाओं का विकास किया गया एवं क्षेत्रीय स्तर पर स्थानीय विकास कार्यक्रमों के निर्धारण एवं क्रियान्वयन के द्वारा ग्रामीण संरचना में परिवर्तन की रणनीति अपनाई गयी।

अधोमुखी रिसाव (ट्रिकल डाउन) अभिगम: स्वतंत्रता के पश्चात् 1950 के आरम्भिक दशक में राज्य की रणनीति इन मान्यताओं पर आधारित थी कि जिस प्रकार बोतल के ऊपर रखी कुप्पी में तेल डालने पर स्वाभाविक रूप से उसकी पेंदी में पहुँच जाता है एवं तेल के रिसने की प्रक्रिया को कुछ देर जारी रखा जाय तो बोतल भर जाती है उसी प्रकार आर्थिक लाभ भी ऊपर से रिसते हुए ग्रामीण निर्धनों तक पहुँच जायेगा। 1950 के आरम्भ में पाश्चात्य आर्थिक विशेषज्ञों ने यह मत दिया कि ग्रामीण विकास समेत सभी प्रकार का विकास आर्थिक प्रगति पर ही आधारित है इसलिए कुल राष्ट्रीय आय में वृद्धि करके ग्रामीण निर्धनता को दूर किया जा सकता है। एक दशक के अनुभवों के आधार पर उन्हें यह आभास हुआ कि उनकी रणनीति ग्रामीण निर्धनता को दूर करने में असफल रही है। तत्पश्चात् अर्थशास्त्रियों एवं समाजवैज्ञानिकों का दृष्टिकोण बदला। नये दृष्टिकोण की मान्यता यह थी कि आर्थिक प्रगति के अलावा शिक्षा को माध्यम बनाना होगा एवं ग्रामीण जनता को शिक्षित करके उनमें जागरूकता लानी होगी। इस दृष्टिकोण पर आधारित प्रयास का परिणाम यह निकला कि शिक्षित ग्रामीणों ने हल चलाने एवं कृषि कार्य रकने से इन्कार कर दिया, उनकी अभिरुचि

केवल श्वेत वसन कार्य (व्हाइट कलर वर्क) करने की बन गयी। तब 1960 में यह दृष्टिकोण पनपा कि लोगों की अभिवृत्तियों एवं उत्प्रेरकों में परिवर्तन किये वगैर ग्रामीण विकास सम्भव नहीं। 1960 के दशक के परिणामके आधार पर यह अनुभव हुआ कि कुछ प्रकार की आर्थिक प्रगति ने सामाजिक न्याय में वृद्धि की है किन्तु अन्य अनेक प्रकार की प्रगति ने सामाजिक असमानता को बढ़ाया है। 1970 के दशक में योजनाकारों एवं समाजवैज्ञानिकों का दृष्टिकोण बदला। इस नये दृष्टिकोण की मान्यता यह थी कि सामाजिक आर्थिक विकास के लाभ स्वतः रिसते हुए ग्रामीण निर्धनों तक पहुँचने की धारणा भ्रामक है। अतः ग्रामीण विकास हेतु भूमिहीनों, लघु किसानों एवं कृषि पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करना होगा। इस अभिगम के अन्तर्गत सामाजिक प्राथमिकताओं के निर्धारण एवं आर्थिक प्रगति एवं सामाजिक न्याय में संतुलन कायम रखने पर बल दिया गया।

जन सहभागिता अभिगम: जन सहभागिता उपागम की प्रमुख मान्यता यह थी कि ग्रामीण विकास की पूरी प्रक्रिया को जन सहभागी बनाना होगा। ग्रामीण विकास की पूरी प्रक्रिया को जन सहभागी बनाना होगा। ग्रामीण विकास के लिए किये जाने वाले प्रशासन को न सिर्फ लोगों के लिए बल्कि लोगों के साथ मिलकर किये जाने वाले प्रशासन के रूप में परिवर्तित करना होगा। ग्रामीण जनों से आशय यह है कि वे लोग जो विकास की प्रक्रिया से अछूते रह गये हैं तथा जो विकास की प्रक्रिया के शिकार हुए हैं अथवा ठगे गये हैं। सहभागिता का आशय यह है कि ग्रामीण विकास हेतु स्रोतों के आवंटन एवं वितरण में इन ग्रामीण समूहों की भागीदारी बढ़ाना। जनसहभागिता अभिगम पर आधारित रणनीति को क्रियान्वित करने की दिशा में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के विस्तार, विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों के विकास स्वयंसेवी संस्थाओं संयुक्त समितियों, ग्राम पंचायतों, आदि को प्रोत्साहित करने के तमाम प्रयास किये गये।

लक्ष्य समूह अभिगम: ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से प्राप्त परिणामों के आधार पर यह अनुभव हो गया था कि ये कार्यक्रम ग्रामीण समुदाय में असमानता दूर करने में असफल रहे हैं। ग्रामीण विसंगतियों में सुधार हेतु यह दृष्टिकोण विकसित हुआ कि विविध समूहों- भूमिहीन मजदूरों, ग्रामीण महिलाओं, ग्रामीण शिशुओं, छोटे किसानों, जनजातियों, आदि को लक्ष्य बनाकर तदनुरूप विकास कार्यक्रम चलाने होंगे। इस दृष्टिकोण के आधार पर दो प्रकार के प्रयास किये गये: (अ) भूमि सुधार के माध्यम से भूमिहीनों को भू-स्वामित्व दिलाने के प्रयास किये गये, एवं (ब) मुर्गीपालन, पशुपालन तथा अन्य सहयोगी कार्यक्रमों के जरिये रोजगार के अवसर विकसित किये गये। ग्रामीण महिलाओं एवं शिशुओं, जनजातियों तथा अन्य लक्ष्य समूहों के लिए पृथक-पृथक कार्यक्रम चलाये गये।

क्षेत्रीय विकास अभिगम: ग्रामीण विकास के क्षेत्रीय अभिगम की मान्यता यह थी कि भारत के विशाल भौगोलिक क्षेत्रों में अनेक गुणात्मक भिन्नतायें हैं। पर्वतीय क्षेत्र, मैदानी क्षेत्र, रेगिस्तानी क्षेत्र, जनजाति बहुल क्षेत्र आदि की समस्यायें समरूपीय नहीं हैं। अतः ग्रामीण विकास की रणनीति में क्षेत्र विशेष की समस्याओं को आधार बनाया जाना चाहिए। इस उपागम के अनुरूप अलग-अलग ग्रामीण क्षेत्रों के लिए पृथक-पृथक विकास कार्यक्रम निर्धारित किये गये तथा उनका क्रियान्वयन किया गया।

समन्वित ग्रामीण विकास अभिगम: 1970 के दशक के अन्त तक ग्रामीण विकास की रणनीतियों एवं कार्यक्रमों की असफलता से सबक लेते हुए एक नया दृष्टिकोण विकसित हुआ जो समन्वित ग्रामीण विकास अभिगम के नाम से जाना जाता है। इस अभिगम की मान्यता यह है कि ग्रामीण विकास के परम्परागत दृष्टिकोण में मूलभूत दोष यह था कि वे ग्रामीण निर्धनों के विपरीत ग्रामीण धनिकों के पक्षधर थे तथा उनके कार्यक्रमों एवं क्रियान्वयन पद्धतियों में कई अन्य कमियाँ थीं जिसके परिणामस्वरूप अपेक्षित परिणाम नहीं मिल सका। समन्वित ग्रामीण विकास अभिगम के अन्तर्गत जहाँ एक ओर ग्रामीण जनजीवन के विविध पहलुओं- आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य, प्रौद्योगिक को एक साथ समन्वित करके ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों के निर्धारण पर बल दिया गया वहीं दूसरी ओर विकास के लाभों के वितरण को महत्वपूर्ण माना गया।

इन विविध अभिगमों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि भारत में ग्रामीण विकास के प्रति चिन्तन की दिशायें समय-समय पर बदलती रही हैं। इन परिवर्तित दृष्टिकोणों पर आधारित रणनीतियों एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में भी तदरूप परिवर्तन होता रहा है।

स्वयं सेवा समूह एवं लघु वित्त अभिगम: 1990 के दशक के उत्तरार्द्ध से लेकर वर्तमान में ग्रामीण विकास की मुख्य रणनीति है स्वयं सहायता समूहों का निर्माण करना तथा वित्तीय संस्थाओं जैसे ग्रामीण बैंक, नाबार्ड, आदि द्वारा उन्हें लघु अनुदान प्रदान करते हुए स्वावलम्बी समूह के रूप में उनका विकास करना। इस दृष्टि से ग्रामीण निर्धन

महिलाओं एवं पुरुषों के छोटे-छोटे समूह, जिसमें 10-15 सदस्य शामिल हैं, विभिन्न प्रकार के उद्यम में संलग्न हैं तथा एक स्वयं सहायता समूह के रूप में विकसित हो रहे हैं। इस अभिगम में वृहद् परियोजना एवं लागत की बजाय कम पूँजी एवं लघु परियोजनाओं को प्राथमिकता दी गई है।

18-5 ग्रामीण विकास का गांधीवादी उपागम (Gandhian Approach to Rural Development)

ग्रामीण पुनर्निर्माण का आशय है गांवों को विकसित एवं रूपान्तरित करते हुए उसका पुनः निर्माण करना। ग्रामीण विकास के उपागम विविध हैं। मोटे तौर पर इन उपागमों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है: संघर्षवादी एवं प्रकायवादी उपागम। संघर्षवादी प्रारूप में ग्रामीण पुनर्निर्माण की प्रक्रिया द्वन्द्ववादी है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में परिवर्तन के जरिये सम्पूर्ण ग्रामीण संरचना का पुनर्निर्माण संभव है जिसमें सामाजिक संघर्ष की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इसके विपरीत प्रकायवादी प्रारूप में सामाजिक संघर्ष की बजाय अनुकूलन एवं सामंजस्य के द्वारा ग्रामीण संरचना का रूपान्तरण एवं पुनर्निर्माण किया जाता है।

महात्मा गाँधी की ग्रामीण पुनर्निर्माण योजना को दो प्रमुख आधारों पर समझा जा सकता है: प्रथम यह कि गांधी किस प्रकार का ग्राम बनाना चाहते थे, दूसरा यह कि उनकी ग्रामीण पुनर्निर्माण योजना वर्तमान समाज में कितनी प्रासंगिक है? वस्तुतः गांधी की ग्रामीण पुनर्निर्माण की परिकल्पना उनके विचारों एवं मूल्यों पर आधारित है। गांधी के विचार, दर्शन एवं सिद्धान्त के प्रमुख अवयव हैं। सत्य के प्रति आस्था, अहिंसा की रणनीति, विध्वंस एवं निर्माण की समकालिकता, साधन की पवित्रता के माध्य से लक्ष्य की पूर्ति, गैर प्रतिस्पर्धात्मक एवं अहिंसक समाज का गठन धरातल बद्धमूल विकास वृहद् उद्योगों की बजाय कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन, श्रम आधारित प्रौद्योगिकी की महत्ता, ग्रामीण गणराज्य एवं ग्राम स्वराज के आधार पर ग्राम स्वावलम्बन की स्थापना, इत्यादि।

गांधी की दृष्टि में विकेन्द्रित ग्रामीण विकास की रणनीति को ग्रामीण पुनर्निर्माण में आधारभूत बनाना अनिवार्य है। उन्होंने पंचायती राज के गठन पर बल दिया। गांधी ग्रामीण विकास को सम्पोषित स्वरूप प्रदान करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने प्रकृति के दोहन की बजाय प्रकृति से तादात्म्य बनाने का सुझाव दिया। उनकी दृष्टि में नैतिक शिक्षा एवं प्रकृति से प्रेम करने की शिक्षा दी जानी चाहिए। सादा जीवन एवं उच्च विचार के अपने आदर्शों के अनुरूप उन्होंने लालच से बचने एवं अपनी आवश्यकताओं को सीमित करने का सुझाव दिया। उन्होंने यह कहा कि प्रकृति के पास इतना पर्याप्त स्रोत है कि वह संसार के समस्त प्राणियों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है किन्तु लालच को पूरा कर पाने में सम्पूर्ण पृथ्वी भी अपर्याप्त है।

गांधी की दृष्टि में ग्रामीण रूपान्तरण एवं ग्रामीण पुनर्निर्माण की सम्पूर्ण प्रक्रिया में गांव की स्वाभाविक विशिष्टता सुरक्षित बनाये रखना अनिवार्य है। ग्रामीण औद्योगिकरण के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने खादी एवं ग्रामोद्योग को विकसित करने पर बल दिया। अपनी पुस्तक हिन्द स्वराज में गांधी ने ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा पोषित आधुनिक सभ्यता को आर्थिक क्लेश का प्रमुख कारक माना तथा इससे मुक्ति हेतु उन्होंने भारत की प्राचीन संस्कृति के मूल्यों-सत्य, अहिंसा, नैतिक प्रगति को पुनर्जीवित करते हुए मानव विकास की परिकल्पना की। खादी आन्दोलन को औपनिवेशिक संघर्ष का माध्यम बनाते हुए उन्होंने महिलाओं एवं समस्त ग्रामीण जनसमूहों को न सिर्फ आर्थिक एवं राजनीतिक सक्रिय भागीदार बनाया बल्कि उन्हें सशक्त एवं स्वावलम्बी बनाने का प्रयास भी किया।

गांधी की परिकल्पना में ग्रामीण उद्योग की परिधि में वे समस्त गतिविधियाँ, कार्य एवं व्यवसाय सम्मिलित हैं जिसमें ग्राम स्तर पर ग्रामीणों के लिए वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है, स्थानीय क्षेत्रों में उपलब्ध कच्चे माल का उपयोग करते हुए सरल उत्पादन प्रक्रिया अपनाई जाती है, केवल उन्हीं उपकरणों का प्रयोग किया जाता है जो ग्रामीणों की सीमित आर्थिक क्षमता में सम्भव हैं, जिसकी प्रौद्योगिकी निर्जीव शक्ति-विद्युत, मोटर, इत्यादि की बजाय जीवित शक्तियों-मनुष्य, पशु, पक्षी द्वारा संचालित होती है तथा जिसमें मानव श्रम का विस्थापन नहीं किया जाता है।

गांधी ने आधुनिक मशीन आधारित उत्पादन प्रणाली की बजाय मानव श्रम आधारित उत्पादन प्रणाली पर बल दिया क्योंकि उनकी दृष्टि में भारत जैसी विशाल आबादी वाले देश में अधिकांश लोगों को रोजगार प्रदान करने का यह सर्वोत्तम विकल्प है। गांधी के ग्रामोद्योग की परिकल्पना ने जहाँ एक ओर हिंसारहित, शोषण विहीन, समानता के अवसर युक्त प्रकृति को संरक्षित एवं संपोषित करने वाले ग्रामीण उद्योगों के विकास का पथ प्रदर्शित किया वहीं दूसरी

ओर उत्पादन की प्रक्रिया में मशीनों के प्रयोग, बाजार एवं साख से जुड़े प्रश्न समेत अनेक वाद-विवाद भी उत्पादन किया। स्वतंत्र भारत में बाजार के अनुभवों के आधार पर इस तरह के प्रश्न उभरे कि खादी एवं ग्रामोद्योग उत्पादों का बाजार अत्यन्त सीमित है, इनके उत्पादकों की आर्थिक दशा दयनीय है क्योंकि मशीन आधारित उत्पादकों से प्रतिस्पर्धा में वे पिछड़े हुए हैं, इत्यादि। इन प्रश्नों के उत्तर समय-समय पर गांधीवादी परिप्रेक्ष्य में संशोधित होते रहे हैं। आरम्भिक अवस्था में खादी हेतु बाजार का प्रश्न गांधी के लिए महत्वपूर्ण नहीं था। उन्होंने भारतीयों को खादी वस्त्र धारण करने का संदेश दिया जिसमें खादी के लिए बाजार से जुड़े प्रश्न का उत्तर सन्निहित था। 1946 में गांधी ने बाजार की मांग के अनुरूप वाणिज्यिक खादी एवं हैण्डलूम के अलावे पावरलूम को भी स्वीकृति दी।

स्वतंत्र भारत में 1948 की प्रथम औद्योगिक नीति से लेकर 1991 की नई लघु उद्यम नीति तक ग्रामीण रोजगार सृजन एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को समृद्ध करने हेतु खादी एवं ग्रामोद्योग को प्रोत्साहित किया गया। किन्तु व्यावहारिक स्तर पर गांधीवादी उपागम पर आधारित ग्रामीण औद्योगिकरण की प्रक्रिया भारत में ग्रामीण निर्धनता एवं बेरोजगारी उन्मूलन में पूर्णतः सफल नहीं हो सकी तथा विविध समस्याएँ अभी भी बनी हुई हैं, जैसे-

1. खादी उत्पादकों की आय इतनी कम है कि इसके जरिये वे निर्धनता रेखा से उपर उठने में असमर्थ हैं। हाल ही में महिला विकास अध्ययन केन्द्र, गुजरात द्वारा किये गये सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्य इस निष्कर्ष की पुष्टि करते हैं।
2. खादी उत्पादकों के लिए बाजार एक प्रमुख समस्या बनी हुई है।
3. कोआपरेटिव संस्थाओं के जरिये खादी एवं अन्य कुटीर उत्पादों के बाजारीकरण एवं उत्पादक सम्बन्धी संस्थागत प्रयास प्रायः असफल ही रहे हैं।

गांधी के ग्रामीण पुनर्निर्माण की रणनीति का आविर्भाव एक विशिष्ट ऐतिहासिक एवं सामाजिक आर्थिक परिप्रेक्ष्य में हुआ। यद्यपि ग्रामीण औद्योगिकरण की गांधीवादी परिकल्पना व्यवहार में बहुत सफल नहीं रही किन्तु इसका यह आशय नहीं कि गांधी का दृष्टिकोण अप्रासंगिक है। आधुनिकता के पक्षधर पंडित जवाहर लाल नेहरू ने यह स्वीकार किया कि तीव्र प्रगति हेतु आधुनिक मशीनों का उपयोग आवश्यक है किन्तु भारत की बहुसंख्यक आबादी के परिप्रेक्ष्य में गांधी का मानव श्रम पर आधारित प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित करने सम्बन्धी दृष्टिकोण अत्यन्त प्रासंगिक है।

18.6 ग्रामीण विकास के विविध कार्यक्रम एवं उनका मूल्यांकन (Various Programs of Rural Development and their Evaluation)

राज्य द्वारा ग्रामीण विकास के क्षेत्र में लागू किये गये कार्यक्रमों को मोटे तौर पर चार भागों में बाँटा जा सकता है: (अ) आय बढ़ाने वाले कार्यक्रम (ब) रोजगार उन्मुख कार्यक्रम (स) शिक्षा एवं कल्याण कार्यक्रम (द) क्षेत्रीय कार्यक्रम। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विविध पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत अनेकानेक ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाये गये।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का मूल्यांकन: भारत में ग्रामीण विकास के विविध प्रयासों की सफलता एवं असफलता की समीक्षा करने पर यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज एवं विशेषकर ग्रामीण निर्धनों पर ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की बहुत सीमित सफलता प्राप्त हुई है। ग्रामीण विकास की नीतियों, कार्यक्रमों के निर्धारण एवं क्रियान्वयन में कमियों के कारण ग्रामीण रुपान्तरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण परिणाम नहीं दृष्टिगोचर होता। कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रमों के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों के आधार पर उनका मूल्यांकन किया जा सकता है। इस क्रम में निम्नलिखित का अध्ययन किया जाना अनिवार्य है

1. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम
2. संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना
3. काम के बदले अनाज योजना
4. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना
5. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (NSAP)

18.7 ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका (Role of Cooperative Institutions in Rural Development)

सहकारी समिति व्यक्तियों का एक स्वायत्त संगठन है जिसके सदस्य स्वेच्छया संयुक्त होकर अपनी सामान्य आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति साझा स्वामित्व एवं जनतांत्रिक रूप से नियंत्रित उद्यमों के आधार पर करते हैं।

भारत में औपचारिक सहकारी समितियों का प्रादुर्भाव 1904 में प्रमुखतः साख समितियों के रूप में हुआ तथा 1912 से गैर साख सहकारी समितियाँ गठित होने लगीं। 1928 में रायल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर ने सहकारिता के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा कि यदि सहयोग असफल होगा तो इसका आशय यह है कि ग्रामीण भारत में सर्वोत्तम आकांक्षाएं असफल होंगी। कृषक समाज के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन में सहकारी संस्थाओं को एक महत्वपूर्ण अभिकरण माना गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सहकारिता को भारत की नियोजित आर्थिक विकास प्रक्रिया की रणनीति में शामिल किया गया तथा विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारी क्षेत्रों का विस्तार होता गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि, बाजार, कुटीर उद्योग, प्रसंस्करण उद्योग तथा आन्तरिक व्यापार इत्यादि क्षेत्रों में सहकारी संगठन विविध आर्थिक गतिविधियों के माध्यम बने। प्रथम पंचवर्षीय योजना में सहकारी योजना समिति के इस सुझाव को स्वीकार किया गया कि भारत के 50 प्रतिशत गांवों में 30 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को आगामी दस वर्षों में सहकारी क्षेत्रों से सम्बद्ध किया जाय। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कोआपरेटिव क्रेडिट सोसायटीज की संख्या 5 मिलियन से बढ़कर 15 मिलियन तक हो गई। तृतीय पंचवर्षीय योजना में सामाजिक स्थायित्व एवं आर्थिक संवृद्धि हेतु सहकारिता को महत्वपूर्ण कारक के रूप में स्वीकारा गया। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में कृषि सहकारी समितियों एवं उपभोक्ता सहकारी समितियों ने सहकारिता आन्दोलन को प्रमुख रूप से आगे बढ़ाया। पंचम पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने, सीमांत कृषकों एवं दुर्बल समूहों आदि लक्ष्यों पर केन्द्रीकरण करके सहकारी संस्थाओं को सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया गया। छठवीं पंचवर्षीय योजना में सहकारी संस्थाओं की सफलताओं एवं असफलताओं के मिश्रित परिणाम परिलक्षित हुए। सातवीं पंचवर्षीय योजना में सहकारी इकाईयों के गठन, पिछड़े राज्यों में विशेष कार्यक्रम बनाने तथा लोक वितरण प्रणाली का विस्तार करने की रणनीति बनाई गई। आठवीं पंचवर्षीय योजना में यह अनुभव किया गया कि सरकार की आर्थिक नीतियों में कृषि सहकारी समितियों की भूमिका महत्वपूर्ण बनी रहेगी। नवीं एवं दसवीं पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि उत्पादों के बाजारीकरण, बाजार की संरचना के निर्माण, कृषि प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना से लेकर गैर कृषि क्षेत्रों में सहकारी संस्थाओं की भूमिका का विस्तार हुआ। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में भी सहकारी समितियाँ ग्रामीण क्षेत्रों की विविध गतिविधियों में संलग्न हैं।

वैश्वीकरण के नये दौर की चुनौतियों से निबटने हेतु भारत सरकार ने अप्रैल 2002 में सहकारिता की राष्ट्रीय नीति बनाई जिसमें देश भर में सहकारी समितियों के चतुर्दिक् विकास हेतु सहायता प्रदान करने को प्रमुखता दी गई है। इस नीति के अनुसार जनसहभागिता एवं सामुदायिक प्रयास की आवश्यकता वाले सहकारी संस्थाओं को स्वायत्त, जनतांत्रिक एवं उत्तरदायी बनाने हेतु आवश्यक सहकारी सहायता दी जायेगी। सरकार का हस्तक्षेप सहकारी समितियों में समय से चुनाव कराने, लेखा जोखा करने तथा इसके सदस्यों के हितों की सुरक्षा करने तक ही सीमित रहेगा। सहकारी समितियों के प्रबन्धन एवं कार्यों में कोई सरकारी दखलन्दाजी नहीं होगी। भारत सरकार ने सन् 2002 में नया बहुराज्यीय सहकारी समिति अधिनियम पारित किया है जिसका लक्ष्य सहकारी संस्थाओं को पूर्ण प्रकार्यात्मक स्वायत्तता प्रदान करना तथा इनका जनतांत्रिक प्रबन्धन करना है। भारत की सहकारी नीति अन्तर्राष्ट्रीय सहकारिता के मान्य नियमों एवं आदर्शों-पंजीकरण को सरल बनाने, संशोधन करने, आदि को प्रतिबिम्बित करती है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सहकारी समितियाँ अपने स्रोतों एवं संसाधनों को बढ़ाने हेतु स्वतंत्र हैं तथा उनका दायित्व भी अपेक्षाकृत बढ़ गया है।

ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। सहकारी संस्थाएं कृषि एवं गैर कृषि समेत विविध क्षेत्रों में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हासिल की हैं। उदाहरणार्थ 1940 के दशक में दुग्ध के वितरक व्यापारियों एवं ठेकेदारों द्वारा दुग्ध उत्पादकों का शोषण किया जाता था। इस शोषण के विरोध में गुजरात के कैरा जिला में सहकारी आन्दोलन शुरू हुआ, जिसके सुखद अनुभवों से प्रभावित होकर देश के विभिन्न हिस्सों में अबतक 75000 डेयरी कोपरेटिव

सोसायटी की स्थापना हो चुकी है, जिसमें लगभग 10 मिलियन सदस्य हैं। विविध अध्ययनों से प्राप्त तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि डेयरी कोऑपरेटिव ने रोजगार के श्रृंखला, बाजारीकरण एवं वितरण सभी दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्र में संपोषित विकास किया है। सहकारी संस्था के अनुशासन, परिश्रम, सफाई, उन्नत प्रौद्योगिकी, महिलाओं की सक्रिय भागीदारी, जनतांत्रिक नियंत्रण, इत्यादि विशेषताओं के आधार पर अमूल डेयरी सफलता का पर्याय बन गया। इसी प्रकार कृषि एवं अन्य क्षेत्रों में भी कोऑपरेटिव सोसायटी का उल्लेखनीय योगदान रहा है। किन्तु दूसरी ओर यह भी एक तथ्य है कि उपभोक्ता क्षेत्रों से जुड़ी अनेक सहकारी समितियाँ सीमित व्यक्तियों को ही लाभान्वित करती रही हैं, आम जनों को इनका लाभ अपेक्षित रूप में नहीं मिल सका है।

वैश्वीकरण के नये दौर में सहकारी संस्थाओं के समक्ष नई चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं। उदाहरणार्थ डेयरी उद्योग में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों एवं निजी पूँजीपतियों द्वारा अत्यधिक पूँजीनिवेश के परिणामस्वरूप बाजार की नियंत्रण प्रणाली पर डेयरी सहकारी समितियों का प्रभुत्व नहीं रह गया बल्कि गुणवत्ता, सफाई, प्रसंस्करण के मानदंड, इत्यादि में प्रतिस्पर्द्धा बढ़ी है तथा बाजार व्यवस्था पर निजी पूँजी का वर्चस्व बढ़ा है। इस नये परिप्रेक्ष्य में सहकारी संस्थाओं को और अधिक सक्षम बनना होगा ताकि वे प्रतिस्पर्द्धा में अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सकें।

18.8 ग्रामीण विकास से संबद्ध मुद्दे: पर्यावरण का क्षरण, अशिक्षा, निर्धनता, ग्रामीण ऋणग्रस्तता एवं उभरती असमानताएं (Issues Related to Rural Development: Environmental Degradation, Illiteracy, Poverty, Rural Indebtedness and Emerging Inequalities.)

ग्रामीण विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है। भारत में ग्रामीण विकास के अबतक के प्रयास के बावजूद कुछ समस्याएँ बनी हुई हैं। जैसे- पर्यावरण का क्षरण, अशिक्षा/ निरक्षरता, निर्धनता, ऋणग्रस्तता, उभरती असमानता, इत्यादि। इन मुद्दों को भलीभाँति विश्लेषित कर ग्रामीण विकास की भावी रणनीति को अनुकूल बनाया जा सकता है।

(क) पर्यावरण का क्षरण- विकास के भौतिकवादी प्रारूप ने भूमि, वनों, प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध उपभोग एवं दोहन को बढ़ाया है जिसके परिणाम स्वरूप पर्यावरण का संतुलन बिगड़ा है। मानव एवं अन्य प्राणियों-पशु, पक्षी आदि के समक्ष पर्यावरण के क्षरण के परिणामस्वरूप कई समस्याएँ उभरी हैं एवं पर्यावरण को संरक्षित करने हेतु वैश्विक एवं राष्ट्रीय प्रयास किये जा रहे हैं। मानव द्वारा पर्यावरण के दोहन ने निम्न समस्याएँ उत्पन्न की हैं: वैश्विक गर्मी, ओजोन परत में छिद्र होना, ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन, समुद्र के स्तरों में उभार, जल प्रदूषण, उर्जा संकट, वायु प्रदूषण से जुड़ी व्याधियाँ जैसे अस्थमा में वृद्धि, लीड का विषाणुपन, जेनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा संशोधित खाद्यान्नों के उत्पादन सम्बन्धी विवाद, प्लास्टिक एवं पोलिथिन के प्रयोग, गहन खेती, रासायनिक उर्वरकों के अधिकाधिक प्रयोग के परिणामस्वरूप भूमि का प्रदूषण एवं बंजर होना, नाभिकीय अस्त्र एवं नाभिकीय प्रकाश से जुड़ी दुर्घटनाएँ, अति जनसंख्या की त्रासदी, ध्वनि प्रदूषण, बड़े-बड़े बांध के निर्माण से उत्पन्न पर्यावरणीय प्रभाव, अति उपभोग की पूँजीवादी संस्कृति, वनों का कटाव, विषैली धातुओं के प्रयोग, क्षरण न होने वाले कूड़े करकट का निस्तारण, इत्यादि। भारत में चिपको आन्दोलन, नर्मदा बचाओ आन्दोलन जैसे अनेक जनआन्दोलन किये गये हैं जिनमें पुरुषों एवं महिलाओं दोनों की सक्रिय भागीदारी परिलक्षित होती है। सुन्दरलाल बहुगुणा, मेधा पाटकर, गौरा देवी, सुनीता नारायण आदि के वैयक्तिक योगदान के अतिरिक्त कुछ स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका उल्लेखनीय है।

अशिक्षा/निरक्षरता: अशिक्षा वस्तुतः सामाजिक-आर्थिक विकास से सम्बन्धित सभी मुद्दों की जननी है जिसके परिणामस्वरूप निर्धनता, बेकारी, बाल श्रम, बालिका भ्रूण हत्या, अति जनसंख्या, जैसी अनेक समस्याएँ गहरी हुई हैं। सामाजिक विकास के पैमाने में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण सूचक के रूप में स्वीकारा गया है। भारत में हाल के दशकों में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन, सर्वशिक्षा अभियान, निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा का अधिकार अधिनियम, अपरान्ह भोजन, दुर्बल समूहों को स्कालरशीप, वित्तीय सहायता, दाखिला में आरक्षण, जैसे अनेक सरकारी प्रयास किये गये हैं। दूसरी ओर अनेक गैर सरकारी संस्थाएँ भी शिक्षा अभियान में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। इन सबके बावजूद विविध

अध्ययनों से प्राप्त तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि भारत, टर्की, इरान जैसे देशों में अभी भी निरक्षरों की संख्या काफी अधिक है जबकि श्रीलंका, म्यांमार, वियतनाम जैसे देशों ने अल्प समय में उच्च साक्षरता दर हासिल कर लिया है।

ग्रामीण निर्धनता: दुर्बल समूहों के उत्थान एवं गरीबी निवारण के विविध प्रयासों के बावजूद भारत में निर्धनता का उन्मूलन नहीं हो सका है। सन् 2005 के विश्व बैंक के आकलन के अनुसार भारत में 41 प्रतिशत अर्थात् 456 मिलियन व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा से नीचे (प्रतिदिन 1 डालर से कम आय वाले) है। 1981 में भारत में निर्धन व्यक्तियों की संख्या अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार 60 प्रतिशत थी जो 2005 तक घटकर 41 प्रतिशत हुई है। भारत सरकार के योजना आयोग के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि भारत में निर्धनों की आबादी 1977-78 में 51.3 प्रतिशत थी जो 1993-94 में घटकर 36 प्रतिशत हुई तथा 2004-05 में 27 प्रतिशत आबादी ही निर्धन है। नेशनल काउंसिल फार एप्लायड इकोनोमिक रिसर्च के आकलन के अनुसार सन् 2009 में यह पाया गया कि भारत के कुल 222 मिलियन परिवारों में से पूर्णरूपेण निर्धन (जिनकी वार्षिक आय 45000 रुपये से कम थी) 35 मिलियन परिवार हैं, जिनमें लगभग 200 मिलियन व्यक्ति सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त 80 मिलियन परिवारों की वार्षिक आय 45000 से 90000 रुपये के बीच है। हाल ही में जारी की गई विश्व बैंक की रिपोर्ट में यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में निर्धनता उन्मूलन के प्रयासों के बावजूद सन् 2015 तक 53 मिलियन व्यक्ति (23 प्रतिशत आबादी) पूर्णरूपेण निर्धन बने रहेंगे जिनकी आय 1 मिलियन डालर प्रतिदिन से कम होगी।

भारत में निर्धनता के तथ्य यह भी प्रदर्शित करते हैं कि निर्धनता की आवृत्ति जनजातियों, अनुसूचित जातियों में सर्वाधिक हैं। यद्यपि इस निष्कर्ष पर आम सहमति है कि भारत में हाल के दशकों में निर्धनों की संख्या घटी है किन्तु यह तथ्य अभी भी विवादस्पद बना हुआ है कि निर्धनता कहाँ तक कम हुई है। इस विवाद का मूल कारण विभिन्न अभिकरणों के द्वारा आकलन की पृथक-पृथक रणनीति अपनाया जाना है। न्यूयार्क टाइम्स ने अपने अध्ययन में यह दर्शाया है कि भारत में 42 प्रतिशत बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के आकलन के आधार पर विश्व बैंक ने यह निष्कर्ष दिया कि विश्व के सामान्य से कम भार वाले शिशुओं का 49 प्रतिशत तथा अवरूद्ध विकास वाले शिशुओं का 34 प्रतिशत भारत में रहता है।

इन तथ्यों से यह स्पष्ट है कि भारत में ग्रामीण विकास के तमाम प्रयासों के बावजूद ग्रामीण निर्धनता की समस्या का उन्मूलन नहीं हो पाया है। ग्रामीण विकास की भावी रणनीति में निर्धनता की समस्या को प्राथमिकता प्रदान करते हुए विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करना होगा।

स्वास्थ्य समस्याएँ: ग्रामीण विकास के तमाम प्रयास के बावजूद ग्रामीण जनो हेतु स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। ग्रामीण दूर दराज के क्षेत्रों में न सिर्फ विशेषज्ञ चिकित्सकों बल्कि सामान्य चिकित्सकों का भी अभाव है। परिणामस्वरूप ग्रामीण जनो की स्वास्थ्य की दशाएँ दयनीय हैं। लगभग 75 प्रतिशत स्वास्थ्य संरचना, चिकित्सक एवं अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी स्रोत नगरों में उपलब्ध हैं जहाँ 27 प्रतिशत आबादी निवास कर रही है। ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य दशाओं के अन्तराल के कई अन्य सूचक हैं

भारत में सन् 2000 तक सबके लिए स्वास्थ्य का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, किन्तु यह लक्ष्य अभी तक प्राप्त नहीं किया जा सका है। नेशनल रूरल हेल्थ मिशन जैसे कार्यक्रमों के जरिये भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान की जा रही हैं। समाजकार्य की दृष्टि से ग्रामीण आबादी की स्वास्थ्य की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु वर्तमान जीव चिकित्सा प्रारूप (बायोमेडिकल माडल) की बजाय समाज सांस्कृतिक स्वरूप (सोसियोकल्चरल माडल) अपेक्षाकृत अधिक प्रासंगिक होगा। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के विस्तृत संशोधित प्रारूप में ग्रामीण नगरीय असमान संरचना के पहलुओं को ध्यान में रखते हुए दीर्घकालीन योजना बनानी होगी तथा ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक सशक्त करना होगा।

ग्रामीण ऋणग्रस्तता : भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ग्रामीण ऋणग्रस्तता एक गम्भीर समस्या है। ऋणग्रस्तता का आशय है ऋण से ग्रस्त व्यक्ति के लिए ऋण चुकाने की बाध्यता का होना। ग्रामीण भारत में निर्धन किसानों एवं मजदूरों द्वारा अपनी आवश्यकताओं के कारण लिया जाने वाला कर्ज जब बढ़ जाता है एवं वे अपनी कर्ज अदायगी में असमर्थ हो जाते हैं तो यह स्थिति ग्रामीण ऋणग्रस्तता की समस्या उत्पन्न करती है। ग्रामीण ऋणग्रस्तता वस्तुतः हमारी कमजोर

वित्तीय संरचना की सूचक है जो यह प्रदर्शित करती है कि हमारी आर्थिक व्यवस्था जरूरतमंद किसानों, भूमिहीनों एवं कृषक मजदूरों तक पहुँचने में दुर्बल है।

ग्रामीण ऋणग्रस्तता का प्रादुर्भाव कैसे होता है। इस प्रश्न का विश्लेषण यह है कि ग्रामीण कृषक एवं मजदूर कृषि कार्य हेतु अथवा अपने परिवार के भरण-पोषण, शादी-विवाह, बीमारी के इलाज एवं अन्य कार्य हेतु ऋण लेते हैं। अल्प आय, पारिवारिक व्यय, इत्यादि के कारण वे ऋण को चुकाने में असमर्थ हो जाते हैं तथा उन ऋणों पर सूद बढ़ता जाता है। वित्तीय संस्थाओं की जटिल औपचारिकताओं को पूरा न कर पाने एवं समय पर तत्काल ऋण प्राप्त न होने, आदि कारणों की वजह से निर्धन किसान एवं मजदूर निजी सूदखोरों एवं महाजनों से कर्ज लेते हैं जिनके द्वारा मनमाना सूद लेने, बेगार कराने, जैसे अनेक शोषण किया जाता है तथा ऋणग्रस्तता की समस्या पीढ़ी दर पीढ़ी बनी रहती है। रायल कमीशन ऑन लेबर, 1928 ने ब्रिटिश काल में किसानों की दशा पर अपनी रिपोर्ट में यह व्यक्त किया कि 'भारतीय किसान ऋण में पैदा होता है। ऋण में जीवन व्यतीत करता है तथा अपनी आगामी पीढ़ी को भी ऋणग्रस्तता की विरासत सौंप जाता है।'

मोटे तौर पर ग्रामीण ऋणग्रस्तता के निम्नलिखित कारक हैं-

1. कम आय
2. शिक्षा का अभाव
3. ऋण का अनुत्पादक व्यय एवं उपभोग में अपव्यय
4. विरासत में प्राप्त ऋणग्रस्तता
5. विवादों में धन की बर्बादी
6. दुर्बल वित्तीय समावेश
7. बैंकिंग सुविधाओं एवं सेवाओं की दुर्बल बाजार प्रणाली
8. कर्ज देने की दोषपूर्ण प्रणाली
9. माँसून की अनिश्चितता
10. सामाजिक प्रथाओं/रीति-रिवाजों में अपव्यय
11. कृषि उत्पादों की उच्च लागत
12. ऋणग्रस्तता के परिणाम
13. बंधक जमीन अथवा वस्तुओं को बेचने की बाध्यता
14. सूदखोरों द्वारा शोषण
15. श्रम की क्षमता में कमी
16. ग्रामीण समाज में भेदभाव का बढ़ना
17. सामाजिक विघटन जैसे आत्म हत्या एवं अपराध में वृद्धि
18. भूस्वामी एवं भूमिहीन के रूप में समाज का विभाजन
19. सामाजिक-आर्थिक विकास में बाधा
20. बहुआमजदूरी की समस्या का उद्भव
21. भारतीय अर्थव्यवस्था का हास

ऋणग्रस्तता पर नियंत्रण हेतु किये गये प्रयास में समय-समय पर राज्य एवं केन्द्र सरकारों ने ऋण माफ किया।

कृषि ऋण माफी योजना 2008 के अन्तर्गत भारत सरकार ने बैंक एवं वित्तीय संस्थाओं को 10000 करोड़ रुपये का अनुदान दिया ताकि वे देश भर में कृषि ऋण को माफ करते हुए अपनी भरपाई भी कर सकें।

1. केन्द्र सरकार द्वारा सन् 1990-91 में कृषि एवं ग्रामीण ऋण सहायता योजना लागू की गई।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में कोऑपरेटिव सोसाइटी, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, वाणिज्यिक बैंक, इत्यादि समेत कई संस्थागत वित्तीय एवं साख एजेन्सी विकसित की गई।
3. सूदखोरी पर वैधानिक एवं प्रशासनिक रूप से नियंत्रण किया गया।

4. सन् 1985 में विस्तृत फसल बीमा योजना लागू की गई।
5. सन् 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड कार्यक्रम चलाया गया।
6. सन् 2000 में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना क्रियान्वित की गई।
7. सन् 2004 में कृषि क्षेत्र आय बीमा योजना लागू किया गया।
8. सन् 2004 में राष्ट्रीय कृषक आयोग गठित किया गया।
9. लघु किसान विकास अभिकरण कार्यक्रम चलाया गया।
10. राज्य स्तर पर किसान ऋण माफी योजना लागू की गई।
11. लघु वित्त योजना, स्वयं सहायता समूहों को बैंक से जोड़ने का प्रयास किया गया।

• ग्रामीण निर्धनों एवं भूमिहीन श्रमिकों के आर्थिक उत्थान हेतु महात्मा गांधी नेशनल रूरल इम्प्लायमेंट गारंटी कार्यक्रम (मनरेगा) सन् 2006 में लागू किया गया।

भारत सरकार के श्रम एवं नियोजन मंत्रालय से जारी प्रपत्र यह प्रदर्शित करते हैं ग्रामीण ऋणग्रस्तता वस्तुतः ग्रामीण विकास में एक महत्वपूर्ण बाधा/अवरोध है। ग्रामीण ऋणग्रस्तता न सिर्फ सामाजिक आर्थिक अवसरों में असमानता को बढ़ाती है बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में संवृद्धि प्रक्रिया को बाधित करती है तथा ऋणग्रस्त परिवारों में कुंठा एवं अवसाद के कारण जनतांत्रिक प्रक्रियाओं में सहभागिता हेतु उनमें अन्तरपीडित विकलांगता उत्पन्न करती है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की रिपोर्ट यह प्रदर्शित करती है कि भारत में ऋणग्रस्तता से ग्रसित अवसादों के कारण 2005 में आत्म हत्या करने वाले व्यक्तियों में सीमांत किसानों एवं कृषक मजदूरों की संख्या 15 प्रतिशत से अधिक थी। नेशनल सैम्पल सर्वे आर्गनाइजेशन के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि सन् 2002 में भारत के कुल कृषक परिवारों का 49 प्रतिशत ऋणग्रस्त है।

उभरती असमानताएँ: बर्लिन की दीवार के ध्वस्तीकरण (1989) एवं वैश्वीकरण (1991) के दौर में विश्व भर में लगभग 3 बिलियन पूँजीपति वैश्विक अर्थव्यवस्था में शामिल हुए हैं। पूँजी के वर्चस्व ने भारत समेत विश्व के स्तर पर असमानता की खाई को बढ़ाया है। भारत के आम जन निर्धन हैं किन्तु भारत को उभरती आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति के रूप में पहचान मिली है। कम आय के बावजूद भारत के दक्ष तकनीकी समूह ने विकसित एवं पूँजीपति देशों के समक्ष एक विकट चुनौती उत्पन्न किया है।

विश्व की कुल आबादी में भारत लगभग 16 प्रतिशत आबादी का प्रतिनिधित्व करता है। भारत में लगभग 35 प्रतिशत आबादी अन्तर्राष्ट्रीय मानक प्रतिदिन 1 डालर से कम आय के अनुसार निर्धन हैं। 2001 के आंकड़ों के अनुसार यदि अन्तर्राष्ट्रीय निर्धनता रेखा को प्रतिदिन 2 डालर से कम आय पर निर्धारित कर दिया जाय तो भारत की 86 प्रतिशत आबादी निर्धनता रेखा के नीचे आ जायेगी। भारत में उभरती हुई असमानता के कई कारक हैं सर्वप्रथम, भारत के कुल राष्ट्रीय उत्पाद में औद्योगिक एवं सेवा क्षेत्र तीव्रता से बढ़ा है किन्तु श्रमिकों की हिस्सेदारी अपेक्षित रूप में नहीं बढ़ी है। द्वितीय उच्च विकास दर के बावजूद संगठित उद्योगों में रोजगार के नये अवसर स्थिर हो गए हैं, असंगठित क्षेत्र में रोजगार के अवसर अवश्य बढ़े हैं किन्तु असंगठित क्षेत्रों से अर्जित की गई आय इतनी अल्प है कि निर्धनता रेखा से ऊपर लाने में असमर्थ है।

18.9 सारांश (Summary)

सूचना प्रौद्योगिकी के नये दौर में कम्प्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल जैसे अत्याधुनिक उपकरणों ने असमानता का नया प्रतिमान उभारा है। जिसे डिजिटल डिवाइड के रूप में पुकारा जाता है। सूचना प्रौद्योगिकी में कुशलता के आधार पर एक नया अभिजन वर्ग उभरा है जो इंटरनेट का उपयोग न कर पाने वाले समूहों की अपेक्षा विकास का वास्तविक लाभार्थी बना है। सूचना प्रौद्योगिकी में दक्ष एवं कुशल व्यक्तियों को अकुशल व्यक्तियों की अपेक्षा कई गुणा अधिक वेतन पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों में नौकरियाँ उपलब्ध हुई हैं। सूचना प्रौद्योगिकी ने सामाजिक असमानता के परम्परागत आधारों- जमीन जायदाद, औद्योगिक स्वामित्व, सम्पत्ति एवं पूँजी आदि में एक नया आयाम जोड़ा है।

18.10 शब्दावली (Glossary)

1. ग्रामीण विकास : एक बहुआयामी प्रक्रिया है। भारत में ग्रामीण विकास से तात्पर्य उन मुद्दों से है जिनके कारण ग्रामीण विकास संभव नहीं हो पा रहा है जैसे :- पर्यावरण का क्षरण, अशिक्षा/ निरक्षरता, निर्धनता, ऋणग्रस्तता, उभरती असमानता, इत्यादि।
2. सूचना प्रौद्योगिकी:- मैकमिलन डिक्शनरी ऑफ़ इनफ़ोर्मेशन टेक्नोलॉजी में सूचना प्रौद्योगिकी को परिभाषित करते हुए यह विचार व्यक्त किया गया है कि कंप्यूटिंग और दूरसंचार के संमिश्रण पर आधारित माईक्रो-इलेक्ट्रॉनिक्स द्वारा मौखिक, चित्रात्मक, मूलपाठ विषयक और संख्या संबंधी सूचना का अर्जन, संसाधन (प्रोसेसिंग), भंडारण और प्रसार है।
3. ग्रामीण पुनर्निर्माण:-ग्रामीण पुनर्निर्माण से आशय यह है कि ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त पुरानी असमानताओं को समाप्त करके पुनः वक्त एवं समय की मांग के अनुरूप ग्रामीण विकास किया जाना ।

18.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. ग्रामीण विकास से क्या समझते हैं ?
2. ग्रामीण पुनर्निर्माण की अवधारणा की व्याख्या कीजिये ?
3. ग्रामीण पुनर्निर्माण में सूचना प्रौद्योगिकी की महत्ता पर प्रकाश डालिए ?
4. ग्रामीण विकास के उपागमों की व्याख्या कीजिये ?
5. ग्रामीण पुनर्निर्माण में आ रही बाधाओं का वर्णन कीजिये ।

18.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Deaton, A. and Dreze, J. (2002) "Poverty and Inequality in India", Economic and Political Weekly, September 7, 3729-48
- Dreze, Jean and Sen, Amartya (2002) India : Development and Participation, New Delhi: Oxford University Press.
- Desai, Vasant (1988) Rural development : Experiment in Rural Development, Bombay : Himalaya Publishing House.
- Harris, John (1986) Rural Development : Theories of Peasant Economy and Agrarian Change, Hutchinson, ELBS.

18.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful/Helpful Text)

- Kothari, Rajani (1974) India and the Alternative framework for Rural Development, Development Dialogue, Uppasala: DHF.
- Mohanty, Siba Sankar (2007) "Rural Indebtedness in India: An Obstacle for Development, Counter Currents, Org. 13 July, 2007.

इकाई 19 सामुदायिक विकास कार्यक्रम (Community Development Programmes)

- 19.1 प्रस्तावना (Introduction)
- 19.2 उद्देश्य (Objectives)
- 19.3 सामुदायिक विकास योजना का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Community Development Plan)
- 19.4 सामुदायिक विकास योजना के उद्देश्य (Objectives of Community Development Plan)
- 19.5 सामुदायिक विकास योजनाओं का वर्तमान स्वरूप (Current Form of Community Development Schemes)
- 19.6 बोध प्रश्न-01
- 19.7 ग्रामीण पुनर्निर्माण में सामुदायिक विकास की भूमिका (Role of Community Development in Rural Reconstruction)
- 19.8 सामुदायिक विकास कार्यक्रम एवं ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन (Community Development Programs and Changes in Rural Social Structure)
- 19.9 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Integrated Rural Development Program)
 - 19.9.1 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का महत्व (Importance of Integrated Rural Development Program)
 - 19.9.2 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के मार्ग में बाधाएँ (Obstacles in the Path of Integrated Rural Development Programs)
- 19.10 भारत में सामुदायिक विकास के विभिन्न कार्यक्रम (Various Community Development Programs in India)
- 19.11 बोध प्रश्न-02
- 19.12 सारांश (Summary)
- 19.13 शब्दावली (Glossary)
- 19.14 अभ्यास प्रश्न (Practise Questions)
- 19.15 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practise Questions)
- 19.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)
- 19.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
- 19.18 सहायक/उपयोगी ग्रन्थ (Helpful/Useful Text)

19.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामुदायिक विकास वह प्रक्रिया है जिसमें स्थानीय जनता का प्रयास सरकारी संगठन से मिलकर अपनी आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में उन्नति लाये और इन समुदायों को राष्ट्रीय जीवन के साथ जोड़ा जाये, ताकि वे समग्र विकास में योगदान दे सकें। भारत जैसे विशाल देश के चहुँमुखी विकास के लिये ग्रामीण विकास पर ध्यान केन्द्रित करना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि हमारे देश की लगभग दो-तिहाई जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। जब तक ग्रामीण समाज को उन्नति के पथ पर अग्रसर नहीं किया जायेगा, उनकी स्थिति में सुधार नहीं किया जायेगा और ग्रामीण समाज को समन्वित और सतत विकास की प्रक्रिया से नहीं जोड़ा जायेगा, जब तक देश में समग्र व समावेशी विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसी बात को दृष्टिगत रखते हुये ही, स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से विकास कार्यक्रमों व पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास को महत्व प्रदान किया गया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि भारतीय ग्रामीण समाज में स्वतंत्रता के पश्चात से अनेक विकासवादी परिवर्तन आये हैं, फिर भी कुछ दिक्कतें अभी भी विद्यमान हैं। प्रस्तुत इकाई के माध्यम से ग्रामीण भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की कार्यप्रणाली व उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है।

19.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान सकेंगे कि-

-सामुदायिक विकास कार्यक्रम से क्या अभिप्राय है ?

- ✓ -सामुदायिक विकास योजनाओं के क्या उद्देश्य हैं ?
- ✓ -सामुदायिक विकास योजनाओं का वर्तमान स्वरूप कैसा है ?
- ✓ -ग्रामीण पुनर्निर्माण में इन कार्यक्रमों की भूमिका कितनी प्रभावी है ?
- ✓ -इन कार्यक्रमों से ग्रामीण सामाजिक संरचना में कौन-कौन से परिवर्तन आये हैं ?
- ✓ -समन्वित ग्रामीण विकास की अवधारणा क्या है ?
- ✓ -भारत में चल रहे सामुदायिक ग्रामीण विकास कार्यक्रम कौन से हैं ?

सामुदायिक विकास कार्यक्रम:

वर्तमान समय में सामुदायिक विकास का संबंध ग्रामीण विकास से जोड़ा गया है। इसका उद्देश्य गांवों में जीवन-निर्वाह की मुख्य दशाओं में सुधार करना है। सामुदायिक संगठन तथा विकास का तात्पर्य भी यही है कि समाज की स्थानीय क्रियाओं द्वारा प्रगति हो। इसी को दूसरे देशों में कई नामों से जाना जाता है, जैसे- ग्रामीण पुनर्निर्माण, ग्रामोद्योग, जन शिक्षा तथा सामुदायिक संगठन या सामुदायिक विकास। भारत में प्रथम योजना के प्रारम्भ में इसे 'ग्रामीण पुनर्निर्माण' या 'ग्रामोद्धार' का नाम दिया गया था।

2 अक्टूबर, सन 1952 में 'सामुदायिक विकास और विस्तार सेवा कार्यक्रम' का प्रारम्भ हुआ। इस योजना को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सहायता से भारत में लागू किया गया। देश में 55 सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया गया। इसी समय 'अन्न उपजाओ जांच समिति' ने गांव के सर्वांगीण विकास के लिये एक ऐसे राष्ट्रीय विस्तार संगठन की स्थापना की सिफारिश की जो घर-घर पहुंच सके और ग्रामीण विकास कार्य में उन्हें सहभागी बना सके। इस प्रकार की सिफारिशों से जहां सामुदायिक विकास योजना को विकसित होने में सहायता मिली, वहीं राष्ट्रीय विस्तार सेवाखण्ड की भी स्थापना की गयी। इस प्रकार सामुदायिक विकास कार्यक्रम दो भागों में विभाजित हो गया-

(1) सामुदायिक विकास योजना। तथा

(2) राष्ट्रीय विस्तार सेवा।

सामुदायिक विकास योजना अथवा ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर चर्चा करने से पहले हमें सामुदायिक विकास का अर्थ और उसके उद्देश्यों को समझना होगा।

19.3 सामुदायिक विकास योजना का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Community Development Plan)

सामुदायिक विकास योजना का सामान्य अर्थ किसी समुदाय का विकास करना है। इस विकास के अन्तर्गत मूलतः आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक पक्ष स्वतः आ जाते हैं। दूसरे शब्दों में, समुदाय की प्रगति इस प्रकार से की जाये कि उसका सर्वांगीण विकास हो सके। सामुदायिक विकास योजना को अनेक विद्वानों ने परिभाषित करने का प्रयास किया है-

ए. आर. देसाई के अनुसार, 'सामुदायिक विकास योजना वह पद्धति है जिसके द्वारा पंचवर्षीय योजना गांव के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन का स्थानान्तरण करने की एक प्रक्रिया प्रारम्भ करना चाहती है।'

कारल सी. टेलर के अनुसार, 'सामुदायिक योजना वह प्रणाली है, जिसके द्वारा व्यक्ति, जो स्थानीय गांवों में रहते हैं, अपनी आर्थिक एवं सामाजिक दशाओं को उन्नत करने में सहायता देने के लिये प्रवृत्त होते हैं तथा भौतिक उन्नति के विकास में प्रभावशाली कार्यकारी समूह बनाते हैं।'

योजना आयोग कहता है, 'यह स्वयं ग्रामवासियों द्वारा आयोजित तथा कार्यान्वित किया हुआ एक अनुदान प्राप्त आत्मनिर्भर कार्यक्रम है, सरकार तो केवल टैकनिकल मार्गदर्शन और आर्थिक सहायता प्रदान करती है।'

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार, 'सामुदायिक विकास योजना एक प्रक्रिया है जो संपूर्ण समुदाय के लिए, उसके पूर्ण सहयोग के लिये, आर्थिक और सामाजिक विकास की परिस्थितियों को उत्पन्न करती है और जो पूर्ण रूप से समुदाय की प्रेरणा पर निर्भर करती है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है सामुदायिक विकास एक समन्वित प्रणाली है जिसके द्वारा ग्रामीण जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयत्न किया जाता है। इस योजना का आधार जन-सहभाग तथा स्थानीय साधन हैं। एक समन्वित कार्यक्रम के रूप में इस योजना में जहां एक ओर शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य, कुटीर उद्योगों के विकास, कृषि, संचार तथा समाज सुधार पर बल दिया जाता है, वहीं यह ग्रामीणों के विचारों, दृष्टिकोण तथा रुचियों में भी इस तरह परिवर्तन लाने का प्रयत्न करती है, जिससे ग्रामीण अपना विकास स्वयं करने के योग्य बन सकें। इस दृष्टिकोण से सामुदायिक विकास योजना को सामाजिक-आर्थिक पुनर्निर्माण तथा आत्म-निर्भरता में वृद्धि करने वाली एक ऐसी पद्धति कहा जा सकता है जिसमें सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं का समावेश है।

19.4 सामुदायिक विकास योजना के उद्देश्य (Objectives of Community Development Plan)

सामुदायिक विकास योजना के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

(1) ग्रामीण समुदाय का सर्वांगीण विकास करना।

(2) ग्रामीण व्यक्ति में सामुदायिक भावना का प्रचार व प्रसार करना।

(3) ग्रामीण व्यक्तियों में उत्तरदायित्व की भावना, आत्म-ज्ञान और स्थानीय समूहों में कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास करना।

- (4) स्थानीय संस्थाओं को उत्साहित करना जिससे वे ग्रामीण पुनर्निर्माण के कार्य में सहायता कर सकें।
- (5) उत्पादन की पद्धतियों का विकास करना।
- (6) आवागमन एवं सन्देश वाहन के साधनों में वृद्धि करना।
- (7) शिक्षा का पर्याप्त प्रसार व प्रचार करना।
- (8) ग्रामीण स्वास्थ्य तथा स्वच्छता का ध्यान रखना।
- (9) ग्रामीण व्यक्तियों को आत्मनिर्भर व प्रगतिशील होने की प्रेरणा देना।
- (10) कृषि कार्यों में आधुनिक एवं वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोग पर बल देना और उसके महत्व को समझना।
- (11) कुटीर उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहित करना।
- (12) रोजगार के नये अवसर खोजना।
- (13) सहकारिता का प्रचार व प्रसार करना।
- (14) सामुदायिक विकास कार्यक्रम को सफल बनाने का प्रयास करना।
- (15) स्त्रियों की दशा में सुधार करना।

इस प्रकार सामुदायिक विकास योजना का उद्देश्य सम्पूर्ण ग्रामीण जीवन का सर्वांगीण विकास करना तथा ग्रामीण समुदाय की प्रगति एवं श्रेष्ठतम जीवन-स्तर के लिए पथप्रदर्शन करना है।

19.5 सामुदायिक विकास योजनाओं का वर्तमान स्वरूप (Current Form of Community Development Schemes)

सामुदायिक विकास योजना में कार्य करने की इकाई को खण्ड ; ठसवबाद्ध कहते हैं। प्रत्येक खण्ड में लगभग 100 गांव होते हैं जिनकी जनसंख्या 60-70 हजार होती है। खण्ड का एक मुख्य अधिकारी होता है तथा सामान्यतः उसके अधीन 8 प्रसार अधिकारी होते हैं और विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिये 10 ग्राम-सेवक होते हैं। इसके साथ ही साथ महिला व बाल्य-कार्यों की देखरेख के लिये दो ग्राम-सेविकायें भी होती हैं। एक ग्राम-सेवक के अधीन छह-सात हजार की आबादी आती है। इकाई खण्ड के समस्त अधिकारी तथा सेवकों का मुख्य उद्देश्य सामुदायिक जीवन का पुनर्निर्माण करना है।

सामुदायिक विकास खण्डों के संगठन निम्नलिखित होते हैं-

(1) केन्द्रीय स्तर पर-केन्द्रीय स्तर पर समस्त कार्यक्रम खाद्यान्न व कृषि तथा सामुदायिक विकास और सहकारिता के मंत्रालय के अधीन होता है। यह मंत्रालय सामुदायिक विकास कार्यक्रम की नीतियों को निर्धारित करता है। वैसे आधारभूत नीति को प्रतिपादित करने का दायित्व केन्द्रीय समिति पर होता है। इसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं। इस समिति का गठन योजना आयोग (वर्तमान में निति आयोग) के सदस्यों तथा खाद्य व कृषि और सामुदायिक विकास तथा सहकारी मंत्रियों को लेकर होता है।

(2) राज्य स्तर पर-राज्य स्तर पर एक 'राज्य विकास समिति' होती है जिसका अध्यक्ष मुख्यमंत्री होता है। विभिन्न विभागों से सम्बन्धित मंत्री इसके सामान्य सदस्य होते हैं। विकास आयुक्त इसका मंत्री होता है। जिला स्तर पर विकास कार्यक्रमों को संचालित करने का उत्तरदायित्व जिला-परिषद पर होता है। इसके सदस्य समस्त खण्ड पंचायत समितियों के प्रधान तथा राज्य विधान-सभा तथा लोकसभा के सदस्य होते हैं।

(3) खण्ड स्तर पर-खण्ड स्तर पर सामुदायिक विकास योजनाओं के कार्यों को संचालित करने का दायित्व खंड पंचायत समितियों पर है। समिति के सदस्य निर्वाचित सरपंच तथा कुछ स्त्रियां और अनुसूचित

जातियों के कुछ प्रतिनिधि होते हैं। इन्हें मनोनीत किया जाता है। इसमें एक खण्ड विकास अधिकारी व अधीनस्थ कर्मचारी होते हैं जो कृषि, शिक्षा, सहकारिता, सिंचाई आदि के कार्य के विशेषज्ञ होते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ युवक क्लब, किसान, स्वयं-सेवी संस्थायें, महिला मण्डल आदि पंचायत कार्यों में सहयोग देते हैं।

सामुदायिक विकास योजना के संगठन के विभिन्न स्तरों को निम्नलिखित ढंग से दर्शाया जा सकता है-
सामुदायिक विकास में प्रशासनिक स्थिति
कार्यकारी अधिकारी

स्तर	प्रशासनिक प्रधान तथा सम्बद्ध कर्मचारी	प्रशासन में सहायक सलाहकार संस्था
1- केन्द्र-	सामुदायिक विकास का मंत्रालय	केन्द्रीय सलाहकार समिति
2- राज्य-	राज्य विकास आयुक्त	राज्य विकास समिति
3- जिला-	जिला विकास अधिकारी	जिला विकास अधिकारी
4- प्रायोजना-	प्रायोजना अधिकारी	प्रायोजनासलाहकार समिति
5- खण्ड-	उप प्रायोजना अधिकारी	खण्ड सलाहकार समिति

जिला विकास या योजना अधिकारी (जिला स्तर)

समन्वय अधिकारी

उनके अधीन कार्यकर्ता

- | | |
|-----------------------------|-----------------------------------|
| 1. जिला सूचना अधिकारी | 1. जिला कृषि अधिकारी |
| 2. जिला स्वास्थ्य अधिकारी | 2. जिला सहकारिता अधिकारी |
| 3. अधिशासी अभियंता (सिंचाई) | 3. जिला पशु अधिकारी |
| 4. जिला गन्ना अधिकारी | 4. सहायक पंचायत अधिकारी |
| 5. जिला वन अधिकारी | 5. जिला प्रान्तीय रक्षादल अधिकारी |
| 6. जिला विद्यालय निरीक्षक | 6. जिला महिला कल्याण अधिकारी |
| 7. जिला उद्योग अधिकारी | 7. हरिजन कल्याण अधिकारी |

प्रायोजना अधिकारी और उनके अधीनस्थ प्रायोजना स्तर

- उप विकास अधिकारी (कृषि)
- उप विकास अधिकारी (ग्राम सहयोग)
- उप विकास अधिकारी (कृषि अभियंत्रण तथा सिंचाई)
- उप विकास अधिकारी (शिक्षा एवं प्रशिक्षण)

19.6 बोध प्रश्न-01

- सामुदायिक विकास योजना का अर्थ समझाइये।
- सामुदायिक विकास योजना के उद्देश्य कौन-कौन से हैं ?

सामुदायिक विकास योजना के प्रशासकीय स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

19.7 ग्रामीण पुनर्निर्माण में सामुदायिक विकास की भूमिका (Role of Community Development in Rural Reconstruction)

सामुदायिक विकास योजना के माध्यम से ग्रामीण आर्थिक-सामाजिक जीवन को परिवर्तित करने में काफी सहायता मिली है। इस दृष्टि से सामुदायिक विकास योजना की भूमिका को निम्नलिखित तथ्यों से जाना जा सकता है-

(1) खण्ड स्तर के अधिकारी तथा ग्राम सेवक किसानों को कृषि सम्बन्धी जानकारी व प्रशिक्षण देते हैं।

(2) कृषि व्यवसाय में कैसे प्रगति करें इसके उपाय बताते हैं, जैसे अच्छे बीज, खाद, वैज्ञानिक उपकरण आदि का प्रयोग करना। अच्छी फसल कैसे उत्पन्न करें और कैसे फसल की कीटाणुओं से रक्षा करें, इसके भी तरीके बताये जाते हैं।

(3) व्यर्थ में पड़ी भूमि का प्रयोग, प्रशिक्षण, साग-सब्जी को अधिक से अधिक कैसे उगाया जाए, इसके उपाय बताना।

(4) इन योजनाओं ने बंजर-भूमि को उपयोगी बनाया है। इससे कृषक को आर्थिक लाभ हुआ है और उत्पादन में वृद्धि भी हुई है। भूमिहीन श्रमिकों को कार्य मिला है। ग्रामीण जनता के रहन सहन का स्तर भी सुधरा है।

(5) कुटीर उद्योग धन्धों के विकास ने सराहनीय कार्य किया है।

(6) इस योजना के माध्यम से स्वास्थ्य और स्वच्छता की जानकारी भी ग्रामीणों को दी जाती है।

(7) शिक्षा का प्रचार व प्रसार किया जाता है, जैसे-रात्रि पाठशालाओं को चलाना, पुस्तकालय और वाचनालय की स्थापना करना। युवक-मण्डल और कृषक-संघों की स्थापना करना, विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण केन्द्रों और शिविरों की स्थापना करना।

(8) इन योजनाओं से ग्रामीण यातायात और संचार के साधनों में प्रगति हुई है।

(9) इसने पंचायत सहायक समिति को सुचारू रूप से कार्यान्वित किया है।

(10) यह योजनाएं, हरिजन, अनुसूचित जातियां, पिछड़े वर्ग तथा निर्धन स्त्रियों के कल्याण के लिए काफी महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत कर रही हैं।

(11) इसके अतिरिक्त ये गांव में मनोरंजन का भी प्रबन्ध करती हैं, जैसे-प्रदर्शनी और चलचित्रों, मेले और हाट की व्यवस्था करना।

उपर्युक्त तथ्यों से यह ज्ञात होता है कि सामुदायिक विकास योजनाओं का ग्रामीण पुनर्निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान है। इस योजना के माध्यम से गांव के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिमान में काफी परिवर्तन हुए हैं। कृषक वैज्ञानिक खेती से परिचित हुआ है। उत्पादन में वृद्धि हुई है। इनके रहन-सहन के स्तर में भी परिवर्तन आया है। इन्होंने अन्धविश्वास और रूढ़ियों को तोड़ने का प्रयास किया है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम ग्रामीण पुनर्निर्माण में एक विशिष्ट स्थान रखता है।

19.8 सामुदायिक विकास कार्यक्रम एवं ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन (Community Development Programs and Changes in Rural Social Structure)

समुदायिक विकास कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप ग्रामीण भारत में अनेक परिवर्तन हुए हैं। परिवर्तन की अनेक प्रक्रियाओं ने भी ग्रामीण सामाजिक संरचना को परिवर्तित करने में सहायता प्रदान की है। भारतीय गांवों में परिवर्तनशील परिदृश्य का विश्लेषण निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है-

(1) परिवार एवं बन्धुत्व व्यवस्था में परिवर्तन-ग्रामीण रोजगार के नए अवसरों और ग्रामीण युवकों के नगरों की ओर प्रवास से परिवारों की संरचना पर प्रभाव पड़ा है। संयुक्त परिवार का यह परम्परागत रूप (जहां कई पीढ़ियां एक परिवार प्रमुख के शासन में, सामान्य सम्पत्ति, एक ही निवास स्थान और एक ही रसोई के आधार पर जीवन यापन करते हैं), बदल रहा है। इसके स्थान पर एकाकी परिवारों का उदय हो रहा है।

जहां तक बन्धुत्व सम्बन्धों का प्रश्न है, इनका सांस्कारिक स्वरूप ढीला हुआ है। ये सम्बन्ध लचीले हुए हैं। लेन-देन की प्रथा में भी ढिलाई आई है, परन्तु विभिन्न स्वार्थों की पूर्ति के लिए बन्धुत्व व्यवस्था भारतीय गांवों में एक सामाजिक ताने बाने के रूप में अधिक क्रियाशील हो उठी है। उदाहरणार्थ, इन सम्बन्धों को नौकरी पाने, पदोन्नति या किसी सरकारी कार्यालय में कोई काम करवाने या चुनाव में जीतने के लिए प्रयोग किया जाने लगा है।

(2) जाति संरचना में परिवर्तन-नियोजित कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप और विशेषतः अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं कमजोर वर्गों के लिए चलाये गये कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप जाति व्यवस्था में गहरे परिवर्तन हुए हैं। निम्न जातियों में जाति चेतना का उदय हो रहा है। मध्यम श्रेणी की जातियां राजनीतिक दृष्टि से अधिक सक्रिय हो उठी हैं। उच्च जातियों का परम्परागत प्रभुत्व कम होने लगा है और उनकी प्रभुता को मध्यम श्रेणी की जातियों से चुनौती मिल रही है। क्षेत्रीय आधार पर प्रभु जाति की अवधारणा क्रियाशील होती दिखाई देती है अर्थात् वह जाति प्रभुता ग्रहण करने लगती है जो क्षेत्र विशेष में संख्या के आधार पर या आर्थिक व राजनीतिक सत्ता के आधार पर शक्तिशाली हो। एम0 एन0 श्रीनिवास के अध्ययन से पता चलता है कि चुनाव के समय वह जाति संगठन वोट बैंक के रूप में सक्रिय हो जाते हैं।

(3) नए वर्गों का उदय-परम्परागत दृष्टि से भारतीय गांव में भूस्वामियों, व्यापारियों, कृषकों एवं भूमिविहीन कृषि मजदूरों के वर्ग थे। परन्तु इनके बीच सम्बन्ध मालिक और आसामी सम्बन्ध प्रतिमान के आधार पर थे। भूमि सुधार कानूनों व विकास के अन्य कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप कुछ नए हित समूहों का उदय हो रहा है जो वर्ग चेतना के आधार पर क्रियाशील हैं, जैसे-गांव में युवा सभाएं, स्त्री सभाएं, कृषक संघ, मजदूर संघ आदि।

(4) शक्ति व सत्ता की संरचना में परिवर्तन-परम्परागत रूप से भारतीय ग्रामों में शक्ति और संरचना एक बन्द व्यवस्था का रूप प्रकट करती है जहां शक्ति पद क्रम सोपान में एक क्रम से दूसरे क्रम में गतिशीलता करना प्रायः असम्भव ही है। इसके अतिरिक्त प्रस्थिति संयोजन की स्थिति भी दिखाई देती है अर्थात् उच्च जाति ही उच्च वर्ग है और वही शक्ति के सर्वोच्च पद भी ग्रहण किए हुए है। परन्तु पंचायती राज के लागू किये जाने से, सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार मिलने से तथा विकास के अन्य कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप यह परम्परागत शक्ति संरचना टूटने लगी है।

(5) कृषि विविधीकरण पर सरकार का जोर-उन्नत बीज, उन्नत खाद और सिंचाई के उपलब्ध नए साधनों ने भारतीय ग्रामों में हरित क्रान्ति का श्रीगणेश किया है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु इस दिशा में अग्रणी हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग किया जाना और नकद फसल बोने का प्रयास ही ग्रामीण कृषि व्यवस्था को मजबूत बना सकते हैं। हरित क्रान्ति से किसानों की हालत में सुधार हुआ है। फसलों के विविधीकरण से जिसमें फूलों की खेती, डेयरी, मुर्गीपालन, मत्स्य पालन, दलहन और तिलहन प्रमुख हैं, किसानों को अपने उत्पाद पर अच्छी कमाई के अवसर मिलने लगे हैं। फलस्वरूप उनकी

आकांक्षाएं जागी हैं और वे समाज के प्रतिष्ठा शक्ति व समृद्धि के पदों में अपना हिस्सा पाने के लिए आवाज उठाने लगे हैं। परिणामतः परम्परागत सामाजिक संरचना में तनाव, दरार व टूटन की स्थिति पैदा होने लगी है।

(6) आदर्शों एवं मूल्यों में परिवर्तन-ग्रामीण संस्कृति भी परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। भारतीय ग्रामों में जहां नियोजन के परिणामस्वरूप कुछ समृद्धि आई है, हरित क्रान्ति घटित हुई है। वहां भौतिक सुख-सुविधाओं का महत्व बढ़ गया है। नगरों की सभी सुविधाएँ, जैसे- शिक्षा, यातायात, संचार माध्यम, उपभोग की ब्राण्डेड वस्तुएँ तथा मनोरंजक साधन अपनाने में ग्रामवासी पीछे नहीं रहना चाहते। फलस्वरूप गांव का आम आदमी पहले जैसा गांव का गंवार नहीं है। वह अपने हित साधन में चतुर और गुटबाजी में कुशल व्यक्ति बनता जा रहा है।

19.9 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Integrated Rural Development Program)

कार्यक्रम का अर्थ-सरकार सामुदायिक ग्रामीण विकास के लिए अनेक कार्यक्रम गांवों में चला रही है। सभी कार्यक्रमों का यह उद्देश्य है कि ग्रामीण समाज के सामाजिक-आर्थिक ढांचे को समय की आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जाये। इस दृष्टि से सभी ग्रामीण-कार्यक्रमों एवं योजनाओं का अपना महत्व है और सभी ने विकास कार्यों में अहम भूमिका अभिनीत की है। चाहे वह सामुदायिक विकास योजना, सहकारी समितियाँ, सर्वोदयी कार्यक्रम, पंचायत या भूदान आन्दोलन हो। ये सभी कार्यक्रम ग्रामीण समाज की बहुआयामी समस्याओं के समाधान हेतु कार्यरत हैं।

सामुदायिक ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की कड़ी में 'समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम' एक ऐसा कार्यक्रम है जो ग्रामीण समाज के अछूते प्राकृतिक सम्पदा तथा मानवशक्ति का उपयोग ग्रामीण विकास के लिये करता है। वास्तव में इन कार्यक्रमों ने उन समस्त कार्यक्रमों को अपने में समाहित कर लिया है जो व्यवस्थित ढंग से विकास कार्य में कार्यरत नहीं थे। इस कार्यक्रम का अर्थ ग्रामीण क्षेत्रों में निर्दिष्ट गरीब परिवारों की पर्याप्त सहायता करना और उनकी आय को इस सीमा तक बढ़ाना है कि वे सदैव के लिए गरीबी रेखा से ऊपर हो सकें।

कार्यक्रम संबंधी नीति-समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व राज्य सरकारों पर है। प्रत्यक्ष रूप से केन्द्र सरकार का कार्य राज्यों को दिशा निर्देशन करना, नीति-निर्धारण करना, कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करना, उनके मध्य सामंजस्य स्थापित करना, तकनीकी सहायता, प्रशिक्षण एवं शोध संबंधी कार्यों में सहायता करना और महत्वपूर्ण कार्यों में वित्तीय सहायता करना है।

कार्यक्रम का आरम्भ-समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की संकल्पना का प्रस्ताव सर्वप्रथम 1976-77 के केन्द्रीय बजट में रखा गया और इसे कुछ सीमा तक लागू किया गया। 2 अक्टूबर 1980 से यह कार्यक्रम देश के समस्त विकास खण्डों में लागू किया गया। ग्रामीण निर्धनों को सीधे लाभ पहुंचाने वाली यह देश की पहली और सबसे विशाल योजना है।

कार्यक्रम का उद्देश्य-वास्तव में एकीकृत या समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य यह है कि विकास का लाभ उन वर्गों को प्राप्त हो सके जो शताब्दियों से आर्थिक अभाव में जीवन यापन कर रहे हैं और दरिद्रता के अभिशाप से ग्रसित हैं। इस योजना का उद्देश्य क्षेत्रीय आर्थिक असमानता को दूर करना है। इसी के साथ ही ग्रामीण गरीबी और भुखमरी को समाप्त करना है। इस कार्यक्रम में कृषि, डेरी-व्यवस्था, मछली व्यवसाय, खादी, ग्रामीण लघु उद्योग, दस्तकारी, शिल्पकारी, लघु व्यवसाय और नौकरियां आती हैं।

गरीब परिवारों के आर्थिक स्तर को उठाने के लिए भारत सरकार ने ठोस कदम उठाये हैं। जिन परिवारों की 4,800 रु० (अब 6,400रु०) से कम वार्षिक आय है, उन्हें सरकार विभिन्न प्रकार की सहायता देती है। इस प्रकार के परिवारों में से एक व्यक्ति को नौकरी के अवसर प्रदान करती है। उन्हें आर्थिक सहायता

देकर अपना कार्य करने की प्रेरणा देती है। लगभग 35 करोड़ से अधिक व्यक्ति इस देश में गरीबी रेखा के नीचे रहते हैं। इसमें से भी 30 करोड़ व्यक्ति ग्रामीण समाज में रहते हैं। इस योजना में परिवार को एक इकाई के रूप में लिया जाता है। इस कार्यक्रम को 20 सूत्रीय कार्यक्रम के तहत प्राथमिकता दी गई है।

इस योजना में कुछ और कार्यक्रम भी सम्मिलित कर लिये गये हैं, जैसे-

- (1) ग्रामीण युवकों को स्व रोजगार के प्रशिक्षण
- (2) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना
- (3) ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं और बच्चों का विकास
- (4) ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों को रोजगार देने की गारन्टी
- (5) काम के बदले अनाज का कार्यक्रम
- (6) कुशलता विकास कार्यक्रम

यह कार्यक्रम जिला ग्राम विकास एजेंसी ;क्त्वाद्ध द्वारा कार्यान्वित किया जाता है। राज्य स्तर पर राज्य के मुख्य सचिव की अध्यक्षता में एक समन्वय समिति इसके सभी पहलुओं की समीक्षा करती है। इसके मार्गदर्शन के लिए एक प्रबन्ध समिति होती है जिसमें जनता के प्रतिनिधि (जैसे सांसद, विधानसभा और जिला परिषद के सदस्य, जिला विकास विभागों, विकास बैंकों और अग्रणी बैंकों के अध्यक्ष, तथा स्त्रियों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधि) शामिल होते हैं। केन्द्रीय स्तर पर ग्राम विकास विभाग इस कार्यक्रम के मार्गदर्शन, नीति-निर्धारण और नियंत्रण के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार है।

19.9.1 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का महत्व (Importance of Integrated Rural Development Program)

निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर इसके महत्व को जाना जा सकता है-

- (1) ग्रामीण निर्धन व्यक्तियों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने का संकल्प।
- (2) यह कार्यक्रम ग्रामीण समाज की बेकारी व अर्ध बेकारी को दूर करने की सबसे विशाल योजना है।
- (3) इस योजना का महत्व इसलिए भी अधिक है कि यदि सम्पूर्ण ग्रामीण समाज को विकास और प्रगति के मार्ग पर लाना चाहती है जिससे गांव के निर्धन व्यक्तियों को अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो सके।
- (4) इस कार्यक्रम का महत्व इससे भी ज्ञात होता है कि शताब्दियों से शोषित अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए सरकार कार्य करती है। उन्हें लाभान्वित करने का प्रयास करती है।
- (5) गांव के निर्धन वर्ग के जीवन-स्तर को ऊँचा करने के लिए यथासम्भव प्रयास करती है जिससे विभिन्न वर्गों के मध्य जो आर्थिक-सामाजिक विषमताएं हैं, वे समाप्त हो सकें।
- (6) सीमान्त किसानों, कृषि श्रमिकों, ग्रामीण कारीगरों तथा अन्य व्यक्तियों को आर्थिक सहायता प्रदान करती है जिससे वे स्वावलम्बी बन सकें।
- (7) बेरोजगार ग्रामीण व्यक्तियों को प्रेरित करके उन्हें कामकाजी बनाने हेतु प्रयास करती है। उन्हें विभिन्न कार्यों में प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे वे अपनी जीविका अर्जित कर सकें।

- (8) कृषक के पास जब किसी भी प्रकार का काम नहीं रहता है तो उन्हें काम दिया जाता है और पारिश्रमिक के स्थान पर अनाज दिया जाता है अर्थात् काम के बदले अनाज दिया जाता है जिससे कि इनकी रोजी रोटी चल सके।
- (9) कुटीर उद्योग-धन्धों को आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था है।
- (10) ग्रामीण व्यक्तियों को अन्धविश्वासों और रूढ़ियों के घेरे से निकालकर उन्हें आधुनिक बनाने का प्रयास किया जाता है। इन्हें वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।
- (11) गांव के व्यक्तियों को विभिन्न कार्यों में प्रशिक्षण देकर उन्हें स्वरोजगार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।
- (12) कृषि संबंधी अनेक कार्यों की जहां जानकारी दी जाती है वहीं इसकी सहभागी रूप में सदस्यता भी दी जाती है।
- (13) इस कार्यक्रम के महत्व को इससे भी आंका जा सकता है कि ग्रामीणों को इस प्रकार से प्रोत्साहित और प्रशिक्षित किया जाता है कि वे विभिन्न विकास कार्यक्रमों में स्वतः भागीदार बनें और गांव के सर्वांगीण विकास के प्रहरी बने।
- (14) यह कार्यक्रम पशुपालन, मत्स्य पालन, डेयरी, दस्तकारी, वानिकी आदि कार्यों में भी सहायता करता है।
- (15) उत्पादन में वृद्धि करने की दृष्टि से किसानों को सहकारी अनुदान तथा बैंक ऋण की भी व्यवस्था की गई है। इस सहायता और अनुदान से कृषक अच्छी खाद बीज तथा मशीन के अनेक उपकरणों को क्रय करता है।

19.9.2 समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के मार्ग में बाधाएँ (Obstacles in the Path of Integrated Rural Development Programs)

अन्य विकास कार्यक्रमों की तरह समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के मार्ग में भी अनेक बाधाएँ आई हैं, जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं-

- (1) परिवारों के चयन में कठिनाई-निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों का चयन करना एक कठिन कार्य है। इसमें पक्षपात के कारण वास्तव में निर्धन व्यक्तियों को इनका कई बार लाभ नहीं मिल पाता है।
- (2) कार्यक्रम के प्रति जानकारी का अभाव-जिन लोगों के लिए कार्यक्रम चलाया गया है उन्हें इसकी जानकारी ही नहीं है। जानकारी के अभाव में वे इसका पूरा लाभ नहीं उठा पाते हैं।
- (3) शिक्षा का अभाव-शिक्षा के अभाव के कारण ग्रामीण लोग इन कार्यक्रमों को ठीक प्रकार से नहीं समझते हैं। इसलिये वे इसमें विशेष सहयोग भी नहीं दे पाते हैं।
- (4) सरकारी सहायता का दुरुपयोग-सार्वजनिक जीवन में फैले हुये भ्रष्टाचार के कारण सरकारी सहायता का दुरुपयोग होता है। एक तो सहायता ही बहुत कम मिलती है और दूसरे भ्रष्टाचार के कारण लाभार्थियों को काफी खर्चा करके सुविधाएं प्राप्त होती हैं।
- (5) व्यवसाय सम्बन्धी व्यावसायिक ज्ञान का अभाव-लाभार्थियों में व्यवसाय सम्बन्धी ज्ञान नहीं होता। उनमें व्यावहारिक ज्ञान का भी अभाव पाया जाता है। इसके कारण वे ऋण लेने के बावजूद अपने पैरों पर खड़े नहीं हो पाते। अतः वे सुविधाओं का पर्याप्त लाभ नहीं उठा पाते।

(6) अल्प-कालीन सरकारें-राज्यों में अल्प-कालीन सरकार होने के कारण भी विकास कार्य व्यवस्थित रूप से न तो कार्यान्वित हो पाते हैं और न ही सरकारें इनमें रूचि लेती हैं। सरकार का सारा समय अपनी सत्ता को बचाने में ही व्यतीत हो जाता है।

(7) मूल्यांकन का अभाव-सामान्यतः बड़े अधिकारी गांव के किसी एक स्थान पर बैठकर सम्पूर्ण कार्यक्रम का मूल्यांकन करते हैं। इससे वास्तविक प्रगति की जानकारी नहीं हो पाती।

(8) निष्ठा का अभाव- ग्रामीण समाज का विकास व उन्नति इस बात पर बहुत कुछ निर्भर है कि देश के निवासियों की निष्ठा व भावना कैसी है। देश और ग्रामीण समाज का विकास सामूहिक निष्ठा भावना पर आधारित है।

19.10 भारत में सामुदायिक विकास के विभिन्न कार्यक्रम (Various Community Development Programs in India)

राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में ग्रामीण विकास को महत्व प्रदान करने की दृष्टि से हाल के वर्षों में सुधार के कदम उठाए गए हैं, ताकि असंतुलन को दूर किया जा सके। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा स्थायी विकास लाने के लिए बड़ी मात्रा में पूंजी लगाई है। सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण गरीब समर्थित नीति में ग्रामीण गरीबों को उनके अपने परिपूर्ण विचार और क्षेत्रीय परिस्थितियों के उनके अनुभवों को लेकर शुद्ध साधन की तरह विकास रणनीति का अभिन्न हिस्सा बनाया गया है। इस प्रक्रिया में समाज के सबसे पिछड़े वर्ग को उच्च प्राथमिकता दी गई है। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास को कायम रखने के लिए ग्रामीण विकास के प्रावधान में भारी मात्रा में वृद्धि की गई है। वर्ष 2001-02 में ग्रामीण विकास के लिए बजट प्रावधान 12,265 करोड़ रुपये का था इसकी तुलना में वर्ष 2002-03 में बजट का प्रावधान 13,650 करोड़ रुपये रखा गया। वर्ष 2003-04 के लिए इसमें वृद्धि करके यह 14,070 करोड़ रुपये कर दिया गया और वर्ष 2004-05 के लिए यह बढ़ाकर 15,998 करोड़ रुपये किया गया। वित्त वर्ष 2005-06 के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय का स्वीकृत परिव्यय 24,480 करोड़ रुपये है।

भारत में ग्रामीण विकास हेतु अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं-

(1) प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना

100 प्रतिशत केन्द्र द्वारा प्रायोजित प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना दिसम्बर, 2000 में प्रारम्भ की गई। इस योजना का उद्देश्य 1,000 से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक गांव को 2003 तक तथा 500 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को दसवीं योजना के अंत तक यानि 2007 तक अच्छी बारहमासी सड़कों से जोड़ना है। पहाड़ी राज्यों की बावत (उत्तर पूर्व सिक्किम, हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर व उत्तराखण्ड) और रेगिस्तानी क्षेत्रों में 250 के लगभग आबादी वाले गांवों को सड़कों से जोड़ने का लक्ष्य है।

मार्च 2004 के अन्त तक 14,377 करोड़ रुपये के अनुमानित खर्च से 35,000 सड़क निर्माण कार्यों को मंजूरी दी जा चुकी है और इनमें से 20,651 सड़कों का निर्माण कार्य पूरा हो चुका है। अन्य निर्माण कार्य विकास के विभिन्न चरणों में हैं। अभी तक कुल मिलाकर 9,882 करोड़ रुपये खर्च हो चुके हैं।

(2) ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम

ग्रामीण निवास स्थानों में पेयजल सुविधाएं राज्य स्कन्ध न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत प्रदान की जाती हैं। केन्द्र द्वारा प्रायोजित त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम के तहत सहायता प्रदान कर केन्द्र सरकार राज्य सरकारों के प्रयासों को बल प्रदान करती है। साथ ही राज्यों को जलापूर्ति योजनाओं के नियोजन तथा क्रियान्वयन के लिए अधिकार दिए गए हैं।

जलापूर्ति क्षेत्र में अब तक 50,000 करोड़ रुपये का निवेश किया जा चुका है। 25 मई 2005 तक विभिन्न राज्यों से मिली सूचना के अनुसार अभी 4,587 ग्रामीण बस्तियों में पेयजल नहीं पहुंचा है जबकि पेयजल सुविधा से अंशतः सम्पन्न ग्रामीण बस्तियों की संख्या 55,470 है। 28 जून, 2005 तक प्राप्त आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2004-05 के दौरान 20,297 वंचित और 47,899 आंशिक रूप से वंचित बस्तियों में पेयजल सुविधा उपलब्ध करा दी गई है। 99 प्रतिशत बस्तियों में पेयजल सुविधा उपलब्ध है। अब यह सुधार कार्यक्रम देशभर में 'स्वजलधारा' के नाम से चलाया जा रहा है।

(3) केन्द्र द्वारा प्रायोजित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम

ग्रामीण स्वच्छता राज्य का विषय होने के कारण ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम राज्य क्षेत्र के न्यूनतम आवश्यक कार्यक्रम के तहत राज्य सरकारों द्वारा क्रियान्वित किया जाता है। केन्द्र द्वारा प्रायोजित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के जरिये वित्तीय तथा तकनीकी सहायता प्रदान करके केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों के प्रयासों को मजबूत करती है।

सम्पूर्ण स्वच्छता योजना के तहत 30 राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों में अब तक 507 परियोजनाएँ स्वीकृत की गई हैं जिनकी कुल लागत 5,087.33 करोड़ रुपये है। इसमें केन्द्र का हिस्सा 3,047 करोड़ रुपये, राज्यों का हिस्सा 1,33.52 करोड़ रुपये और लाभान्वित पंचायतों का हिस्सा 908.81 करोड़ रुपये है। वर्ष 2003-04 तक 80,87,130 शौचालयों का निर्माण किया गया।

(4) इन्दिरा आवास योजना

गांवों में रहने वालों की आवास सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मई, 1985 में जवाहर योजना की उप-योजना के रूप में इन्दिरा आवास शुरू की गई। 01 जनवरी, 1996 से यह स्वतंत्र योजना के रूप में लागू है। इस योजना का लक्ष्य गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अनुसूचित जातियों/जनजातियों, मुक्त बंधवा मजदूर और गैर-अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों की श्रेणियों में आने वाले ग्रामीण गरीबों को आवासीय इकाइयों के निर्माण और मौजूदा अनुपयोगी कच्चे मकानों को सुधारने में मदद करना है, जिसके लिए उन्हें सहायता अनुदान दिया जाता है। वर्ष 1995-96 में इन्दिरा आवास योजना के लाभ युद्ध में शहीद हुए सैनिकों की विधवाओं या निकटतम संबंधी को भी दिये जाने लगे हैं। योजना की 03 प्रतिशत राशि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले विकलांग व्यक्तियों के लिए आरक्षित की गई है।

इस योजना के अन्तर्गत 1985-86 से 2004-05 तक 129 लाख मकानों का निर्माण किया जा चुका है, जिस पर 23,149.06 करोड़ रुपये खर्च हो चुका है।

ग्रामीण आवास के लिए 2005-06 के दौरान 2,775 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए गए हैं। इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत वर्ष 2005-06 के लिए 14.54 लाख मकानों के निर्माण/परिष्कार हेतु 757.40 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। चालू वित्त वर्ष के दौरान 31 मई, 2005 तक इन्दिरा आवास योजना के तहत पहली किस्त के रूप में 921.08 करोड़ रुपये जारी किए गए।

(5) स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

एक समग्र स्वरोजगार योजना, स्वर्ण जयन्ती के नाम से 1 अप्रैल, 1999 को शुरू हुई। इस योजना में पूर्व से चल रहे निम्नांकित छह विषयों का विलय किया गया-समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार प्रशिक्षण, कार्यक्रम ट्राइसेम, ग्रामीण क्षेत्र में महिला एवं बाल विकास, कार्यक्रम

डवाकरा, ग्रामीण दस्तकारों को उन्नत औजार किट आपूर्ति कार्यक्रम, गंगा कल्याण योजना, दस लाख कुंआ योजना। योजना का उद्देश्य गरीबों की पारिवारिक आय को बढ़ाना तथा आधारभूत स्तर पर लोगों की स्थानीय जरूरतों व संसाधनों को सुगमता प्रदान करना है। योजना का बुनियादी मकसद गरीबी रेखा से नीचे के हर स्वरोजगारी को आय पैदा करने के लिए सहायता देना है। स्वर्ण जयन्ती स्वरोजगार योजना पंचायती राज संस्थाओं, बैंकों और स्वयंसेवी संगठनों की सक्रिय भागीदारी के साथ जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों के जरिये क्रियान्वित की जा रही है। योजना पर खर्च की जाने वाली राशि केन्द्र और राज्य सरकारों में 75:25 के अनुपात में वहन की जाती है।

इस कार्यक्रम के तहत शुरू से अब तक 19.94 लाख स्वयं सहायता समूहों का गठन किया जा चुका है, जिसमें 55.98 लाख स्वरोजगारी शामिल हैं। इन स्वरोजगारियों में 27.14 लाख स्वयं सहायता समूह के सदस्य और 28.58 लाख व्यक्तिगत स्वरोजगारी शामिल हैं। इन्हें कुल 11,790.73 करोड़ रुपये की सहायता दी गई है। इन कुल स्वरोजगारियों में 38.74 प्रतिशत अनुसूचित जाति और जनजाति से सम्बद्ध हैं और 39.94 प्रतिशत महिलाएं हैं। वर्ष 2005-06 के दौरान इस योजना के लिए 960 करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता का प्रावधान किया गया है।

(6) ग्रामीण विकास और पर्यावरण का अभिनव कार्यक्रम

किफायती, पर्यावरण-अनुकूल, वैज्ञानिक रूप से परीक्षित और प्रभावी स्वदेशी व आधुनिक डिजाइनों में प्रौद्योगिकियों और सामग्रियों के उपयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 01 अप्रैल, 1999 से ग्रामीण आवास और पर्यावरण विकास का अभिनव कार्यक्रम शुरू किया गया है। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में नवीन व प्रमाणित आवास प्रौद्योगिकियों, डिजाइनों और सामग्रियों को बढ़ावा देना/प्रचारित करना है। वर्ष 2002-03 के दौरान 10 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है, जिसमें से 0.32 करोड़ रुपये विभिन्न परियोजनाओं पर खर्च किए गए हैं।

(7) जवाहर ग्राम समृद्धि योजना

यह योजना 01 अप्रैल, 1999 से लागू हुई, ताकि पूर्व में चल रही जवाहर रोजगार योजना, 1986 को पुनःगठित, सुव्यवस्थित और व्यापक स्वरूप प्रदान किया जा सके। इस योजना को सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में मिला दिया गया है। इस योजना का मौलिक उद्देश्य गांवों में मांग पर आधारित सामुदायिक अवसंरचना का सृजन करना है। इसका प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार एवं अल्प बेरोजगार व्यक्तियों के लिए लाभकारी रोजगार अवसरों का सृजन करना है। इस योजना को दिल्ली और चण्डीगढ़ को छोड़ समग्र देश में सभी ग्राम पंचायतों में लागू किया गया है।

(8) जिला ग्रामीण विकास एजेंसी प्रशासन

01 अप्रैल, 1999 से केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना जिला ग्रामीण विकास एजेंसी प्रशासन शुरू की गई। योजना का उद्देश्य जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को सशक्त बनाना तथा इन्हें इनके क्रियान्वयन के लिए अधिक व्यावसायिक बनाना है। जिला ग्रामीण विकास एजेंसी प्रशासन के लिए राशि का आवंटन केन्द्र व राज्यों के बीच 75:25 के आधार पर होता है। वर्ष 2002-03 के दौरान जिला ग्रामीण विकास एजेंसी प्रशासन के लिए 229 करोड़ रुपये का बजट प्रावधान किया गया है।

(9) राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम एवं अन्नपूर्णा

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम 15 अगस्त, 1995 को अस्तित्व में आया था। यह केन्द्र द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना और राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना से मिलकर बनाया

गया, जिसका मकसद वृद्धों को सामाजिक सुरक्षा देना और घर के मुखिया की मौत के मामले में सहायता करना था। राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना में 65 वर्षीय उपेक्षित वृद्ध को प्रति माह 75 रुपये की सहायता देने का प्रावधान किया गया था और राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना घर के पालनकर्ता की मौत पर घर वालों को कुल 10 हजार रुपये लाभ पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया।

(10) जन सहयोग और ग्रामीण प्रौद्योगिकी उत्कर्ष (कपार्ट)

ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक क्रियाकलापों के प्रोत्साहन, प्रवर्तन और सफलता के उद्देश्य से तथा ग्रामीण समृद्धि में वृद्धि के लिये नई प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल पर ध्यान केन्द्रित करने के लिये सरकार ने जन-सहयोग और ग्रामीण प्रौद्योगिकी उत्कर्ष परिषद (कपार्ट) की स्थापना की। यह ग्रामीण विकास विभाग के तहत एक पंजीकृत संस्था है।

कपार्ट की नौ प्रादेशिक समितियां/प्रादेशिक केन्द्र हैं, जो जयपुर, लखनऊ, अहमदाबाद, भुवनेश्वर, पटना, चण्डीगढ़, हैदराबाद, गुवाहाटी और धारवाड़ में स्थित हैं। प्रादेशिक समितियों को अपने अपने प्रदेशों में स्वयंसेवी संस्थाओं की 20 लाख रुपये तक के परिव्यय वाली परियोजनाओं को मंजूरी देने की शक्तियां प्राप्त हैं। कपार्ट अपनी स्थापना से लेकर 2003 तक 701.63 करोड़ रुपये की लागत से 21,621 परियोजनाओं को मंजूरी दे चुका है और 545.85 करोड़ रुपये जारी किए जा चुके हैं।

(11) एकीकृत बंजर-भूमि विकास कार्यक्रम

एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम वर्ष 1989-90 से चलाया जा रहा है। 01 अप्रैल, 1995 से यह कार्यक्रम चलाया जा रहा है। 01 अप्रैल, 2000 से यह पूर्णतया केन्द्र द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम है। योजना में संसाधनों का बंटवारा केन्द्र और राज्य में 92:8 के अनुपात में है। इस कार्यक्रम में बंजर भूमि विकास कार्यक्रमों में लोगों की भागीदारी बढ़ाने के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उत्पन्न करने में भी मदद मिलती है।

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्राम/सूक्ष्म जलसंभर योजनाओं पर आधारित एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम का क्रियान्वयन करना है। भूमि क्षमता, स्थल परिस्थितियों तथा स्थानीय जरूरतों को ध्यान में रख कर भागीदार इन योजनाओं को बनाते हैं।

मार्च 2002 तक 423 एकीकृत बंजर भूमि विकास परियोजनाओं को 28 राज्यों के 297 जिलों में लागू किया गया है, जिसका कुल परिव्यय 1,868,58 करोड़ रुपये 37.22 लाख हैक्टेयर के कुल परियोजना क्षेत्र में विभिन्न चरणों के लिये रखा गया।

(12) सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम

सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम 1977-78 में रेगिस्तानी व ठंडे दोनों क्षेत्रों में, गर्म रेगिस्तानी क्षेत्रों के राजस्थान, गुजरात और हरियाणा तथा ठंडे रेगिस्तानों के ग्रामीण क्षेत्र जम्मू-कश्मीर और हिमाचल प्रदेश से शुरू हुआ था। वर्ष 1995-96 से इस योजना का विस्तार आन्ध्र प्रदेश और कर्नाटक के कुछ और जिलों में हुआ।

वर्तमान में इस कार्यक्रम में सात राज्यों के 40 जिलों के 234 खंड शामिल हैं। वर्ष 1995-96 तक विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत राज्यों में 6,712 जलसंभर परियोजनाओं को स्वीकृत किया गया है। इनमें से पूरी परियोजना की कीमत 1233 परियोजनाओं के लिए जारी की गई है। शेष 5,479 परियोजनाएं क्रियान्वयन के विभिन्न चरणों में हैं। 8,712 परियोजनाओं द्वारा लगभग 33.56 लाख हैक्टेयर भूमि को सही किया गया।

19.11 बोध प्रश्न-02

1. सामुदायिक विकास योजना ग्रामीण पुनर्निर्माण में किस प्रकार सहायक है ?
2. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की अवधारणा समझाइये।
3. सामुदायिक ग्रामीण विकास के प्रमुख कार्यक्रमों का परिचय प्रस्तुत कीजिए।

19.12 सारांश (Summary)

भारतीय ग्रामीण समाज में चल रहे सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की स्थिति को संतोषजनक माना जा सकता है। इन्होंने ग्रामीण पुनर्निर्माण में योगदान दिया है, ग्रामीणों की सामाजिक, आर्थिक व व्यवसायगत स्थिति में सुधार किया है, उनके दृष्टिकोण व मान्यताओं में सकारात्मक परिवर्तन किया है और उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है। भारत का एक बड़ा वर्ग जहां इन कार्यक्रमों का प्रशंसक रहा है, वहीं कुछ लोग इन कार्यक्रमों को असफल मानते हैं और यहां तक कहते हैं कि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों ने ग्रामीण भारत में नौकरशाही के भ्रष्टाचार को प्रोत्साहित किया है। इस कार्यक्रम का निरन्तर मूल्यांकन करने हेतु केन्द्रीय योजना आयोग (वर्तमान में निति आयोग) द्वारा कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन गठित किया गया। इस संगठन ने समय समय पर अपने प्रतिवेदनों में कार्यक्रम की सफलताओं व असफलताओं को इंगित किया है। ग्रामीण समाजशास्त्रियों एस0 सी0 दुबे, बैजनाथ सिंह व महीपाल ने अपने अध्ययनों के माध्यम से ग्रामीण भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों पर प्रकाश डाला है। कुल मिलाकर ग्रामीण विकास के दृष्टिकोण से सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का प्रभाव मिला जुला रहा है।

19.13 शब्दावली (Glossary)

सामुदायिक विकास: सामुदायिक विकास एक समन्वित प्रणाली है जिसके द्वारा ग्रामीण जीवन के सर्वांगीण विकास के लिये प्रयत्न किया जाता है। इस योजना का आधार जन सहभाग तथा स्थानीय साधन हैं।
समन्वित ग्रामीण विकास: ग्रामीण क्षेत्रों में निर्दिष्ट निर्धन परिवारों की पर्याप्त सहायता करना और उनकी आय को इस सीमा तक बढ़ाना कि वे सदैव के लिये निर्धनता रेखा से ऊपर आ सकें, समन्वित ग्रामीण विकास कहलाता है।

19.14 अभ्यास प्रश्न (Practise Questions)

1. भारत में सामुदायिक विकास और विस्तार सेवा कार्यक्रम कब शुरू हुआ-
 (क) 2 अक्टूबर, 1950 में (ख) 2 अक्टूबर, 1951 में
 (ग) 2 अक्टूबर, 1952 में (घ) 2 अक्टूबर, 1953 में
2. सामुदायिक विकास कार्यक्रम की नीतियों का निर्धारण कौन करता है-
 (क) गृह मंत्रालय (ख) वित्त मंत्रालय
 (ग) सामुदायिक विकास व सहकारिता मंत्रालय (घ) इनमें से कोई नहीं
3. 'राज्य विकास समिति' का अध्यक्ष कौन होता है-
 (क) राज्यपाल (ख) मुख्यमंत्री
 (ग) राज्य विकास आयुक्त (घ) राज्य कृषि मंत्री
4. 10वीं पंचवर्षीय योजना की कार्य अवधि क्या है-
 (क) 1999-2004 (ख) 2000-2005
 (ग) 2001-2006 (घ) 2002-2007

5. भारत में 'स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना' कब प्रारम्भ की गई थी-
 (क) 1998 में (ख) 1999 में
 (ग) 2000 में (घ) 2001 में
6. भारत में 'ग्रामीण विकास और पर्यावरण का अभिनव कार्यक्रम' कब प्रारम्भ किया गया था-
 (क) 1998 में (ख) 1999 में
 (ग) 2000 में (घ) 2001 में
7. 'इन्दिरा आवास योजना' कब प्रारम्भ की गई थी-
 (क) 1985 में (ख) 1986 में
 (ग) 1987 में (घ) 1988 में
8. 'एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम' कब प्रारम्भ किया गया था-
 (क) 1986-87 से (ख) 1987-88 से
 (ग) 1988-89 से (घ) 1989-90 से
9. 'कपार्ट' की इस समय कितनी प्रादेशिक समितियां कार्य कर रही हैं-
 (क) 8 (ख) 9
 (ग) 10 (घ) 11

19.15 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practise Questions)

1. (ग) 02 अक्टूबर, 1952 में 2. (ग) सामुदायिक विकास व सहकारिता मंत्रालय
3. (ख) मुख्यमंत्री 4. (घ) 2002-2007 5. (ख) 1999 में 6. (ख) 1999 में 7. (क) 1985 में
8. (घ) 1989-90 से 9. (ख) 9

19.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. सामुदायिक विकास कार्यक्रम से आप क्या समझते हैं ? ग्रामीण भारत में इस योजना के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।
2. सामुदायिक विकास कार्यक्रमों ने ग्रामीण भारतीय समाज में किन परिवर्तनों को उत्पन्न किया है ? बताइये।
3. भारत वर्ष में चल रहे प्रमुख सामुदायिक विकास कार्यक्रमों पर प्रकाश डालिये।

19.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- चौहान, बी० आर०, 'भारत में ग्रामीण समाज' (1988), ए० सी० ब्रदर्स, उदयपुर।
 -दोषी, एस० एल० एण्ड पी० सी० जैन, 'रूरल सोशियोलॉजी' (1999), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
 -दुबे, एस० सी०, 'भारतीय ग्राम (अनु०: योगेश अटल, 1996), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
 -दुबे, एस० सी०, 'इण्डियाज चेंजिंग विलेजेज' (1958), लंदन, रूट्स एण्ड कीगल पाल।
 -महीपाल, 'ग्राम नियोजन' (2016), राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।
 -सिंह, बैजनाथ, 'सामुदायिक ग्रामीण विकास' (2016), राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।

19.18 सहायक/उपयोगी ग्रन्थ (Helpful/Useful Text)

आहूजा, राम, 'भारतीय समाज' (2004), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

-देसाई, ए० आर०, 'भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र' (1997), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

-मुकर्जी, आर० एन० एवं जी० सी० कुलश्रेष्ठ, 'भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र' (2003), प्रकाश बुक डिपो, बरेली

इकाई-20 पंचायती राज और लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण (Panchayati Raj and Democratic Decentralisation)

- 20.1 प्रस्तावना (Introduction)
- 20.2 उद्देश्य (Objectives)
- 20.3 पंचायती राज (Panchayati Raj)
- 20.4 स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के रूप में पंचायती राज (Panchayati Raj as Institutions of Local Self-Government)
- 20.5 स्वतंत्रता पूर्व भारत में पंचायती राज (Panchayati Raj in Pre-Occupational India)
- 20.6 स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत में पंचायती राज (Panchayati Raj in India after Independence)
- 20.7 पंचायतों के विकास के लिए गठित समितियाँ (Committees formed for the Development of Panchayats)
 - 20.7.1 बलवंत राय मेहता समिति (Balwant Rai Mehta Committee)
 - 20.7.2 अशोक मेहता समिति (Ashok Mehta Committee)
 - 20.7.3 जी.वी.के. समिति (G.V.K. Committee)
 - 20.7.4 डॉ.एल.एम. सिंघवी समिति (Dr. L.M. Singhvi Committee)
 - 20.7.5 सरकारिया आयोग और पी.के. थुंगर समिति (Sarkaria Commission and P.K. Thungar committee)
- 20.8 तिहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम (Seventy-third Constitutional Amendment Act)
 - 20.8.1 तिहत्तरवें संविधान संशोधन की मुख्य बातें (Main Points of Seventy-Third Constitutional Amendment)
 - 20.8.2 तिहत्तरवें संविधान संशोधन की मुख्य विशेषताएँ (Features of Seventy-Third Constitutional Amendment)
- 20.9 लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण (Democratic Decentralisation)
- 20.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
- 20.11 सारांश (Summary)
- 20.12 शब्दावली (Glossary)
- 20.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)
- 20.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
- 20.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful/Useful Text)
- 20.16 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

20.1 प्रस्तावना (Introduction)

शासन प्रणालियों के विकास क्रम में मनुष्य ने अनेक प्रकार की शासन प्रणालियों को अपनाया। शासन प्रणालियों का कोई भी स्वरूप. चाहे वह तानाशाही शासन हो, राजशाही शासन, सैनिक शासन, साम्यवादी शासन या लोकतांत्रिक शासन प्रणाली, ये सभी शासन प्रणालियाँ भौगोलिक परिस्थितियों के परिणाम ना होकर व्यक्ति के विचारों और सिद्धान्तों का परिणाम हैं। शासन प्रणालियों के विकास क्रम में ज्यादातर समय राजशाही व तानाशाही शासन प्रणाली का रहा, किन्तु एक बेहतर जीवन की खोज में व्यक्ति का संघर्ष लगातार जारी रहा। जिसका परिणाम यह हुआ कि व्यक्ति ने अपने ऊपर शासन के लिए स्वयं को शासक बनाने का निश्चय किया और लोकतंत्र या प्रजातंत्र शासन प्रणाली का स्वरूप सामने आया। लोकतंत्र में भी सबसे निचले स्तर तक के व्यक्ति के हाथों में सत्ता की पहुँच हो और वो शासन के कार्यों में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सके इसके लिए शासन.सत्ता का एक जगह केन्द्रीकरण ना करके इसके विकेन्द्रीकरण को अपनाया गया। सत्ता विकेन्द्रीकरण की सोच ने स्थानीय स्वशासन को जन्म दिया और सबसे निचले स्तर पर पंचायती और नगरीय शासन का स्वरूप सामने आया। लोकतंत्रीय शासन प्रणाली में ही सत्ता का विकेन्द्रीकरण संभव है। आज हम सभी भारत में पंचायती राज और नगरीय शासन से अच्छी तरह परिचित हैं।

20.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप.

- ✓ स्वातंत्रता से पहले और स्वसतंत्रता के बाद भारत में पंचायतों की स्थिति के संबंध में जान पायेंगे।
- ✓ स्थानीय स्वशासन के बारे में जान पायेंगे।
- ✓ स्थानीय स्वशासन को वैधानिक रूप देने के लिए संविधान में 73वें संविधान संशोधन के विषय में जान पायेंगे।
- ✓ 73वें संविधान संशोधन के पिछे सोच के कारणों का ज्ञान होगा।
- ✓ 73वें संविधान संशोधन के द्वारा संविधान में मौजूद मुख्य बिन्दुओं की जानकारी मिलेगी।

20.3 पंचायती राज (Panchayati Raj)

पंचायती राज का इतिहास कोई नया नहीं अपितु यह आदिकाल से हमारी पुरातन धरोहर है। भारतीय ग्रामीण व्यवस्था में सामुदायिकता की भावना प्राचीन काल से विद्यमान रही है। इसी सामुदायिकता व परम्परागत संगठन के आधार पर पंचायत व्यवस्था का जन्म हुआ। इसीलिए हमारे देश में पंचायतों की व्यवस्था भी सदियों से चली आ रही है। भारतीय संस्कृति के विकास के साथ-साथ पंचायती व्यवस्था का जन्म और विकास हुआ। पंचायत शब्द पञ्चायत से बना है। पञ्च का अर्थ है, समुदाय या संस्था तथा आयत का अर्थ है विकास या विस्तार। अतः सामूहिक रूप से गाँव का विकास ही पंचायत का वास्तविक अर्थ है। ये संस्थाएँ हमारे समाज की बुनियादी संस्थाएँ हैं और किसी न किसी रूप में ये संस्थाएँ हमारी संस्कृति व शासन.प्रणाली का अभिन्न हिस्सा रही हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास, प्रशासन व न्याय की जिम्मेदारी इन्हीं संस्थाओं की थी। राजा, महाराजा भी स्थानीय स्तर पर काम.काज के संचालन हेतु इन्हीं संस्थाओं पर निर्भर रहते थे। स्थानीय स्तर पर सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में न रह कर सामूहिक रहती थी। इसीलिए इन्हें गणतन्त्र की स्थानीय इकाईयों के रूप में मान.सम्मान दिया जाता था। ग्राम पंचायत ग्रामीण क्षेत्रों में शासन प्रबन्ध, शान्ति और सुरक्षा की एकमात्र संस्थाएँ रही हैं। डाक्टर राधाकुमुद मुखर्जी ने लिखा है कि ये समस्त जनता की सामान्य सभा के रूप में अपने सदस्यों के समान अधिकारों, स्वतंत्रताओं के लिए निर्मित होती हैं, ताकि सब में समानता, स्वतंत्रता तथा बुधुत्व का विचार दृढ़ रहे। अतः यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में पंचायती राज का गौरवशाली अतीत रहा है।

प्राचीन काल में पंचायतों का स्वरूप कुछ और था। यद्यपि इन संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा नहीं प्राप्त था लेकिन गांवों से जुड़े विकास व न्याय सम्बन्धित निर्णयों के लिए ये संस्थाएँ पूर्ण रूप से जिम्मेदार थीं। प्राचीन काल में गाँवों में पंच परमेश्वर की प्रणाली मौजूद थी। गाँव में सर्वसहमति से चुने गये पाँच गणमान्य व बुद्धिमान व्यक्तियों को गाँव में न्याय व्यवस्था बनाये रखने व गाँव के विकास हेतु निर्णय लेने का अधिकार था और उन्हें तो पंच परमेश्वर तक कहा जाता था। पंच परमेश्वर द्वारा न्याय को सरल और सुलभ बनाने की प्रथा काफी मजबूत थी। उस समय ये पंच एक संस्था के रूप में कार्य करते थे। गाँव के झगड़े, गाँव की व्यवस्थायें सुधारना जैसे मुख्य कार्य पंच परमेश्वर संस्था किया करती थी। उसके कायदे.कानून लिखित नहीं होते थे फिर भी उनका प्रभाव समाज पर ज्यादा होता था। पंचों के फैसले के खिलाफ जाने की कोई सोच भी नहीं सकता था। पंचों का सम्मान बहुत था व उनके पास समाज का भरोसा और ताकत भी थी। लोग पंचों के प्रति बड़ा विश्वास रखते थे और उनका निर्णय सहज स्वीकार कर लेते थे। पंच परमेश्वर भी बिना किसी पक्षपात के निर्णय किया करती थी। मुंशी प्रेमचन्द ने अपनी कहानी पंच परमेश्वर द्वारा प्राचीन काल में स्थापित इस पंच प्रणाली को काफी सरल तरीके से समझाया है। प्राचीन काल में जातिगत व कबाइली पंचायतों का भी जिक्र भी मिलता है। इन पंचायतों के प्रमुख गाँव के विद्वान व कबीले के मुखिया हुआ करते थे। इन पंचायतों में कोई भी निर्णय लेने हेतु तब तक विचार.विमर्श किया जाता था जब तक कि सर्वसहमति से निर्णय न हो जाये।

20.4 स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के रूप में पंचायती राज (Panchayati Raj as Institutions of Local Self-Government)

राजा.महाराजा काल में स्थानीय स्वशासन को काफी महत्व दिया गया। उनके द्वारा भी जनता को सत्ता सौंपने की प्रथा को अपनाया गया। भारत जैसे विशाल देश को एक केन्द्र से शासित करना राजाओं व सम्राटों के लिए सम्भव नहीं था। अतः राज्य को सूबों, जनपदों, ग्राम समितियों अथवा ग्राम सभाओं में बाँटा गया। वेदों, बौद्ध ग्रन्थों, जातक कथाओं, उपनिषदों आदि में इस व्यवस्था के रूप में पंचायतों के आस्तित्व के पूर्ण साक्ष्य मिलते हैं। मनुस्मृति तथा महाभारत के प्शांति.पर्वष में ग्राम सभाओं का उल्लेख है। रामायण में इसका वर्णन जनपदों के नाम से आता है। महाभारत काल में भी इन संस्थानों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। वैदिक कालीन तथा उत्तर.वैदिक कालीन इतिहास के अवलोकन में यह बात स्पष्ट हो गई है कि प्राचीन भारत का प्रत्येक ग्राम एक छोटा सा स्वायत्त राज्य था। इस प्रकार के कई छोटे.छोटे गाँवों और छोटे.छोटे प्रादेशिक संघ मिलकर बड़े संघ बन जाते थे। संघ, पूर्णतः स्वावलम्बी थे तथा एक.दूसरे से बड़ी अच्छी तरह जुड़े हुए तथा सम्बन्धित थे। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी गाँवों के छोटे.छोटे गणराज्यों की बात कही गई है। सर चार्ल्स मेटकाफ ने तो पंचायतों को गाँव के छोटे.छोटे गणतन्त्र कहा था जो स्वयं में आत्मनिर्भर थे। बौद्ध व मौर्य काल के समय पंचायतों के आस्तित्व की बात कही गई है। बौद्ध काल के संघों की कार्य.पद्धति ग्राम राज्य की प्रथा को दर्शाती है। बौद्ध संघों के शासन की प्रणाली वस्तुतः भारत की ग्राम पंचायतों तथा ग्राम संघों से ही ली गई थी। गुप्त काल में भी ग्राम समितियाँ, पंचायतों के रूप में कार्य करती थीं। चन्द्रगुप्त के दरबार में रहने वाले यूनानी राजदूत मैगस्थनीज के वृत्तान्त से उसके बारे में काफी सामग्री मिलती है। मैगस्थनीज के वृत्तान्त से उस समय के नगर प्रशासन तथा ग्राम प्रशासन पर खासा प्रकाश पड़ता है। नगरों का प्रशासन भी पंचायत.प्रणाली से ही होता था और पाटलिपुत्र का प्रशासन उसकी सफलता का सूचक है। मैगस्थनीज के अनुसार नगर प्रशासन भी ग्राम प्रशासन की भाँति ही होता था। नगर का शासन एक निर्वाचित संस्था के हाथ में होता था, जिसमें 30 सदस्य होते थे। सदस्य 6 समितियों में विभक्त होते थे। प्रत्येक समिति अलग.अलग विषयों का प्रबन्धन करती थी। कुछ विषय अवश्य ऐसे थे जो सीधे राजकीय नियंत्रण में होते थे।

प्राचीन काल में राजा लोग महत्वपूर्ण निर्णय लेते समय इन पंचायतों से पूर्ण विचार.विमर्श करते थे। स्थानीय स्वशासन की ये संस्थाएँ, स्थानीय स्तर पर अपना शासन खुद चलाती थीं। लोग अपने विकास के बारे में खुद सोचते थे, अपनी समस्याएँ स्वयं हल करते थे एवं अपने निर्णय स्वयं लेते थे। वास्तव में जिस

स्वशासन की बात हम आज कर रहे हैं, असली स्वशासन वही था। यह कह सकते हैं कि हमारे गाँव का काम गाँव में और गाँव का राज गाँव में था। पंचायतें हमारे गाँव समाज की ताकत थी।

ग्रामों के इस संगठनों की सफलता का रहस्य केवल यह था कि ग्रामीण अपने अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों की अधिक चिंता करते थे। इस तरह भारत के ग्रामों के संगठन की परम्परा उत्पन्न हुई, पनपी और इसमें दीर्घकाल तक की सफलता से देश के ग्रामीणों को समृद्ध, सुसम्पन्न तथा आत्मनिर्भर बनाया। पंचायतों के कारण ही काफी समय तक विदेशी अपना आर्थिक प्रभुत्व जमाने में असमर्थ रहे।

मध्य काल में पंचायतों के विकास पर खास ध्यान नहीं दिया गया। इस दौरान समय-समय पर विदेशियों के आक्रमण भारत में हुए। मुगलों के भारत में आधिपत्य के साथ ही शासन प्रणाली में नकारात्मक बदलाव आये। लोगों की अपनी बनाई हुई व्यवस्थाएँ चरमराकर धराशायी हो गई। समस्त सत्ता व शक्ति बादशाह व उसके खास कर्मचारियों के हाथों में केन्द्रित हो गयी। यद्यपि मुगल बादशाह अकबर द्वारा स्थानीय स्वशासन को महत्व दिया गया और उस समय ग्राम स्तरीय समस्त कार्य पंचायतों द्वारा ही किया जाता था। लेकिन अन्य शासकों के शासनकाल में पंचायत व्यवस्था का धीरे-धीरे विघटन का दौर शुरू हुआ जो ब्रिटिश काल के दौरान भी अंग्रेजों की केन्द्रीकरण की नीति के कारण चलता रहा। पंच.परमेश्वर प्रथा की अवहेलना से पंचायतों व स्थानीय स्वशासन को गहरा झटका लगा, जिसके परिणाम स्वरूप जो छोटे-छोटे विवाद पहले गाँव में ही सुलझ जाया करते थे, अब वह दबाये जाने लगे व सदियों से चली आ रही स्थानीय स्तर पर विवाद निपटाने की प्रथा का स्थान कोर्ट-कचहरी ने लेना शुरू किया। जिन प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा व उपयोग गाँव वाले स्वयं करते थे वे सब अंग्रेजी शासन के अन्तर्गत आ गये और उनका प्रबन्धन भी सरकार के हाथों चला गया। स्थानीय लोगों के अधिकार समाप्त हो गये।

कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि स्थानीय स्वशासन की परम्परा प्राचीन काल में काफी मजबूत थी। स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ जन-समुदाय की आवाज हुआ करती थी। वर्तमान की पंचायत व्यवस्था का मूल आधार हमारी पुरानी सामुदायिक व्यवस्था ही है। यद्यपि मध्यकाल व ब्रिटिश काल में पंचायती राज व्यवस्था लड़खड़ा गई थी, लेकिन भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात स्थानीय स्वशासन को मजबूत बनाने के लिए पुनः प्रयास शुरू हुए और पंचायती राज व्यवस्था भारत में पुनः स्थापित की गई। जिसके बारे में आप आगे विस्तार से अध्याय करेंगे।

20.5 स्वतंत्रता पूर्व भारत में पंचायती राज (Panchayati Raj in Pre-Occupational India)

स्वतन्त्रता पूर्व पंचायतों की मजबूती व सुधार हेतु विशेष प्रयास नहीं हुए जिस कारण पंचायती राज व्यवस्था लड़खड़ाती रही। मध्य काल में मुस्लिम राजाओं का शासन भारत के विभिन्न हिस्सों में फैल गया। यद्यपि स्थानीय शासन की संस्थाओं का मजबूती के लिए विशेष प्रयास नहीं किये गये, परन्तु मुस्लिम शासन ने अपने हितों में पंचायतों का काफी उपयोग किया। जिसके फलस्वरूप पंचायतों के मूल स्वरूप को धक्का लगा और वे केन्द्र के हाथों की कठपुतली बन गये। सम्राट अकबर के समय स्थानीय स्वशासन को पुनः मान्यता मिली। उस काल में स्थानीय स्वशासन की इकाइयाँ कार्यशील बनीं। स्थानीय स्तर पर शासन के सारे कार्य पंचायतें ही करती थीं और शासन उनके महत्व को पूर्णतः स्वीकार करता था। लेकिन मुस्लिम काल के इतिहास को अगर समग्र रूप में देखा जाए तो इस काल में स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को मजबूती नहीं मिल सकी। ब्रिटिश काल के दौरान भी प्राचीन पंचायत व्यवस्था लड़खड़ाती रही। अंग्रेजों शासन काल में सत्ता का केन्द्रीकरण हो गया और दिल्ली सरकार पूरे भारत पर शासन करने लगी। केन्द्रीकरण की नीति के तहत अंग्रेज तो पूरी सत्ता अपने कब्जे में करके एक-क्षत्र राज चाहते थे। भारत की विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था उन्हें अपने मनसूबों को पूरा करने में एक रुकावट लगी। इसलिये अंग्रेजों ने हमारी सदियों से चली आ रही स्थानीय स्वशासन की परम्परा व स्थानीय समुदाय की ताकत का तहस-नहस कर शासन की अपनी व्यवस्था लागू की। जिसमें छोटे-छोटे सूबे तथा स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ कमजोर बना दी गयी या पूरी तरह समाप्त कर दी

गयी। धीरे-धीरे सब कुछ अंग्रेजी सरकार के अधीन होता गया। सरकार की व्यवस्था मजबूत होती गयी और समाज कमजोर होता गया। परिणाम यह हुआ कि यहाँ प्रशासन का परम्परागत रूप करीब-करीब समाप्त प्राय हो गया और पंचायतों का महत्व काफी घट गया। अंग्रेजी राज की बढ़ती ताकत व प्रभाव से आम आदमी दबाव में था। समाज में असंतोष बढ़ने लगा जिसके कारण 1909 में ब्रिटिश सरकार द्वारा एक विकेन्द्रीकरण कमीशन की नियुक्ति की गयी। 1919 में पञ्जाब एक्ट के तहत एक अधिनियम पारित करके पंचायतों को फिर से स्थापित करने का काम प्रान्तीय शासन पर छोड़ दिया। अंग्रेजों की नियत तब उजागर हुई, जब एक तरफ पंचायतों को फिर से स्थापित करने की बात कही गई और दूसरी तरफ गाँव वालों से नमक बनाने तक का अधिकार छुड़ा लिया। इसी क्रम में 1935 में लार्ड वैलिंगटन के समय भी पंचायतों के विकास की ओर थोड़ा बहुत ध्यान दिया गया लेकिन कुल मिलाकर ब्रिटिशकाल में पंचायतों को फलने-फूलने के अवसर कम ही मिले।

हम नब्बे के दशक में भारत सरकार द्वारा पंचायतों को नया स्वरूप देने के उद्देश्य से भारतीय संविधान में किये गये 73वें संशोधन अधिनियम के बारे में पढ़ेंगे। प्राचीन समय में भी देश के गाँवों का पूरा कामकाज पंचायतों ही चलाती थीं। लोग इस संस्था को गहरी आस्था व सम्मान की दृष्टि से देखते थे, इसलिये इसका निर्णय भी सब को मान्य होता था। इसी धारणा को ध्यान में रख कर व सामान्य व्यक्ति की शासन में भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए पंचायतों को संवैधानिक स्थान देने की आवश्यकता हुई। जिसके लिए संविधान का 73वाँ संविधान संशोधन किया गया। जिसका विस्तृत अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे।

20.6 स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत में पंचायती राज (Panchayati Raj in India after Independence)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात पंचायतों के पूर्ण विकास के लिये प्रयत्न शुरू हुए। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी स्वराज और स्वावलम्बन के लिये पंचायती राज के प्रबलतम समर्थक थे। गाँधी जी ने कहा था, शसच्चा स्वराज सिर्फ चंद लोगों के हाथ में सत्ता आ जाने से नहीं बल्कि इसके लिये सभी हाथों में क्षमता आने से आयेगा। केन्द्र में बैठे बीस व्यक्ति सच्चे लोकतन्त्र को नहीं चला सकते। इसको चलाने के लिये निचले स्तर पर प्रत्येक गाँव के लोगों को शामिल करना पड़ेगा। गाँधी जी की ही पहल पर संविधान में अनुच्छेद 40 शामिल किया गया। जिसमें यह कहा गया कि राज्य ग्राम पंचायतों को सुदृढ़ करने हेतु कदम उठायेगा तथा पंचायतों को प्रशासन की इकाई के रूप में कार्य करने के लिये आवश्यक अधिकार प्रदान करेगा। यह अनुच्छेद राज्य का नीति निर्देशक सिद्धान्त बना दिया गया। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिये विभिन्न कमीशन नियुक्त किये गये, जिन्होंने पंचायती राज व्यवस्था को पुर्नजीवित करने में महत्वपूर्ण कार्य किया।

भारत में सन् 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम स्थापित किये गये। किन्तु प्रारम्भ में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को कोई महत्वपूर्ण सफलता नहीं मिल सकी, इसका मुख्य कारण जनता का इसमें कोई सहयोग व रुचि नहीं थी। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को सरकारी कामों के रूप में देख गया और गाँववासी अपने उत्थान के लिए स्वयं प्रयत्न करने के स्थान पर सरकार पर निर्भर रहने लगी। इस कार्यक्रम के सूत्रधार यह आशा करते थे कि जनता इसमें आगे आये और दूसरी ओर उनका विश्वास था कि सरकारी कार्यवाही से ही यह कार्यक्रम सफल हो सकता है। कार्यक्रम जनता ने चलाना था, लेकिन वे बनाये उपर से जाते थे। जिस कारण इन कार्यक्रमों में लोक कल्याण के कार्य तो हुए लेकिन लोगों की भागीदारी इनमें नगण्य थी। ये कार्यक्रम लोगों के कार्यक्रम होने के बजाय सरकार के कार्यक्रम बनकर रह गये। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के असफल होने के कारणों का अध्ययन करने के लिए एक कमेटी गठित की गयी, जिसका नाम बलवन्त राय मेहता समिति था।

20.7 पंचायतों के विकास के लिए गठित समितियाँ (Committees formed for the Development of Panchayats)

पंचायतों के विकास के लिए समय-समय पर अनेक समितियाँ गठित की गयी

20.7.1 बलवंत राय मेहता समिति (Balwant Rai Mehta Committee)

1957 में सरकार ने पंचायतों के विकास पर सुझाव देने के लिए श्री बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में यह सिफारिश की गयी कि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं की तुरन्त स्थापना की जानी चाहिए।

राजस्थान वह पहला राज्य है जहाँ पंचायती राज की स्थापना की गयी। 1958 में सर्वप्रथम पंडित जवाहर लाल नेहरू ने 2 अक्टूबर को राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज का दीपक प्रज्वलित किया और धीरे-धीरे गाँवों में पंचायती राज का विकास शुरू हुआ। सत्ता के विकेंद्रीकरण की दिशा में यह पहला कदम था। 1959 में आन्ध्र प्रदेश में भी पंचायती राज लागू किया गया। 1959 से 1964 तक के समय में विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं को लागू किया गया और इन संस्थाओं ने कार्य प्रारम्भ किया। लेकिन इस राज से ग्रामीण तबके के लोगों का नेतृत्व उभरने लगा जो कुछ स्वार्थी लोगों की आँखों में खटकने लगा, क्योंकि वे शक्ति व अधिकारों को अपने तक ही सीमित रखना चाहते थे। फलस्वरूप पंचायती राज को तोड़ने की कोशिशें भी शुरू हो गयीं। कई राज्यों में वर्षों तक पंचायतों में चुनाव ही नहीं कराये गये। 1969 से 1983 तक का समय पंचायती राज व्यवस्था के ह्रास का समय था। लम्बे समय तक पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव नहीं करवाये गये और ये संस्थाएँ निष्क्रिय हो गयीं।

20.7.2 अशोक मेहता समिति (Ashok Mehta Committee)

1. समिति ने दो स्तरों वाले ढाँचे, जिला परिषद को मजबूत बनाने और ग्राम पंचायत की जगह मण्डल पंचायत की सिफारिश की। अर्थात् पंचायती राज संस्थाओं के दो स्तर हों, जिला परिषद व मंडल परिषद।
2. जिले को तथा जिला परिषद को समस्त विकास कार्यों का केन्द्र बनाया जाए। जिला परिषद ही आर्थिक नियोजन करें और जिले में विकास कार्यों में सामन्जस्य स्थापित करें और मंडल पंचायतों को निर्देशन दें।
3. पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचन में जिला परिषद को मुख्य स्तर बनाने और राजनैतिक दलों की सक्रिय भागीदारी पर बल दिया।
4. पंचायतों के सदस्यों के नियमित चुनाव की सिफारिश की। राज्य सरकारों को पंचायती चुनाव स्थगित न करने व चुनावों का संचालन मुख्य चुनाव आयुक्त के द्वारा किये जाने का सुझाव दिया।
5. कमेटी ने यह सुझाव भी दिया कि पंचायती राज संस्थाओं को मजबूती प्रदान करने के लिये संवैधानिक प्रावधान बहुत ही आवश्यक हैं।
6. पंचायती राज संस्थाएँ समिति प्रणाली के आधार पर अपने कार्यों का सम्पादन करें।
7. राज्य सरकारों को पंचायती राज संस्थाओं के अधिकारों का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए।
8. देश के कई राज्यों ने इन सिफारिशों को नहीं माना, अतः तीन स्तरों वाले ढाँचे को ही लागू रखा गया। इस प्रकार अशोक मेहता समिति ने पंचायती राज व्यवस्था में सुधार लाने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण सिफारिशें की, किन्तु ग्राम पंचायतों को समाप्त करने की उनकी सिफारिश पर विवाद पैदा हो गया। ग्राम पंचायतों की समाप्ति का मतलब था, ग्राम विकास की मूल भावना को ही समाप्त कर देना। समिति के सदस्य सिद्धराज

चड्डा ने इस विषय पर लिखा कि षष्ठे जिला परिषदों और मंडल पंचायतों से कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु समिति ने ग्राम सभा की कोई चर्चा नहीं की, जबकि पंचायती राज संस्थाओं की आधारभूत इकाई तो ग्राम सभा को ही बनाया जा सकता था।

20.7.3 जी.वी.के. समिति (G.V.K. Committee)

पंचायतों के सुदृढीकरण; विकास की प्रक्रिया में सन् 1985 में जी.वी.के. राव समिति गठित की गयी। समिति ने पंचायती राज संस्थाओं को अधिक अधिकार देकर उन्हें सक्रिय बनाने पर बल दिया। साथ ही यह सुझाव भी दिया कि योजना निर्माण और उसके संचालन करने के लिये जिला मुख्य इकाई होना चाहिये। समिति ने पंचायतों के नियमित चुनाव की भी सिफारिश की।

20.7.4 डॉ. एल.एम. सिंघवी समिति (Dr. L.M. Singhvi Committee)

1986 में डॉ. एल.एम. सिंघवी समिति का गठन किया गया। सिंघवी समिति ने गाँव पंचायत; ग्राम सभा की सिफारिश करते हुए संविधान में ही नया अध्याय जोड़ने की बात कही, जिससे पंचायतों की अवहेलना ना हो सके। इन्होंने ने गाँव के समूह बना कर न्याय पंचायतों के गठन की भी सिफारिश की।

20.7.5 सरकारिया आयोग और पी.के. थुंगर समिति (Sarkaria Commission and P.K. Thungar committee)

1988 में सरकारिया आयोग बैठाया गया, जो मुख्य रूप से केन्द्र व राज्यों के संबंधों से जुड़ा था। इस आयोग ने भी नियमित चुनावों और ग्राम पंचायतों को वित्तीय व प्रशासनिक शक्तियाँ देने की सिफारिश की। 1988 के अंत में ही पी.के. थुंगर की अध्यक्षता में संसदीय परामर्श समिति की उपसमिति गठित की गयी। इस समिति ने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा देने की सिफारिश की।

भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व. राजीव गाँधी की सरकार ने गाँवों में पंचायतों के विकास की ओर अत्यधिक प्रयास करने शुरू किये। श्री राजीव गाँधी का विचार था कि जब तक गाँव के लोगों को विकास प्रक्रिया में भागीदार नहीं बनाया जाता, तब तक ग्रामीण विकास का लाभ ग्रामीण जनता को नहीं मिल सकता। पंचायती राज के द्वारा वे गाँव वालों के खासकर अनुसूचित जाति, जनजाति तथा महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में बदलाव लाना चाहते थे। उन्होंने इस दिशा में कारगर कदम उठाते हुए 64वां संविधान विधेयक संसद में प्रस्तुत किया। लोक सभा ने 10 अगस्त 1988 को इस विधेयक को अपनी मंजूरी दे दी। मगर राज्य सभा में सिर्फ पांच मतों की कमी रह जाने से यह पारित न हो सका। फिर 1991 में तत्कालीन सरकार ने 73वां संविधान संशोधन विधेयक को संसद में पेश किया। लोक सभा ने 2 दिसम्बर 1992 को इसे सर्व सम्मति से पारित कर दिया। राज्य सभा ने अगले ही दिन इसे अपनी मंजूरी दे दी। उस समय 20 राज्यों की विधान सभाएँ कार्यरत थीं। 20 राज्यों की विधान सभाओं में से 17 राज्यों की विधान सभाओं ने संविधान संशोधन विधेयक को पारित कर दिया। 20 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति ने भी इस विधेयक को मंजूरी दे दी। तत्पश्चात 73वां संविधान संशोधन अधिनियम 24 अप्रैल से लागू हो गया।

20.8 तिहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम (Seventy-third Constitutional Amendment Act)

स्वतन्त्रता पश्चात देश को सुचारू रूप से चलाने के लिये हमारे नीति निर्माताओं द्वारा भारतीय संविधान का निर्माण किया गया। इस संविधान में नियमों के अनुरूप व एक नियत प्रक्रिया के अधीन जब भी

कुछ परिवर्तन किया जाता है या उसमें कुछ नया जोड़ा जाता है अथवा हटाया जाता है तो यह संविधान संशोधन अधिनियम कहलाता है। भारत में सदियों से चली आ रही पंचायत व्यवस्था जो कई कारणों से काफी समय से मृतप्रायः हो रही थी, को पुर्नजीवित करने के लिये संविधान में संशोधन किये गये। ये संशोधन तिहत्तरवां व चौहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम कहलाये। तिहत्तरवें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की गयी। इसी प्रकार चौहत्तरवें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा भारत के नगरीय क्षेत्रों में नगरीय स्वशासन की स्थापना की गयी। इन अधिनियमों के अनुसार भारत के प्रत्येक राज्य में नयी पंचायती राज व्यवस्था को आवश्यक रूप से लागू करने के नियम बनाये गये। इस नये पंचायत राज अधिनियम से त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने व स्थानीय स्तर पर उसे मजबूत बनाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। इस अधिनियम में जहाँ स्थानीय स्वशासन को प्रमुखता दी गयी है व सक्रिय किये जाने के निर्देश हैं, वहीं दूसरी ओर सरकारों को विकेन्द्रीकरण हेतु बाध्य करने के साथ-साथ वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये वित्त आयोग का भी प्रावधान किया गया है।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम अर्थात् श्रया पंचायती राज अधिनियम प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र को जनता तक पहुँचाने का एक उपकरण है। गाँधी जी के स्वराज के स्वप्न को साकार करने की पहल है। पंचायती राज स्थानीय जनता का, जनता के लिये, जनता के द्वारा शासन है।

20.8.1 तिहत्तरवें संविधान संशोधन की मुख्य बातें (Main Points of Seventy-Third Constitutional Amendment)

लोकतंत्र को मजबूत करने के लिये नई पंचायत राज व्यवस्था एक प्रशंसनीय पहल है। महात्मा गाँधी जी का कहना था कि, षड्देश में सच्चा लोकतंत्र तभी स्थापित होगा जब भारत के लाखों गाँवों को अपनी व्यवस्था स्वयं चलाने का अधिकार प्राप्त होगा। गाँव के लिये नियोजन की प्राथमिकता का चयन लोग स्वयं करेंगे। ग्रामीण अपने गाँव विकास सम्बन्धी सभी निर्णय स्वयं लेंगे। ग्राम विकास कार्यक्रम पूर्णतया लोगों के होंगे और सरकार उनमें अपनी भागीदारी देगी। षष्ठ गाँधी जी के इस कथन को महत्व देते हुये तथा उनके ग्राम-स्वराज के स्वप्न को साकार करने के लिये भारतीय सरकार ने पंचायतों को बहुत से अधिकार दिये हैं। तिहत्तरवें संविधान अधिनियम में निम्न बातों को शामिल किया गया है।

1. 73वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत पंचायतों को पहली बार संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। अर्थात् पंचायती राज संस्थाएँ अब संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थाएँ हैं।
2. नये पंचायती राज अधिनियम के अनुसार ग्राम सभा को संवैधानिक स्तर पर मान्यता मिली है। साथ ही इसे पंचायत व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बना दिया गया है।
3. यह तीन स्तरों, ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत पर चलने वाली व्यवस्था है।
4. एक से ज्यादा गाँवों के समूहों से बनी ग्राम पंचायत का नाम सबसे अधिक आबादी वाले गाँव के नाम पर होगा।
5. इस अधिनियम के अनुसार महिलाओं के लिये त्रिस्तरीय पंचायतों में एक तिहाई सीटों पर आरक्षण दिया गया है।
6. अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों के लिये भी जनसंख्या के आधार पर आरक्षण दिया गया है। आरक्षित वर्ग के अलावा सामान्य सीट से भी ये लोग चुनाव लड़ सकते हैं।
7. पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष तय किया गया है तथा कार्यकाल पूरा होने से पहले चुनाव कराया जाना अनिवार्य किया गया है।

8. पंचायत 6 माह से अधिक समय के लिये भंग नहीं रहेगी तथा कोई भी पद 6 माह से अधिक खाली नहीं रहेगा।
9. इस संशोधन के अन्तर्गत पंचायतें अपने क्षेत्र के आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण की योजनायें स्वयं बनायेंगी और उन्हें लागू करेंगी। सरकारी कार्यों की निगरानी अथवा सत्यापन करने का भी अधिकार उन्हें दिया गया है।
10. 73वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत पंचायतों को ग्राम सभा के सहयोग से विभिन्न जनकल्याणकारी योजनाओं के अन्तर्गत लाभार्थी के चयन का भी अधिकार दिया गया है।
11. हर राज्य में वित्त आयोग का गठन होता है। यह आयोग हर पांच साल बाद पंचायतों के लिये सुनिश्चित आर्थिक सिद्धान्तों के आधार पर वित्त का निर्धारण करेगा।
12. उक्त संशोधन के अन्तर्गत ग्राम प्रधानों का चयन प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा तथा क्षेत्र पंचायत प्रमुख व जिला पंचायत अध्यक्षों का चयन निर्वाचित सदस्यों द्वारा चुना जाना तय है।
13. पंचायत में जबाबदेही सुनिश्चित करने के लिये छः समितियों ;नियोजन एवं विकास समिति, शिक्षा समिति तथा निर्माण कार्य समिति, स्वास्थ्य एवं कल्याण समिति, प्रशासनिक समिति, जल प्रबन्धन समिति की स्थापना की गयी है। इन्हीं समितियों के माध्यम से कार्यक्रम नियोजन एवं क्रियान्वयन किया जायेगा।
14. हर राज्य में एक स्वतंत्र निर्वाचन आयोग की स्थापना की गयी है। यह आयोग निर्वाचन प्रक्रिया, निर्वाचन कार्य, उसका निरीक्षण तथा उस पर नियन्त्रण भी रखेगा।

अतः संविधान के 73वें संशोधन ने नयी पंचायत व्यवस्था के अन्तर्गत न केवल पंचायतों को केन्द्र एवं राज्य सरकार के समान एक संवैधानिक दर्जा दिया है अपितु समाज के कमजोर व शोषित वर्ग को विकास की मुख्य धारा से जुड़ने का भी अवसर दिया है।

20.8.2 तिहत्तरवें संविधान संशोधन की मुख्य विशेषताएँ (Features of Seventy-Third Constitutional Amendment)

73वां संविधान संशोधन अधिनियम पंचायती राज से संबंधित है, जिसमें पंचायतों से संबंधित व्यवस्था का पूर्ण विधान किया गया है। इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ हैं।

1. संविधान में पञ्चग्राम सभाओं को पंचायती राज की आधारभूत इकाई के रूप में स्थान मिला है।
2. पंचायतों की त्रिस्तरीय व्यवस्था की गयी है। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, क्षेत्र स्तर पर ;ब्लाक स्तर पर क्षेत्र पंचायत व जिला स्तर पर जिला पंचायत की व्यवस्था की गयी है।
3. प्रत्येक स्तर पर पंचायत के सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष मतदान के द्वारा की जाने की व्यवस्था है। लेकिन क्षेत्र व जिला स्तर पर अध्यक्षों के चुनाव चुने हुए सदस्यों में से, सदस्यों द्वारा किये जाने की व्यवस्था है।
4. 73वें संविधान संशोधन में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के लिए उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या में उसके प्रतिशत के अनुपात से सीटों के आरक्षण की व्यवस्था है। महिलाओं के लिए कुल सीटों का एक तिहाई भाग प्रत्येक स्तर पर आरक्षित किया गया है। अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में ही आरक्षण की व्यवस्था है। प्रत्येक स्तर पर अध्यक्षों के कुल पदों का एक तिहाई भाग महिलाओं के लिए आरक्षित किया गया है।
5. अधिनियम में पंचायतों का कार्यकाल;पाँच वर्षों निश्चित किया गया है। यदि कार्यकाल से पहले ही पंचायत भंग हो जाय तो 6 माह के भीतर चुनाव कराने की व्यवस्था है।

6. अधिनियम के द्वारा पंचायतों से संबंधित सभी चुनावों के संचालन के लिए राज्य चुनाव आयोग को उत्तरदायी बनाया गया है।
7. अधिनियम के द्वारा प्रत्येक राज्य में राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया है, ताकि पंचायतों के पास पर्याप्त साधन उपलब्ध हो। जिससे विभिन्न विकास कार्य किये जा सकें।

20.9 लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण (Democratic Decentralisation)

उपरोक्त किये गये अध्ययन में जब हम पंचायत और तिहत्तरवें संविधान संशोधन के संबंध में बता रहे हैं, तो हम लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की ही बात कर रहे हैं, कैसे? इसे समझने से पहले हम लोकतंत्र और विकेन्द्रीकरण को समझते हैं। लोकतंत्र अर्थात् जनतंत्र, अर्थात् प्रजातंत्र, इसे कई नामों से पुकारा जाता है। लोकतंत्र अर्थात् लोगों का तंत्र या शासन। विकेन्द्रीकरण का अर्थ है कि किसी भी चीज के एक जगह केन्द्रीत ना करते हुए उसे अलग-अलग जगह पर स्थापित करना ताकि वह लोगों की पहुँच में हो। हम बता चुके हैं कि पंचायतें हमारे देश में प्राचीन काल से ही विद्यमान हैं। किन्तु पंचायतों का स्वरूप और उनकी कार्यप्रणाली कैसी रहे, इसका निर्धारण शासन व्यवस्था के स्वरूप पर निर्भर करता है। भारत सहित विश्व के तमाम देशों में समय और आवश्यकता के अनुरूप शासन व्यवस्थाओं का स्वरूप भी बदला है। आज विश्व के अधिकतम देशों में लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था है और इस शासन व्यवस्था को कई आन्दोलनों और संघर्षों के उपरान्त प्राप्त किया गया। लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था किसी भी देश के लोगों की अपनी शासन व्यवस्था है, जिसके माध्यम से वे शासन-सत्ता में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करते हैं। लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में विकेन्द्रीकरण शासन संचालन का एक माध्यम है। विकेन्द्रीकरण के द्वारा हम अंतिम व्यक्ति तक शासन को पहुँचा सकते हैं और अंतिम व्यक्ति शासन में अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी भागीदारी कर सकता है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण भी शासन की एक व्यवस्था है, जिसमें शासन को एक जगह केन्द्रीत ना करके उसे राज्य, जिले, क्षेत्र और गांवों तक बांटा जा सकता है। आजादी के बाद भारत ने लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था को अपनाया और लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को साकार रूप देने के लिए संविधान में 73वां और 74वां संविधान संशोधन कर पंचायतों और नगर निकायों के माध्यम से सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया। यह सत्ता का विकेन्द्रीकरण लोकतांत्रिक आधार पर है, जिसे हम लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण कहते हैं। आज भारत में संविधान के माध्यम से पंचायतों को कानूनी स्वरूप मिल गया है। जिले, ब्लाक और गांवों में सीधे चुनावों के द्वारा लोगों को अपना प्रतिनिधि चुनने के अधिकार हैं और शासन में भागीदारी का अधिकार है। ग्राम स्तर के लोग अपनी आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं के आधार पर कोई भी योजना बना सकते हैं और उसकी निगरानी कर सकते हैं।

20.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

1. 1919 के किस सुधार के तहत एक अधिनियम पारित करके पंचायतों को फिर से स्थापित करने का काम प्रान्तीय शासन पर छोड़ दिया
2. पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने के लिए संविधान में संशोधन किया गया।
3. भारत में किस सन् में सामुदायिक विकास कार्यक्रम स्थापित किये गये
4. बलवंत राय समिति का गठन कब किया गया
5. पंचायतों के विकास के लिए गठित किस समिति ने त्रि-स्तरीय पंचायती राज की बात कही
6. राजस्थान वह पहला राज्य है, जहाँ पंचायती राज की स्थापना की गयी। सत्यध्वसत्य
7. राजस्थान के किस जिले में 2 अक्टूबर 1958 को पंचायती राज की शुरुआत की गयी

8. किस समिति ने पंचायतों की दो स्तरीय व्यवस्था की सिफारिश की थी?
9. के0जी0वी0 राव समिति कब गठित की गयी?
10. किस समिति ने गाँव के समूह बना कर न्याय पंचायतों के गठन की सिफारिश की थी?

20.11 सारांश (Summary)

वैदिक काल से चली आ रही पंचायत व्यवस्था देश में लगभग मृतप्राय हो चुकी थी, जिसे गाँधी जी, बलवन्त राय मेहता समिति, अशोक मेहता समिति, जी0के0वी0 राव समिति, एल0एम0 सिंघवी रिपोर्ट के प्रयासों ने नवजीवन दिया। जिसके फलस्वरूप 73वां संविधान संशोधन विधेयक संयुक्त संसदीय समिति की जाँच के बाद पारित हुआ। 73वें संविधान संशोधन से गाँधी जी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को एक नई दिशा मिली है। गाँधी जी हमेशा से गाँव की आत्मनिर्भरता पर जोर देते रहे। गाँव के लोग अपने संसाधनों पर निर्भर रह कर स्वयं अपना विकास करें, यही ग्राम स्वराज की सोच थी। 73वें संविधान संशोधन के पीछे मूलधारणा भी यही थी कि स्थानीय स्तर पर विकास की प्रक्रिया में जनसमुदाय की निर्णय स्तर पर भागीदारी हो। 73वां संविधान संशोधन अधिनियम वास्तव में एक मील का पत्थर है जिसके द्वारा आम जन को सुशासन में भागीदारी करने का सुनहरा मौका प्राप्त हुआ है। पंचायतों के माध्यम से हम विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया को साकार रूप दे सकते हैं।

20.12 शब्दावली (Glossary)

- सुदृढीकरण. सुधार और मजबूत करने की प्रक्रिया।
- प्रबलतम. मजबूत।
- स्वावलम्बन. आत्मनिर्भरता।
- नगण्य. नहीं के बराबर ;अनुपस्थित।
- हस्तांतरण. एक स्थान से दुसरे स्थान पर।
- त्रिस्तरीय . तीन स्तर पर ;ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत व जिला पंचायत।

20.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

1. मांटेस्क्यू चेम्सफोर्स सुधार, 2. 73वां संविधान संशोधन, 3. 1952, 4. 1960, 5. बलवंत राय मेहता समिति, 6. सत्य, 7. पंडित जवाहर लाल नेहरू, नागौर जिला, 8. अशोक मेहता समिति, 9. 1985, 10. सिंघवी समिति

20.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- 73वां संविधान संशोधन अधिनियम।
- पंचायत सन्दर्भ सामाग्री, हिमालयन एक्शन रिसर्च सेन्टर।

20.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful/Useful Text)

- भारत में पंचायती राज- के0के0 शर्मा।
- रोल ऑफ पंचायत इन वेलफेयर स्टेट- अब्राहम मैथ्यू।
- भारत में स्थानीय शासन- एस0 आर0 माहेश्वरी।
- भारतीय प्रशासन- अवस्थी एवं अवस्थी।

20.16 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. पंचायती राज से आप क्या समझते हैं? इसके इतिहास और संवैधानिक पहलुओं की व्याख्या करें।
2. 73वें संविधान संशोधन अधिनियम की उपयोगिता पर विस्तार से चर्चा कीजिए।